वैदिक वर्ण व्यवस्था



एक स्वर्णिम युग

भूमिका

आज हमारा समाज बहुत कमजोर होता जा रहा है जिसका कारण जातिवाद है ।यह हमारे सनातनीयों की एकता को दीमक की तरह खोखला करता जा रहा है। अगर इसे ना रोका गया तो आने वाले समय में अत्यधिक धर्मांतरण होगा जिससे हमारा धर्म संकट के मोड़ पर आ जाएगा । इसीलिए अब समय आ गया है कि हम जागे और इस जातिवाद को जड़ से उखाड़ फेंके।

मुझे समाज की दुर्दशा देखकर अत्यधिक निराशा हुई इसीलिए मैंने सभी धर्म ग्रंथों को पढ़कर उनका सारांश निकाला और जो भी अब तक की पुस्तकें वर्ण व्यवस्था पर लिखे गए थे उनको भी पढ़ा और उनका भी सारांश निकाला जिसके उपरांत मैंने यह पुस्तक लिखने के बारे में विचार किया । मैंने इस पुस्तक में विभिन्न विभिन्न शास्त्रों से प्रमाण दिए हैं , जिससे वैदिक वर्ण व्यवस्था कैसी थी यह पता चल सके तथा जो रूढ़ीवादी जन्म आधारित कमियां या मिथ्या प्रचार जो हुआ है उनका भी खंडन किया गया है।

मैंने महाभारत के प्रमाण अलग-अलग संस्करण से लिए हैं । उनके नाम है - गीता प्रेस , भंडारकर ओरिएंटल रिसर्च इंस्टीट्यूट (Bori) , विशुद्ध महाभारत और Kumbhaghonam Edition ।

मैंने इस किताब का संकलन संप्रदाय निर्पेक्ष रहकर किया है तथा सभी संप्रदायों के सिद्धांतों को सम्मान पूर्वक प्रस्तुत किया है। पाठकगण को पुस्तक पढ़ने और समझने में आसानी हो इसके लिए मैंने square dot और dividing lines का उपयोग भी किया है ।

- *ये है मेरे दोनों ब्लॉग की लिंक - एक धार्मिक मुद्दों पर - https://mauryavaad.blogspot.com/*
- *और दूसरा वैदिक विज्ञानं पर - https://ancientvigyan.blogspot.com/*

लेखक - हरी मौर्य

विषय सूचि

वैदिक वर्णव्यवस्था का स्वरूप

【 जन्म से सभी शूद्र तथा द्विज बनना 】

◙ स्मृति के अनुसार-

मातुरग्रेऽधिजननं द्वितीय मौञ्जिबन्धने।

(मनुस्मृति 2 :169)

अर्थात् -'प्रथम जन्म माता से, दूसरा यज्ञोपवीत के समय होता है।

शूद्रेण हि समस्तावद् यावत् वेदे न जायते।

(मनुस्मृति 2:172)

अर्थात् -'जब तक कोई वेदाध्ययन नहीं करता तब तक वह शूद्र के समान है, चाहे किसी भी कुल में उत्पन्न हुआ हो।'

एक अन्य स्मृति में भी मनुस्मृति की बात को दोहराया है-

ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यस्त्रयो वर्णा द्विजातयः

तेषां जन्म द्वितीयस्तु विज्ञेयं मौञ्जिबन्धनम् ।६

प्राचार्यस्तु पिता प्रोक्तः सावित्री जननी तथा

ब्रह्मक्षत्रविशाञ्चैव मौञ्जिबन्धनजन्मनि ।७

वृत्या शूद्रसमास्तावद्विज्ञेयास्ते विचक्षणै:

यावद्वेदेन जायन्ते द्विजा ज्ञेयास्ततः परम् ।८

(शंख स्मृति 1:6-8)

अर्थात्- ब्राम्हण,क्षत्रिय और वैश्य द्विज कहे गये हैं |उपनयन के बाद दूसरा जन्म बताया गया है| उपनयन से होने वाले जन्म में आचार्य पिता तथा सावित्री) गायत्री (माता कही गयी है | बुद्धिमानों

के द्वारा सभी जन्म से शूद्र के समान ही समझे जाते हैं ,परन्तु जब वेदाध्ययन से उनका दूसरा जन्म हो जाता है ,तो उन्हे द्विज जानना चाहिए |

◙ धर्मसूत्रों के अनुसार-

चत्वारो वर्णा ब्राह्मणक्षत्रियवैश्यशूद्राः ।१

त्रयो वर्णा द्विजातयो ब्राह्मणक्त्रत्रियवैश्या :।२

तेषाम् मातुरग्रे विजनन द्वितीयं मौञ्जिलबन्धने

अत्रास्य माता सावित्री पिता त्वाचार्य उच्यते ।३

वेदप्रदानात्पितेत्याचार्यमाचत्त्रते ।४

(वशिष्ठ धर्मसूत्र 2 : 1-4)

अर्थात् -'चार वर्ण , ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र हैं। तीन वर्ण ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य को द्विज कहा जाता है। उनका पहला जन्म उनकी मां से होता है ; गुरु से यगोपवीत धारण करके उनका दूसरा जन्म होता है इस ब्रह्मजनम) दूसरा जन्म (में सावित्री उनकी माता तथा गुरु पिता कहा गया है। शिक्षक को पिता कहते हैं, क्योंकि वे वेद की शिक्षा देते हैं।

न ह्यस्मिन्विद्यते कर्म किंचिदा मौञ्जिबन्धनात्

वृत्त्या शूद्रसमो ह्येष यावद्वेदे न जायत इति ।६

(वशिष्ठ धर्मसूत्र 2 : 6)

अर्थात्-'' सभी वेदाध्यन से नए जन्म) ब्रह्मजन्म (से पहले एक शूद्र के स्तर पर है। जब तक कोई संतान गुरु से यगोपवीत धारण न कर ले वह वैदिक अनुष्ठान करने योग्य नहीं होता क्यूंकि वेदाध्ययन से पूर्व सभी जन्मतः शूद्र होते है.

इसके अतिरिक्त बौधायन धर्मसूत्र में भी इसी बात को दोहराया गया है-

नास्य कर्म नयच्छिन्त किंचिदा मौज्ञिबन्धनात्

वृत्त्या शूद्रसमो ह्येष यावद्वेदे न जायत इति ।

(बोधायन धर्मसूत्र 1:3: 6)

*दूसरा जन्म ''ब्रह्मजन्म' ' = 'विद्याध्ययन जन्म' कहाता है। पहला जन्म उनका माता-पिता से हुआ, दूसरा विद्याध्ययन से, अतः वे 'द्विज' और 'द्विजाति' कहे गये।

◙ महाभारत के अनुसार-

तावच्छूद्रसमो ह्येष यावद् वेदे न जायते।

तस्मिन्नेवं मतिद्वैधे मनु :स्वायम्भुवोब्रवीत्॥

(महाभारत वनपर्व 180 : 35)

अर्थात् - जब तक बच्चे का संस्कार करके उसे वेद का स्वाध्याय न कराया जाय, तब तक वह शूद्र होता है। यह नियम स्वयंभू मनु द्वारा ही बनाया गया है।

सत्यम दमस्तपो दानमहिंसा धर्मनित्यता।

साधकानि सदा पुंसा जातिर्न कुलं नृप॥

(महाभारत वनपर्व 181 : 43)

अर्थात्" - हे राजा !सत्य, आत्म-संयम, अनुशासन, दान, अहिंसा और धार्मिकता - ये ऐसी चीजें हैं जो मनुष्य को समाज में उच्च सम्मान दिलाती हैं, न कि जाति या कुल।"

जब भी किसी का जन्म होता है तो वो गुणहीन और अशिक्षित होता है इसलिए हर एक मनुष्य जन्म से शूद्र ही होता है ।

◙ शुक्राचार्य वर्णव्यवस्था के कर्माधारित व्यवस्था का समर्थन करते हुवे कहते है-

न जात्या ब्राह्मणश्चात्र क्षत्रियो वैश्य एव न ।
न शुद्रो न च वै म्लेच्छो भेदिता गुणकर्मभि :॥ ३८ ॥
(शुक्रनीति- 1:38)

अर्थात् - इस संसार में जाति विशेष के कारण कोई भी ब्राह्मण , क्षत्रिय , वैश्य , शूद्र और म्लेच्छ नहीं होता बल्कि गुण और कर्म के भेद से होते है।

ब्रह्मणस्तु समुत्पना :सर्वे ते किं नु ब्राह्मणा ।
न वर्णतो न जनकाद् ब्राह्मतेज :प्रपध्यते ॥ ३९ ॥
(शुक्रनीति- 1:39)

अर्थात् - संपूर्ण जीव ब्रह्मा से उत्पन्न होने के कारण अब ब्राह्मण होते है क्या ? नहीं क्युकी ब्राह्मण पिता से ब्रह्मतेज की प्राप्ति नहीं हो सकती अर्थात् ब्राह्मण के घर जन्म लेने से कोई ब्राह्मण नहीं हो सकता ।

कर्मशीलगुणाः पूज्यास्तथा जातिकुले न हि ।
न जात्या न कुलेनैव श्रेष्ठत्वं प्रतिपद्यते ।

(शुक्रनीति- 2:55)

अर्थात्- मनुष्य कर्मशीलता और गुणो से सम्मानीय और पूज्यनीया होता है किसी विशेष जाति और कुल में जन्म लेने से नहीं । किसी भी जाति कुल में पैदा होने से कोई श्रेष्ट नहीं होता है।

इसीलिए संहिताओं में कहा है-

किमप्यत्राभिजायन्ते योगिनः . सर्वयोनिषु ।
प्रत्यक्षितात्मनाथानां नैषां चिन्त्यं कुलादिकम् ॥४४॥
(भारद्वाज संहिता 1: 44)

अर्थात् - इस संसार में योगीजन अनेक निष्कृष्ट तथा उत्तम योनि तथा जातियों में जन्म ले लेते हैं अतः जिसने अपनी साधनाओं के कारण ब्रह्म-तत्त्व का साक्षात्कार प्राप्त कर लिया हो ऐसे योगीजन के लिये कुलादि का विचार नहीं माना जाता है। अतः ऐसे किसी भी योगी से मन्त्रदीक्षा लेना निषिद्ध नहीं है।

सर्वे समानास : चतवारो गोत्रप्रवरवर्जिता : ।
उत्कर्षो न-अपाकर्ष :च जातितस तेषु सम्मत:॥
(ईश्वर संहिता 21:40)

अर्थात् - गोत्र , वंश, या नस्ल ऐसे कोई भेद नहीं होता है ; चारों वर्ण) ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र (चारों समान हैं। जाति का कोई उच्च और निम्न नहीं है।

◙ पुराण भी यही वचन कहते है-

जन्मना जायते शूद्रः संस्काराद्द्विज उच्यते ।
(स्कन्दपुराण -नागरखण्ड 239:31)

अर्थात्-प्रत्येक बालक, चाहे किसी भी कुल में उत्पन्न हुआ हो, जन्म से शूद्र ही होता है। उपनयन संस्कार में दीक्षित होकर विद्याध्ययन करने के बाद ही द्विज बनता है।

【 वेदाध्यन के बाद वर्ण धारण की क्रिया 】

◙ वेदों के अनुसार-

त्वं ह्या३ङ्ग दैव्य पवमान जनिमानि द्युमत्तमः ।
अमृतत्वाय घोषयन् ॥९३८॥
(सामवेद » - उत्तरार्चिकः » मन्त्र संख्या - 938)

पदार्थान्वयभाषाः-

हे) अङ्ग (भद्र, (दैव्य (विद्वान् गुरु के शिष्य, (पवमान (चित्तशुद्धिप्रदाता आचार्य) ! द्युमत्तमः (अतिशय ज्ञानप्रकाश से युक्त) त्वं हि (आप) अमृतत्वाय (सुख के प्रदानार्थ) जनिमानि (शिष्यों के ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य रूप द्वितीय जन्मों की) घोषयन् (घोषणा किया करो ॥१॥

भावार्थभाषाः-

माता-पिता से एक जन्म मिलता है, दूसरा जन्म) ब्रह्मजन्म (आचार्य से प्राप्त होता है। जब शिष्य विद्याव्रतस्नातक होते हैं उस समय आचार्य गुणकर्मानुसार यह ब्राह्मण है, यह क्षत्रिय है, यह वैश्य है इस प्रकार स्नातकों को वर्ण देते हैं। उस काल में प्रथम जन्म का कोई ब्राह्मण भी गुण कर्म की कसौटी से क्षत्रिय या वैश्य बन सकता है,क्षत्रिय भी ब्राह्मण या वैश्य बन सकता है और वैश्य या शूद्र भी ब्राह्मण या क्षत्रिय बन सकता है ॥१॥

◙ मनुस्मृति के अनुसार-

आचार्यस्त्वस्य यां जातिं विधिवद् वेदपारगः।
उत्पादयति सावित्र्या सा सत्या सा जराऽमरा॥
(मनुस्मृति 2:148)

अर्थात्-'वेदों में पारंगत आचार्य सावित्री=गायत्री मन्त्रपूर्वक उपनयन संस्कार करके, विधिवत् पूरी वैदिक शिक्षण देकर जो बालक के वर्ण का निर्धारण करता है, वही वर्ण उसका वास्तविक वर्ण है ।

इस प्रकार बालक-बालिका का वर्णनिधारण होता था।

◙ ज्यादा से ज्यादा लोगो को शिक्षा मिल सके और अधिक लोग द्विज बन सके वैदिक युग आने पर वर्ण व्यवस्था में कुछ नए और लाभकारी विधान जोड़े गए थे इसके लिए उपनयन कराने का अधिकार सभी द्विज वर्णों को दिया गया था-

' 'ब्राह्मणस्त्रयाणां वर्णानामुपनयनं कर्त्तुमर्हति, राजन्यो द्वयस्य, वैश्यस्य, शूद्रमपि कुल-गुण-सपन्नं मन्त्रवर्जमुपनीतमध्यापये-दित्येके।' '

(सुश्रुत संहिता - सूत्रस्थान : 2)

अर्थात्- 'ब्राह्मण अपने सहित तीन) क्षत्रिय , वैश्य , शूद्र (वर्णों का, क्षत्रिय अपने सहित दो) वैश्य , शूद्र (का, वैश्य अपने सहित एक वर्ण) शूद्र (का उपनयन करा सकता है। यह) यगोपवीत (संस्कार यज्ञपूर्वक ही होता है।

【वर्णवरण पश्चात चारो वर्णो के कर्मो】

◙ ब्राह्मण वर्ण ग्रहण करने वाले स्त्री-पुरुषों के लिए निर्धारित कर्तव्य –

तैत्तिरीय संहिता का वचन है कि" ब्राह्मणो व्रतभृत् ।"1:6:7:2 अर्थात् ब्राह्मण वह है जो व्रत कर्मों का अधिष्ठाता है ।

*ब्रह्मन् *प्रातिपदिक से" तदधीते तद्वेद)"अष्टाध्यायी 4:2:59) अर्थात् में" अण् "प्रत्यय के योग से "ब्राह्मण " शब्द बनता है। इसकी व्युत्पत्ति है" -ब्रह्मणा वेदेन परमेश्वरस्य उपासनेन च सह वर्तमानो विद्यादि उत्तमगुणः युक्त पुरुषः " अर्थात् वेद और परमात्मा के अध्ययन और उपासना में तल्लीन रहते हुये विद्यादि उत्तमगुणों को धारण करने से व्यक्ति ब्राह्मण कहलाता है। अतः यह स्पष्ट है कि ब्राह्मण होना जाति से नहीं अपितु गुण कर्म से निर्धारित होता है।

ब्राह्मण ग्रंथों के वचनों में भी वर्णों के कर्मों का वर्णन पाया जाता है। निम्न वचनों में ब्राह्मण के कर्म उद्दिष्ट हैं।-

1. आग्नेयो ब्राह्मणः।)तांड्य ब्राह्मण 15.4.8)

आग्नेयो हि ब्राह्मणः।) काठक ब्राह्मण 29:10)

अर्थात् - यज्ञाग्नि)पवित्र कर्म (से संबंध रखने वाला अर्थात् यज्ञकर्ता ब्राह्मण होता है ।

2. ब्राह्मणो व्रतभृत्।) तैतरीय संहिता 1:6:7:2)

व्रतस्य रूपं यत् सत्यम्।) शतपथ ब्राह्मण12:8:2:4)

अर्थात् - ब्राह्मण श्रेष्ठ व्रतों कर्मों को धारण करने वाला होता हैं। सत्य बोलना व्रत का एक रूप है।

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजन तथा।

दानं प्रतिग्रहं चैव ब्राह्मणानामकल्पयत्॥

(मनुस्मृति 1: 88)

अर्थात्- ब्राह्मण वर्ण में दीक्षा लेने के इच्छुक स्त्री-पुरुषों के लिए ये कर्तव्य और आजीविका के कर्म निर्धारित किये हैं-'विधिवत् पढ़ना और पढ़ाना, यज्ञ करना और कराना तथा दान प्राप्त करना और सुपात्रों को दान देना।'

इन कर्मों के बिना कोई ब्राह्मण-ब्राह्मणी नहीं हो सकता।

◙ क्षत्रिय वर्ण ग्रहण करने वाले स्त्रियों-पुरुषों के लिए निर्धारित कर्म-

क्षणु)हिंसा अर्थात् वाली {तनादि } धातु से 'क्त :' प्रत्यय के योग से क्षत :शब्द सिद्ध होता है और इसके उपपद 'क्षत' में त्रैङ्) पालन करने के अर्थात् में (भ्वादि धातु से 'अन्येष्वपि दृश्यते ' (अष्टाध्याई 3:2:101) सूत्र से 'ड:' प्रत्यय, पूर्वपदान्त्यकारलोप होकर 'क्षत्र' और 'क्षत्र एव क्षत्रिय :' स्वार्थ में 'इय:' होने से 'क्षत्रिय :या क्षत्रस्य अपत्यम् वा , क्षत्राद् घ :' (अष्टाध्याई 4:1:1:138:) सूत्र से घ :प्रत्यय होकर क्षत्रिय बना।

क्षदति रक्षति जनान् क्षत्र:। क्षण्यते हिंस्यते नस्यते पदार्थो येन स 'क्षत :', ततस्त्रायते रक्षतीति क्षत्र:।

अर्थात् - जो लोगों का पालन और रक्षा करे, क्षत)जो क्षीण हो गया हो, हिंसात्मक घटना हो या नष्ट किया गया हो वो पदार्थ (की रक्षा या त्राण करने वाला क्षत्रिय कहा जाता है।

क्षत्रस्य वा एतद्रूपं यद् राजन्य:।)शतपथ -13:1:5:3)

अर्थात् - क्षत्रिय जो राजा की भांति पालन रक्षण करे।

प्रजानां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च।

विषयेष्वप्रसक्तिश्च क्षत्रियस्य समासतः॥

(मनुस्मृति 1:89)

अर्थात् - विधिवत् पढ़ना, यज्ञ करना, प्रजाओं का पालन-पोषण और रक्षा करना, सुपात्रों को दान देना, धन-ऐश्वर्य में लिप्त न होकर जितेन्द्रिय रहना, ये संक्षेप में क्षत्रिय वर्ण को धारण करने वाले स्त्री-पुरुषों के कर्तव्य हैं।

◙ वैश्य वर्ण ग्रहण करने वाले स्त्री-पुरुषों के लिए निर्धारित कर्तव्य –

विश :मनुष्यानाम।)निघंटु 2:3) के भावार्थ में यत् और उसके स्वार्थ में 'अण्' अथवा विश् प्रातिपदिक से अप्रत्यार्थ में 'यञ्' छान्दस प्रत्यय से 'वैश्य' शब्द की निष्पत्ति होती है।

यो यत्र तत्र व्यवहारविद्यासु प्रविशति स :वैश्य :व्यवहारविद्याकुशल :जनो वा।
अर्थात्- जो यहां वहां आने जाने के लिए व्यवहार विद्या में निपुण हो।

एतद् वै वैश्यस्य समृद्धं यत् पशव:।
(ताण्डय ब्राह्मण -18:4:6)
अर्थात् - वैश्य की समृद्धि पशुओं इत्यादि के पालन रक्षण से है।

पशूनां रक्षणं दानमिज्याध्ययनमेव च।
वणिक्पथं कुसीदं च वैश्यस्य कृषिमेव च॥
(मनुस्मृति 1:90)
अर्थात् - पशुओं का पालन-पोषण एवं संवर्धन करना, सुपात्रों को दान देना, यज्ञ करना, विधिवत् अध्ययन करना, व्यापार करना, याज से धन कमाना, खेती करना, ये वैश्य वर्ण को ग्रहण करने वाले स्त्री-पुरुषों के लिए निर्धारित कर्म हैं।

◙ शूद्र वर्ण धारक स्त्री-पुरुषों के लिए निर्धारित कर्म-

शुच् शोकार्थक) भ्वादि (धातु से शुचेर्दश्च) उणा॰ 2:19) सूत्र से रक् प्रत्यय उकार को दीर्घ, च को द होकर शूद्र शब्द बनता है।

शूद्र :शोचनीय :शोच्याम् स्थितिमापन्नो वा, सेवायां साधुर् अविद्यादिगुणसहितो मनुष्यो वा।

अर्थात् - शूद्र वो है जिसकी दशा शोचनीय हो, अथवा जिसकी स्थिति अच्छी न हो और उसके विषय में शोक करता हो अथवा सेवा इत्यादि से युक्त और विद्यादि गुणों से रहित मनुष्य।

असतो वा एष सम्भृतो यत् शूद्रः

(तैतिरीय ब्रहमण 3 : 2: 3:9)

अर्थात् - अज्ञान के कारण जो अशिक्षित जीवन स्थिति हो, वह शूद्र कहलाता है।

तपसे शूद्रम'

(यजुर्वेद 30:5)

तपो वै शूद्रः"

(शत्पथ ब्राह्मण 13:6:2:10)

अर्थात् - जो श्रम से अपना जीवन निर्वाह करता हो, वह शूद्र है।

एकमेव तु शूद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत्।
एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनसूयया॥

(मनुस्मृति 1: 91)

अर्थात् - परमात्मा ने वेदों में शूद्र वर्ण ग्रहण करने वाले स्त्री-पुरुषों के लिए एक ही कर्म निर्धारित किया है, वह यह है कि 'इन्हीं चारों वर्णों के व्यक्तियों के यहां सेवा या श्रम का कार्य करके जीविका करना।'

क्योंकि अशिक्षित व्यक्ति शूद्र होता है अतः वह सेवा या श्रम का कार्य ही कर सकता है, अतः उसके लिए यही एक निर्धारित कर्म है।

◙ वर्णनिर्धारण - गुरुकुल में साथ-साथ दो प्रकार की शिक्षाएं चलती थीं -एक, वेदादिशास्त्रों एवं भाषा प्रशिक्षण की शिक्षा । दूसरी, अपने-अपने स्वीकृत वर्ण की व्यावसायिक शिक्षा थी। कम से कम एक वेद की आध्यात्मिक शिक्षा अर्जित करने तक की शिक्षा सबके लिए अनिवार्य थी। आयु के अनुसार, पुरुषों के लिए 25 वर्ष तक और बालिकाओं के लिए 16 वर्ष तक शिक्षा प्राप्त करनी अनिवार्य थी। उसे पूर्ण न करने वाला शूद्र घोषित हो जाता था।गुरुकुल से स्नातक बनते समय आचार्य बालक-बालिका के वर्ण का निर्धारण करके उसकी घोषणा करता था, जो बालक प्राप्त वर्ण शिक्षा के अनुसार होता था।

◙ वर्णपरिवर्तन - एक बार वर्णनिर्धारण के बाद भी यदि कोई व्यक्ति वर्णपरिवर्तन करना चाहता था तो उसको उसकी स्वतन्त्रता थी और परिवर्तन के अवसर प्राप्त थे। जैसे, आज कोई कलास्नातक पुनः वाणिज्य की आवश्यक शिक्षा अर्जित करके, वाणिज्य की उपाधि प्राप्त कर व्यवसायी हो सकता है, उसी प्रकार वर्णव्यवस्था में अभीष्ट वर्ण का शिक्षण-प्रशिक्षण प्राप्त करके व्यक्ति वर्णपरिवर्तन कर सकता था।

◙ वर्णपतन - एक बार वर्णग्रहण करने के बाद यदि व्यक्ति अपने वर्ण, पद, या व्यवसाय के निर्धारित कर्त्तव्यों और आचार-संहिता का पालन नहीं करता था तो उसको राजा या अधिकार प्राप्त धर्मसभा वर्णावनत या वर्ण से पतित कर देते थे। अपराध करने पर भी वर्ण से पतित हो जाते थे। जैसे, आजकल नौकरी, व्यवसाय या निर्धारित कार्यों में कर्त्तव्य या कानून का पालन न करने पर, नियमों का पालन न करने पर, अथवा अपराध करने पर उस नौकरी या व्यवसाय का कुछ समय तक अधिकार छीन लिया जाता है, या उससे हटा दिया जाता है, या पदावनत कर दिया जाता है। ऐसे ही वर्णव्यवस्था में प्रावधान था।

वर्णपतन

【 महर्षि मनु के अनुसार 】

योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम् ।
स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ॥
(मनुस्मृति 2:168)

अर्थात् -जो ब्राहमण, क्षत्रिय या वैश्य वेदादिशास्त्रों का पठन-पाठन छोड़ अन्य विद्याओं में ही परिश्रम करता रहता है वह शूद्रता को प्राप्त हो जाता है।

न तिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम्।
स शूद्रवद् बहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विजकर्मणः॥
(मनुस्मृति 2:103)

अर्थात्-जो द्विज अर्थात् ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य प्रातःकालीन संध्या नहीं करता और जो सायंकालीन संध्या भी नहीं करता। वह शूद्र के समान है, उसको द्विजों के सभी अधिकारों या कर्त्तव्यों से बहिष्कृत कर देना चाहिए अर्थात् उसे ‘शूद्र’ घोषित कर देना चाहिए।

यो न वेत्त्यभिवादस्य विप्रः प्रत्यभिवादनम्।
नाभिवाद्यः स विदुषा यथा शूद्रस्तथैव सः॥
(मनुस्मृति 2:126)

अर्थात्-‘जो द्विज अभिवादन के उत्तर में अभिवादन करना नहीं जानता अर्थात् अभिवादन का विधिवत् उत्तर नहीं देता, बुद्धिमान् को उसे अभिवादन नहीं करना चाहिए, क्योंकि जैसा शूद्र होता है वह वैसा ही है। अर्थात् उसको शूद्र समझना चाहिए, चाहे वह किसी भी वर्ण का हो।’ इससे यह भी

संकेत मिलता है कि शिक्षितों की परपरा को न जानने वाला अशिक्षित व्यक्ति शूद्र होता है। निष्कर्ष यह है कि शूद्रत्व मुयतः अशिक्षा पर आधारित होता है।

【 महाभारत के अनुसार 】

जब कोई वेदाध्ययन से ब्राह्मण बनता है लेकिन बाद में अपने निर्धारित कर्म को त्याग देता है तो उसका वर्ण परिवर्तन हो जाता है-

'हिन्सानृतप्रिया :लुब्धा :सर्वकर्मोपजीबिन:।
कृष्णा :शौचपरिभ्रष्टास्ते द्विजा :शुद्रतां गता:॥
(महाभारत शांतिपर्व 188 : 3)

अर्थात्-जो शौच) शरीर और मन शुद्ध रखना (और सदाचार से भ्रष्ट होकर हिंसा और असत्य के प्रेमी हो गये। लोभवश सभी तरह के निम्न कर्म करके जीविका चलाने लगे और इसलिए जिनके शरीर का रंग काला पड़ गया, वे ब्राह्मण, शूद्रत्व को प्राप्त हो गये।

इत्यतै :कर्मभिर्व्यस्ता द्विजा वर्णान्तरं गता:।
धर्मो यज्ञ क्रिया तेषां नित्य न प्रतिषिध्यते॥
(महाभारत शांतिपर्व 188 : 4)

अर्थात्-इन्हीं कर्मों के कारण ब्राह्मणत्व से अलग होकर ब्राह्मण दूसरे-दूसरे वर्ण के हो गये। किन्तु किसी भी वर्ण के लिए नित्य धर्मानुष्ठान और यज्ञ कर्म का भी निषेध नहीं किया गया है।

शुद्रो राजन, भवति बह्मवन्धु दुश्वारित्रों यश्व घमोदपेतः।

वृषलीपतिः पिशुनो नतंनश्व सजप्रेष्यो यश्व भवेद् विकर्मा॥ ४ ॥

(महाभारत शांति पर्व 63 : 4)

अर्थात् -राजन ! जो ब्राह्मण दुश्चरित्र, धर्महीन ,कुलटा स्त्री से सम्बन्ध रखनेवाला , चुगलखोर, नाचनेवाला, राजसेवक तथा दूसरे-दूसरे विपरीत कर्म करनेवाला होता है वह ब्राह्मणत्व से गिरकर शूद्र हो जाता है ॥

जपन वेदानजपंश्वापि राजन समः शूद्रैदोसवच्चापि भोज्यः |

सर्वे शूद्रसमा भवन्ति राजन्नेतान् ब्जयेद् देवकृत्ये ॥ ५ ॥

(महाभारत शांति पर्व 63 :5)

अर्थात् -उपयुक्त दुर्गुणों से युक्त ब्राह्मण वेदो का स्वाध्याय करता हो या न करता हो शूद्रों के ही समान है। उसे दास की भाँति पंक्ति से बाहर भोजन कराना चाहिये। ये राज-सेवक आदि सभी अभम ब्राह्मण शूद्रों के ही तुल्य हैं। राजन ! देवकार्य में इनका परित्याग कर देना चाहिये ॥ ५ ॥

【 वशिष्ठ धर्मसूत्र के अनुसार 】

अश्रोत्रिया अननुवाक्या अनग्नयो वा शूद्रसधर्माणो भवन्ति

(वशिष्ठ धर्मसूत्र 3:1)

अर्थात् - जो ब्राह्मण न तो वेद का अध्ययन करते हैं, न ही पढ़ाते हैं और न ही यज्ञ करते हैं, वे शूद्र के समान हो जाते हैं.

योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम्

स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः

(वशिष्ठ धर्मसूत्र 3:2)

अर्थात् -कोई तथाकथित द्विज व्यक्ति, जिसने वेद का अध्ययन नहीं किया है, जल्द ही इसी जन्म में जीवित रहते हुए , एक शूद्र की स्थिति में गिर जाता है और उसके आगे आने वाले वंशज भी शूद्र होंगे अगर वह भी वेदाध्ययन नहीं करते तो.

नानृग्ब्राह्मणो भवति न वणिङ्न कुशीलवः

न शूद्रप्रेषणं कुर्वन् न स्तेनो न चिकित्सकः

(वशिष्ठ धर्मसूत्र 3:3)

अर्थात् -एक द्विज व्यक्ति जो वेदों को नहीं जानता वह ब्राह्मण नहीं हो सकता है, न ही वह व्यापार कर सकता है, न ही वह किसी शूद्र को आदेश दे सकता है ना ही चिकित्सक हो सकता है ,

---

【 आचार्य चाणक्य के अनुसार 】

गुण कर्म की प्रधानता-

कि कुलेन विशालेन विद्याहीनेन देहिनाम् ।

दुष्कुलं चापि विदुषो देवैरपि स पूज्यते ॥ ।।१८।।

(चाणक्य नीति 8 :18)

अर्थात्-विद्याहीन होने पर विशाल कुल का क्या लाभ है? विद्वान नीच कुल का भी हो, तब भी देवताओं द्वारा पूजा जाता है ।

गुणैरुत्तमतां याति नोच्चैरासनसंस्थिताः ।

प्रासादशिखरस्थो5पि काकः कि गरुडायते ॥ ॥६॥

(चाणक्य नीति 17 : 6)

अर्थात् -व्यक्ति को महत्ता उसके गुण प्रदान करते है वह नहीं जिन पदों पर वह काम करता है। क्या एक ऊँचे भवन पर बैठा कौवे को गरुड़ कहा जा सकता है।

ब्राह्मण के विषय में कहा-

एकाहारेण संतुष्ट :घट्कर्मनिरतः सदा ।

ऋतुकालाभिगामी च स विप्रो द्विज उच्यते ॥ ।।१२॥।

(चाणक्य नीति 11:12)

अर्थात् -वही सही में ब्राह्मण है जो केवल एक बार के भोजन से संतुष्ट रहे, जिसके पर 16 संस्कार किये गए हो, जो अपनी पत्नी के साथ महीने में केवल उचित दिन ही समागम करे। ।।१३।।

लौकिके कर्मणि रतः पशूनां परिपालक :|
वाणिज्यकृषिकर्मा यः स विप्रो वैश्य उच्यते ॥ ।।१३।।

(चाणक्य नीति 11:13)

अर्थात्-वह ब्राह्मण जो दुकानदारी में लगा है, सांसारिक विषयों में फंसा है, व्यापार, कृषि या गौपालन करता है, असल में वैश्य ही है।

लाक्षादितैलनीलीनां कौसुम्भमधुसर्पिषाम् ।
विक्रेता मद्यमांसानां स विप्र :शूद्र उच्पते ॥ ।।१४।।

(चाणक्य नीति 11:14)

अर्थात् -जो लाख, तेल, नील, रेशम, शहद, चमड़ा, मदिरा अथवा मांस का व्यापार करता है, वह ब्राह्मण शूद्र हो जाता है।

परकार्यविहन्ता च दाम्भिकः स्वार्थसाधक :।
छली द्वेषी मृदुः क्रूरो विप्रो मार्जार उच्यते ॥ ।।१५।।

(चाणक्य नीति 11:15)

अर्थात् -दूसरों का बिगाड़ने वाला , दम्भी, स्वार्थी, धोखेबाज, द्वेष रखने वाला, बोलते समय मुंह में मिठास और ह्रदय में रखने वाला ब्राह्मण वह एक पशु के समान है।

【 अत्रि स्मृति के अनुसार 】

अस्त्राहताश्च धन्वानः संग्रामे सर्वसंमुखे ॥

आरंभे निर्जिता येन स विप्र :क्षत्र उच्पते॥३७४॥

अर्थात् -जिसने रणभूमि में सबके सन्मुख धान्वीयों को युद्धके आरंभ में जीता हो और अस्त्रों से परास्त किया हो उस ब्राह्मण को" क्षत्रिय "कहते हैं ।

कृषिकर्मरतो यश्व गवां च प्रतिपालक :॥

वाणिज्यव्यवसायश्च स विप्रो वैश्य उच्पते ॥३७५॥

अर्थात् -खेती के कार्य में रत और गौ की पालना में लीन, और वाणिज्य के व्यवहार में जो ब्राह्मण तत्पर हो उसको 'वैश्य' कहते हैं ।

लाक्षालवणसंमिश्र कुसुंभं क्षीरसर्पिष :॥

विक्रेता मधुमां सानां स विप्र :शूद्र उच्पते ॥३७६॥

अर्थात् -लाख, लवण, कुसुंभ, घी, मिठाई, दूध, और मांस को जो ब्राह्मण बेचता है उसको 'शूद्र' कहते हैं ।

चोरश्न तस्करश्चैव सूचको दंशकस्त था ॥

मस्यमांसे सदा-लुब्धो विप्रो निषाद उच्यते ॥३७७॥

अर्थात् -चोर, तस्कर, सुचक - निकृष्ट सलाह देनेवाला, दंशक -कडवा बोलने वाला और सर्वदा मल्य मांस के लोभी ब्राह्मण को" निषाद "कहते हैं ।

ब्रह्मतत्व न जानाति ब्रह्मसूत्रेण गर्वितः ॥

तेनैव स च पापेन विप्र :पशुरुदाहृत:॥३७८॥

अर्थात् -जो ब्रह्म वेद और परमात्मा के तत्व को कुछ नहीं जानता और केवल यज्ञोपवीत के बल से ही अत्यन्त गर्व प्रकाश करता है, इस पाप से वह ब्राह्मण 'पशु' समान है ।

वापीकूपतडागानामारामस्य सरःसु च ॥

निश्शंकं रोधकश्चैव स विप्रो म्लेच्छ उच्पते ॥३७९॥

अर्थात् -जो निःशंक भाव से बावडी, कूप, तालाब, बाग, छोटा तालाव इनको बन्द करता है इस ब्राह्मण को 'म्लेच्छ कहा जाये ।

क्रियाहीनश्च मूर्खश्च सर्वधर्मविवर्जितः ॥
निर्दयः सर्व भूतेषु विप्रचंडाल उच्यते ॥३८०॥

अर्थात् -क्रियाहीन, मूर्ख, सभी धर्मों से रहित और सर्व प्राणियों के प्रति जो निर्दयता प्रकाश करता है वह ब्राह्मण 'चांडाल' हैं ।

【 पुराण के अनुसार 】

तत्वदर्शन सम्पन्नः समिधशिस्तितः ।
सत्यब्रह्मविदः शान्तः सर्वशास्त्रेषु निष्ठितः ।।
(भविष्य पुराण : ब्राह्मपर्व - 33 श्लोक 2,6)

अर्थात् -जो तत्वदर्शी समाधि संपन्न हो और जो ब्रह्म का ज्ञाता हो और सभी शास्त्रों में निष्ठा रखता हो वह ब्राह्मण है ।

यद्येका स्फुटमेव जातिरपरा कृत्यात्परं भेदिनी।
यद्वा व्याहृतिरिकतामधिगता यच्चान्यधर्म ययो ।॥
(भविष्य पुराण : ब्रह्मपर्व - 44 श्लोक 33)

अर्थात् -मानव जाति एक ही है किन्तु वर्णो का निर्माण भिन्न भिन्न कर्मो द्वारा किये गया है इसलिए व्यवहार में यह मानव जाति एक है केवल कर्मों में भिन्नता है

यत्र वा तत्र वा वर्ण उत्तमाधममध्यमाः ।

निवृत्तः पापकर्मेम्यों ब्राह्मण :स विधीयते ||

शूद्रीषपि शीलसम्पन्नह ब्राह्मणादधिको भवेत् ।

ब्राह्मण विगताचार :शूद्राद्धीनतरों भवेत्||

(भविष्य पुराण : ब्रह्मपर्व- 44 श्लोक 30-31)

अर्थात् -तदनुसार जिस किसी वर्ण में उत्तम, मध्यम या अधम कोई भी मनुष्य पाप कर्म न करे वह ब्राह्मण है। क्योंकि अच्छे शीलवाला शूद्र ब्राह्मण से उत्तम बताया गया है और आचार भ्रष्ट ब्राह्मण शूद्र से भी हीन कहा गया है ।

अभक्षि मांसं चापायि सुरा चाभाषि दुर्वचः ॥ ४१६ ॥

परयोषा तथा गामि परस्वं प्रत्यहारि च ।

अक्रीडि द्यूतमसकृत्कलंजं चादि दुर्भुजा ॥ ४१७ ॥

नापूजि जगतामीशः शिवो वा विष्णुरेव वा ।

एवं कालेन दुर्वृत्तं राजा वाक्यमभाषत ॥ ४१८ ॥

विप्र विप्रत्वमुत्सृज्य शूद्रत्वं प्राप्तवानसि ।

तस्मान्नियोगधर्मेण भवंतं भ्रंशयामि च ॥ ४१९ ॥

(पद्म पुराण 5:114)

भावार्थ - वह ब्राह्मण मांस खाता था, शराब पीता था कटुवचन बोलता था, परस्त्री गमन करता था, दूसरे का धन हरण करता था, जूवा खेलता था, श्रमक्ष्य कलंजादि खाता था, तब राजा ने इस दुर्वृन्त के कारण उसे ब्राह्मण से पतित करके शूद्र बना दिया।

【 उदाहरण 】

1- मर्यादापुरुषोत्तम राम के पूर्वज सम्राट् रघु का 'प्रवृद्ध' नामक एक पुत्र था। नीच कर्मों के कारण उसे 'राक्षस' घोषित किया गया था और इस प्रकार वह वर्णों से पतित हो गया था।

2- राम के ही पूर्वज सगर का एक पुत्र 'असमंजस्' था। उसके अन्यायपूर्ण कर्मों के कारण उसे क्षत्रिय से शूद्र घोषित करके राज्याधिकार से वंचित कर राज्य से बहिष्कृत कर दिया था।

(भागवतपुराण 6:8:14-19)

3- लंका का राजा रावण पुलस्त्य ऋषि के वंश में उत्पन्न होने के कारण ब्राह्मणोपेत क्षत्रिय था। अन्यायी और दुराचारी होने के कारण उसे 'राक्षस' घोषित किया गया।

(वाल्मीकि-रामायण - बालकांड)

(घ (सूर्यवंशी और चन्द्रवंशी क्षत्रियों के मूल पुरुष सातवें मनु वैवस्वत, जो एक चक्रवर्ती राजा थे, उनके पुत्र पृषध्र से किसी कारण गोवध हो गया। वैदिक काल में गोवध महापाप माना जाता था। इस पाप के दण्डस्वरूप उसको शूद्र घोषित कर दिया गया था।

(विष्णु पुराण 4:1:17)

वर्णव्यवस्था और जातिव्यवस्था

वर्णव्यवस्था और जातिव्यवस्था परस्पर विरोधी व्यवस्थाएं हैं।

【 वर्ण शब्द की परिभाषा 】

वर्ण शब्द" वृञ "धातु से बनता है जिसका मतलब है चयन या वरण करना है ।

यास्क ने निरुक्त में कहा है कि "वर्णो वृणोतेः' ' (निरुक्त 2 : 3)

अर्थात् - वर्ण उसे कहते हैं जो वरण अर्थात् चुना जाये.

वर्ण शब्द के अर्थात् से ही स्पष्ट है कि यहाँ व्यक्ति को स्वतन्त्रता थी कि वह किस वर्ण को चुनना चाहता है।

【 जाती शब्द की परिभाषा 】

जाति शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की "जनि" धातु से हुई है।

◙ दर्शन शास्त्र में वर्णित है-

आकृतिर्जातिलिङ्गाख्या (न्याय दर्शन 2:2:65)

अर्थात् - जिन व्यक्तियों कि आकृति) इन्द्रियादि (एक समान है,उन सबकी एक जाति है।

समानप्रसवात्मिका जातिः (न्याय दर्शन 2:2:19)

◙ इस पर भी वात्स्यायन मुनि भाष्य में कहते हैं-

या समानां बुद्धिम प्रसूते भिन्नेष्वधिकरणेषु,यया बहूनीतरेतरतो न व्यावर्तन्ते, योऽर्थोऽनेकत्र प्रत्ययानुवृत्तिनिमित्तं तत् सामान्यम् । यच्च केषाघिद भेदं कुतश्चिद्भेदं करोति तत् सामान्य विषा जातिरिति ।"

अर्थात्- भिन्न-भिन्न वस्तुओं में समानता उत्पन्न करने वाली जाति है। इस जाति के आधार पर अनेक वस्तुएँ आपस में पृथक् पृथक' नहीं होतीं अर्थात् - एक ही नाम से बोली जाती हैं। जैसे गौएँ पृथक् कितनी भी हो तो भी सबको गौ कहते हैं। यह एकता जाति के कारण ही उत्पन्न हुई जाति भी दो प्रकार की होती है-एक सामान्य दूसरी सामान्य-विशेष जो अनेक वस्तुओं में एक आकार की प्रतीत होती है वह सामान्य जाति है, जैसे पशु जाति सामान्य है।

◙ निरालंबोपनिषद में वर्णन मिलता है-:

जातिरिति च न चर्मणो न रक्तस्य न मांसस्य न चास्थिनः।
न जातिरात्मनो जातिर्व्यवहारप्रकल्पिता॥
(नीरालम्बोपनिषद-10)

अर्थात् – जाति शरीर के चर्म, रक्त, मांस, अस्थियों और आत्मा की नहीं होती। उसकी (मानव, पशु-पक्षी आदि जाति की) प्रकल्पना तो केवल व्यवहार के निमित्त की गई है ।

◙ वैज्ञानिक दृष्टिकोण-

जाति) अंग्रेज़ी :species, स्पीशीज़ (जीवों के जीव-वैज्ञानिक वर्गीकरण में सबसे बुनियादी और निचली श्रेणी होती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ऐसे जीवों के समूह को एक जाति बुलाया जाता है जो एक दुसरे के साथ सन्तान उत्पन्न करने की क्षमता रखते हो और जिनकी सन्तान स्वयं आगे सन्तान जनने की क्षमता रखती हो। उदाहरण के लिए एक भेड़िया और शेर आपस में बच्चा पैदा नहीं कर सकते इसलिए वे अलग जातियों के माने जाते हैं।

◙ जैन महापुराण में वर्णन मिलता है-:

वर्णाकृत्यादिभेदानां देहेऽस्मिन्नप्यदर्शनात् ।
ब्राह्मण्यादिषु शूद्राद्यैर्गर्भाधानप्रदर्शनात् ।491।
नास्ति जातिकृतो भेदो मनुष्याणां गवाश्ववत् ।
आकृतिग्रहणात्तस्मादन्यथा परिकल्प्यते ।492।
(महापुराण 74 : 491-495)

अर्थात् - मनुष्यों के शरीरों में न तो कोई आकृति का भेद है और न ही गाय और घोड़े के समान उनमें कोई जाति भेद है, क्योंकि ब्राह्मणी आदि में शूद्र आदि के द्वारा गर्भ धारण किया जाना देखा जाता है। आकृतिका भेद न होने से भी उनमें जाति भेद की कल्पना करना अन्यथा है।

1- वर्णव्यवस्था में बालक-बालिका या व्यक्ति किसी भी कुल में उत्पन्न होने के पश्चात् अपनी रुचियों, गुण, कर्म, योग्यता के अनुसार किसी भी इच्छित वर्ण को ग्रहण कर सकता है, जबकि जातिव्यवस्था में जाति का माता-पिता से निर्धारण होने के कारण व्यक्ति किसी अन्य इच्छित जाति को ग्रहण नहीं कर सकता।

2- वर्णव्यवस्था में वर्णों के निर्धारक तत्त्व गुण, कर्म, योग्यता होते हैं, जबकि जातिव्यवस्था में केवल जन्म ही जाति का निर्धारक तत्त्व होता है। वर्णव्यवस्था में जन्म का कोई महत्त्व नहीं होता, जबकि जातिव्यवस्था में जन्म का सर्वोच्च महत्त्व होता है।

3-वर्णव्यवस्था में पद और व्यवसाय वंशानुगत होने अनिवार्य नहीं हैं, जबकि जातिव्यवस्था में ये अनिवार्य होते हैं।

4- वर्णव्यवस्था में व्यक्ति की बौद्धिक, मानसिक, शारीरिक क्षमताओं के विकास का स्वतन्त्र व खुला अवसर रहता है, जबकि जातिव्यवस्था में वह अवरुद्ध रहता है।

5-वर्णव्यवस्था में असमानता के आधार पर ऊंच-नीच, स्पृश्य-अस्पृश्य आदि का भेदभाव नहीं होता, जबकि जातिव्यवस्था में इनका अस्तित्व उग्र या शिथिल रूप में अवश्य बना रहता है।

6-वर्णव्यवस्था में जीवनभर वर्णपरिवर्तन की स्वतन्त्रता बनी रहती है, जबकि जातिव्यवस्था में जहां एक बार जन्म हो गया, जीवनपर्यन्त अनिवार्य रूप से उसी जाति में रहना पड़ता है।

7-वर्णव्यवस्था में व्यक्ति निर्धारित कर्मों के न करने पर या उनके त्यागने पर वर्ण से अनिवार्यतः पतित हो जाता है, जबकि जातिव्यवस्था में अच्छा-बुरा कुछ भी करने पर उसी जाति का बना रहता है। जैसे-वर्णव्यवस्था में अनपढ़, मूढ़, चोर या डाकू को कभी ब्राह्मण वर्णस्थ नहीं माना जा सकता,

जबकि जातिव्यवस्था में अनपढ, मूढ़, चोर या डाकू भी ब्राह्मण ही रहता है और वह उस पतित स्थिति में भी उच्च जातीयता का अभिमान रखता है।

8 - वर्णव्यवस्था में सवर्ण विवाह की प्राथमिकता होते हुए भी समान गुण-कर्म-योग्यता की कन्या से अन्य वर्ण में भी विवाह किया जा सकता है। मनु का कथन है -''स्त्रीरत्नं दुष्कुलादपि'' श्रेष्ठ स्त्री निनकुल से भी ग्रहण की जा सकती है।' इस प्रकार वर्णव्यवस्था में अन्तर-वर्ण विवाह) अन्तर-जातीय विवाह (और सहभोज स्वीकार्य होते हैं। जातिव्यवस्था में ये दोनों ही स्वीकार्य नहीं होते।

वर्णव्यवस्था स्वाभाविक एवं मनोवैज्ञानिक तथा स्वैच्छिक है, जबकि जातिव्यवस्था अस्वाभाविक, अमनोवैज्ञानिक और बलात् आरोपित है।

9-वर्णव्यवस्था का व्यावहारिक क्षेत्र उदार एवं विस्तृत है, जबकि जातिव्यवस्था का संकीर्ण एवं सीमित।

10-वर्णव्यवस्था समाज और राष्ट्र में सामुदायिक भावना एवं समरसता उत्पन्न कर दृढ़ता प्रदान करती है, जबकि जातिव्यवस्था विघटन पर विघटन पैदा करती है। जातिव्यवस्था का विघटन असीम है।

11-वर्णव्यवस्था में शरीर, बुद्धि, मन का सामञ्जस्य बना रहता है, जबकि जातिव्यवस्था में इनका सामञ्जस्य होना सदा संभव नहीं होता।a

शूद्रों के धार्मिक अधिकार

【मानव जाति चतुर्वर्ण प्रवर्तन मनु】

आचार्य यास्क निरुक्त में इसी मान्यता को स्थापित करते हैं-

' 'मनोरपत्यं मनुष्यः (मानवः)''

(निरुक्त - 3:4)

अर्थात् -'मनु की सन्तान होने के कारण सबको मनुष्य या मानव कहा जाता है।'

मनोर्वंशो मानवानाम्, ततोऽयं प्रथितोऽभवत्।

ब्रह्मक्षत्रादयः तस्मात्, मनोः जातास्तु मानवाः॥

(महाभारत -आदिपर्व 75:14)

अर्थात् -मानव वंश मनु के द्वारा प्रवर्तित है। उसी मनु से यह प्रतिष्ठित हुआ है। सभी मानव मनु की सन्तान हैं अतः ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सभी उसी मनु के वंशज हैं।

'मनुराह वै अग्रे यज्ञेन ईजे।तद् अनुकृत्य इमाः प्रजाः यजन्ते।तस्माद् आह-'मनुष्वद्' इति। 'मनोः यज्ञः' इति उ-वै-आहुः।तस्माद् वा इव आहुः 'मनुष्वद्' इति।' '

(शतपथ ब्राह्मण - 1 :5:1 :7)

अर्थात्-'यह सुनिश्चित तथ्य है कि मनु ने सर्वप्रथम यज्ञ का अनुष्ठान किया। उसी मनु का अनुसरण करके सब प्रजाएं (जनता) यज्ञ करती हैं। इसी आधार पर कहा जाता है कि यज्ञ मनु के अनुसरण पर किया जाता है अर्थात् यज्ञ का आदिप्रवर्तक मनु है।' यह आदि मनु ब्रह्मापुत्र स्वायंभुव मनु ही है।

[शूद्रों का वेदाध्ययन में अधिकार]

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।ब्रह्मराजन्याभ्या शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च।
प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं
मे कामः समृध्यतामुप मादो नमतु ॥२ ॥
(यजुर्वेद-26 : 2)

अर्थात्- हे मनुष्यो ! मैं (ईश्वर) सबका कल्याण करने वाली वेदरूप वाणी का सब जनों के लिए उपदेश कर रहा हूँ, जैसे मैं इस वाणी का ब्राह्मण , क्षत्रियों, शूद्रों , वैश्यों और अपने स्त्रियों के लिए जैसे मैं इसका उपदेश कर रहा हूँ और जिन्हें तुम अपना आत्मीय समझते हो , उन सबके लिए इसका उपदेश कर रहा हूँ और जिसे पराया समझते हो, उसके लिए भी मैं इसका उपदेश कर रहा हूँ, वैसे ही तुम भी आगे आगे सब लोगों के लिए इस वाणी के उपदेश का क्रम चलते रहो।

*वेदाध्ययन से ही शूद्र मनुष्य द्विज बनता है ।

[यज्ञ में शूद्रों का सम्मान सत्कार]

सर्वे वर्णा यथा पूजां प्राप्नुवन्ति सुसत्कृता:।
न चावज्ञा प्रयोक्तव्या कामक्रोधवशादपि।।
(वालमीकि रामायण 1:13:13)

अर्थात्-सभी वर्णों के लोगों के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार किया जाना चाहिए। अपमान नहीं होना चाहिए क्रोध पर लोभ पर वासना के द्वारा किसी को भी।

ब्राह्मणान् क्षत्रियान् वैश्यान् शूद्रांश्चैव सहस्रशः।
समानयस्व सत्कृत्य सर्वदेशेषु मानवान्॥
(वाल्मीकि रामायण -1: 13:19)

अर्थात् -महर्षि वसिष्ठ आदेश देते है-'हजारों की संख्या में ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों को सभी प्रदेशों से सत्कारपूर्वक बुलाओ। उनको श्रद्धा-सत्कारपूर्वक भोजन कराओ ।'

【रामायण शूद्रों के लिए भी 】

पठन् द्विजो वाक् ऋषभत्वम् ईयात् ।
स्यात् क्षत्रियो भूमि पतित्वम् ईयात् ||
वणिक् जनः पण्य फलत्वम् ईयात् ।
जनः च शूद्रो अपि महत्त्वम् ईयात् ||
(वाल्मीकि रामायण 1:1:100)

अर्थात् - इस रामायण को पढ़ने वाला अगर व्यक्ति ब्राह्मण होगा तो वो अच्छा वक्ता बनेगा , वह अपने भाषण में श्रेष्ठता प्राप्त करता है, और यदि वह क्षत्रिय व्यक्ति हो, उसे भूमि-अधिकार प्राप्त हो, और अगर वह व्यापार से वैश्य व्यक्ति हो तो वह वह धन-लाभ अर्जित करता है, और यदि वह मजदूर वर्ग (नौकरी करने वाला) से शूद्र व्यक्ति होता है, तो वह व्यक्तिगत महानता को प्राप्त करता है " इस प्रकार नारद ऋषि ने वाल्मीकि ऋषि-को रामायण का सार दिया।

वाल्मीकि रामायण में अनेकों उदाहरण भरे पड़े है जहाँ ब्राह्मण के साथ शूद्र को हवंन और पूजा में सामूहिक रूप से आमंत्रित किया जाता था, इससे यह प्रमाणित होता है की वेद से लेकर वाल्मीकि रामायण तक कभी कोई भेदभाव नही हुआ था।

【शूद्रों का यज्ञ -अनुष्ठान में अधिकार】

अ॒ग्नेस्त॒नूर॑सि वा॒चो वि॒सर्ज॑नं दे॒ववी॑तये त्वा गृह्णामि बृ॒हद् ग्रा॑वासि वानस्प॒त्यः सऽइ॒दं दे॒वेभ्यो॑ ह॒विः श॑मीष्व सु॒शमि॑ शमीष्व। हवि॑ष्कृ॒देहि॒ हवि॑ष्कृ॒देहि॑ ॥१५॥

(यजुर्वेद -1:15)

अर्थात्- मैं सब जनों के सहित और काष्ठ के मूसल आदि पदार्थ विद्वान् वा दिव्यगुणों के लिये उस यज्ञ को श्रेष्ठ विद्वान् वा विविध भोगों की प्राप्ति के लिये ग्रहण करता हूं। हे विद्वान् मनुष्य! तुम विद्वानों के सुख के लिये अच्छे प्रकार दुःख शान्त करने वाले यज्ञ करने योग्य पदार्थ को अत्यन्त शुद्ध करो। जो मनुष्य वेद आदि शास्त्रों को प्रीतिपूर्वक पढ़ते वा पढ़ाते हैं, उन्हीं को यह होम में चढ़ाने योग्य पदार्थों का विधान करने वाली जो कि यज्ञ को करने के लिये ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों की शुद्ध सुशिक्षित और प्रसिद्ध वाणी वेद के पढ़ने से है .

◙ महाभारत में भी चारों वर्णों को तप,दान व अग्निहोत्र का अधिकार दिया गया है-

ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः शूद्रा ये चाश्रितास्तपे।
दानधर्माग्निना शुद्धास्ते स्वर्गं यान्ति भारत!।।

(महाभारत-अश्वमेधिकापर्व 11:37)

अर्थात् - जो ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य,शूद्र तप,दान,धर्म और अग्निहोत्र करते हैं, वे शुद्ध होकर स्वर्ग को प्राप्त करते हैं।

◙ महाभारत में ही एक अन्य स्थान पर यज्ञ में चारों वर्णों की भागीदारी को स्वीकार किया गया है-

'चत्वारो वर्णाः यज्ञमिमं वहन्ति' '

(महाभारत -वनपर्व 134:11)

अर्थात् - इस यज्ञ का सपादन चारों वर्ण कर रहे हैं।

◙ महाभारत में तो इससे भी आगे बढ़कर दस्युओं के लिए भी इन कर्मों का विधान किया है-

भूमिपानां च शुश्रूषा कर्तव्या सर्वदस्युभिः।
वेदधर्मक्रियाश्चैव तेषां धर्मो विधीयते।।

(महाभारत - शान्तिपर्व 65:18)

अर्थात् - दस्युओं को राजाओं की सेवा पक्ष में युद्ध करके करनी चाहिए। वेदाध्ययन, यज्ञ आदि धर्मानुष्ठानों का पालन करना उनका भी विहित धर्म है।

◙ महाभारतकार कहता है कि कर्मभ्रष्ट होकर निन वर्ण को ग्रहण करने वालों के लिए यज्ञ, धर्मपालन, वेदाध्ययन का निषेध नहीं है –

धर्मो यज्ञक्रिया तेषां नित्यं न प्रतिषिध्यते।
इत्येते चतुरो वर्णाः येषां ब्राह्मी सरस्वती॥

(महाभारत -शान्तिपर्व 188:15)

अर्थात् -वर्णान्तर प्राप्त जनों के लिए यज्ञक्रिया और धर्मानुष्ठान का निषेध कदापि नहीं है। वेदवाणी चारों वर्ण वालों के लिए है।

इसी प्रकार पांडवों के अश्वमेघ यज्ञ में भी शूद्र जन आमन्त्रित किये गये थे। वहां भी यज्ञ-भोजन की भागीदारी में कोई भेदभाव नहीं था। (महाभारत, अश्वमेध पर्व 88.23; 89.26)

◙ यज्ञ में अग्नि प्रज्वलन में भी अधिकार-

विद्यते: चतुर्थस्य वर्णस्य: अग्निनाधेयं इत्तेके

(भारद्वाज श्रौत सूत्र 5:2:8)

अर्थात्-सभी चार वर्ण पवित्र यज्ञ की अग्नि को प्रज्वलित करने योग्य है ।

【यज्ञ में प्रसाद में अधिकार 】

"चत्वारो वै वर्णाः ब्राह्मणो राजन्यो वैश्यः शूद्रः,
न ह एतेषां एकश्चन भवति यः सोमं वमति।
स यद् ह एतेषां एकश्चित् स्यात् ह एव प्रायश्चित्तिः।' '

(शतपथ ब्राह्मण 5 : 5 : 4: 9)

अर्थात् -वर्ण चार हैं-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इनमें कोई भी यज्ञ में सोम का त्याग नहीं करेगा। यदि एक भी कोई करेगा तो उसको प्रायश्चित्त करना पड़ेगा।

ऐतरेय ब्राह्मण में ऐतिहासिक उल्लेख आता है कि कवष ऐलूष नामक व्यक्ति एक शूद्रा का पुत्र था। वह वेदाध्ययन करके ऋषि बना। आज भी ऋग्वेद के 10:30-34 सूक्तों पर मन्त्रद्रष्टा के रूप में कवष ऐलूष का नाम मिलता है (2.29)।

【शूद्रों को समान-व्यवस्था में छूट】

मनु का शूद्रों के प्रति सद्भावपूर्ण एवं मानवीय दृष्टिकोण देखिए कि द्विजवर्णों में अधिक गुणों के आधार पर समान का विधान होते हुए भी उन्होंने शूद्र को विशेष छूट दी है कि यदि शूद्र नबे वर्ष से अधिक आयु का हो तो उसे पहले समान दें-

पञ्चानां त्रिषु वर्णेषु भूयांसि गुणवन्ति च।
यत्र स्युः सोऽत्र मानार्हः, शूद्रोऽपि दशमीं गतः॥
(मनुस्मृति 2:137)

अर्थात् -तीन द्विज-वर्णों में समान गुण वाले अनेक हों तो जिसमें श्लोक 2.136 में उक्त पांच गुणों में से अधिक गुण हों, वह पहले समाननीय है किन्तु शूद्र यदि नबे वर्ष से अधिक आयु का हो तो वह भी पहले समाननीय है।

【शूद्रों का अद्भुत मानवीय समान】

शूद्रों के प्रति मनु का कितना अद्भुत मानवीय भाव था इसकी जानकारी हमें मनु के निन आदेश में मिलती है। मनु कहते हैं कि अपने भृत्यों (शूद्रों) को पहले भोजन कराने के बाद ही द्विज दपती भोजन करें-

भुक्तवत्सु-अथ विप्रेषु स्वेषु भृत्येषु चैव हि।
भुंजीयातां ततः पश्चात्-अवशिष्टं तु दपती॥
(मनुस्मृति -3:116)

अर्थात् -द्विजों के भोजन कर लेने के बाद और अपने भृत्यों के (जो कि शूद्र होते थे) पहले भोजन कर लेने के बाद ही शेष बचे भोजन को द्विज दपती खाया करें।

【शूद्रों के कर्मो की प्रशंसा】

पदभ्यं भगवतो जज्ञे सुश्रुषा धर्मसिध्ये।
तस्यं ज़ात: पुरा शूद्रों यद्व्त्त्या तुष्याते हरि:।।
(श्रीमद् भागवत महापुराण 3:6:33)

अर्थात् - सब धर्मों की सिद्धि का मूल सिर्फ़ सेवा है, सेवा किए बिना कोई भी धर्म सिद्ध नहीं होता। अत: सब धर्मों की मूलभूत सेवा ही जिसका धर्म है वह शूद्र वर्णों में महान है । प्रथम तीन वर्णों धर्म अन्य पुरुषार्थ लिए हैं, किंतु शूद्र का धर्म सवपुरुषार्थ के लिए है; अत: इसकी वृत्ति से ही भगवान प्रसन्न हो जाते हैं।

【शूद्रहत्या के लिए प्रायश्चित】

एतदेव व्रतं कृत्स्नं षण्मासाञ् शूद्रहा चरेत् ।
वृषभैकादशा वापि दद्याद्विप्राय गाः सिताः ।।
(मनुस्मृति-11:130)

अर्थात्- शूद्र के वध करने में छः मास पर्यन्त शूद्र हत्या के प्रायश्चित को करे और बैल और दस गऊ ब्राह्मण को देवे। यह भी अज्ञानता से वध करने में जानना। इन सब व्रतों के करने में कपाल ध्वजा को त्याग देना चाहिये।

【पृथ्वी भी शूद्र सामान】

स नैव व्यभवत्स शौद्रं वर्णममृजत पूषणमियं
वै पूषेयं हीदं सर्वं पुष्यति यदिदं किञ्च ॥ १३ ॥
(बृहदारण्यक उपनिषद् 1:4:13)

व्याख्या - यह शूद्र वर्ण पूषण (पालनेवाला) अर्थात् पोषण करने वाला हैं और साक्षात् इस पृथ्वी के समान हैं क्यूंकि जैसे यह पृथ्वी सबका भरण -पोषण करती हैँ वैसे शूद्र भी सबका भरण-पोषण करता हैं। इसलिए पृथिवी को शूद्रदेव कहा गया हैं क्योंकि हमें अन्न देती है आश्रय देती है और हमारा पोषण करती है ।

【देव को भी शूद्र कहना】

'सः शौद्रं वर्णमसृजत, पूषणमियं वै पूषा इयं हीदं सर्वं पुष्यति यदिदं किञ्च।' '
(शतपथ ब्राह्मण -14:4:2:25)

अर्थात्-उस ब्रह्म-पुरुष ने शूद्रसबन्धी वर्ण को उत्पन्न किया। देवों में पूषा देव को शूद्र के रूप में उत्पन्न किया, क्योंकि वह सबको पालन-पोषण करके पुष्ट करता है।

क्या यहां कहीं हीनभावना या अपमानजनक भावना दिखाई पड़ती है? गुणों में समानता यह है कि पृथ्वी का पोषक रूप=पूषा देव सब पदार्थों को पुष्ट करता है और शूद्र भी अपने श्रम-सेवा से सबको पुष्ट करता है, अतः गुण-कर्म-साय से दोनों शूद्र वर्णस्थ हैं।

【शुद्रो से समानता का व्यव्हार】

रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुचं राजसु नस्कृधि।
रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम् ॥
(यजुर्वेद-18:48)

अर्थात्- हे ईश्वर ! आप हमारी रुचि ब्राह्मणों के प्रति उत्पन्न कीजिए, क्षत्रियों के प्रति उत्पन्न कीजिए, वैश्यों के प्रति उत्पन्न कीजिए और शूद्रों के प्रति उत्पन्न कीजिए।

मंत्र का भाव यह है कि हे ईश्वर ! आपकी कृपा से हमारा स्वभाव और मन ऐसा हो जाए कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी वर्णों के लोगों के प्रति हमारी रुचि हो। सभी वर्णों के लोग हमें अच्छे लगें। सभी वर्णों के लोगों के प्रति हमारा बर्ताव सदा प्रेम और प्रीति का रहे।

【शूद्रों को कम दंड】

अष्टापाद्यं तु शूद्रस्य स्तेये भवति किल्विषम्
षोडशैव तु वैश्यस्य द्वात्रिंशत् क्षत्रियस्य च॥

(मनुस्मृति 8:337)

ब्राह्मणस्य चतुःषष्टिः पूर्णं वाऽपि शतं भवेत्।
द्विगुणा वा चतुःषष्टिः, तद्दोषगुणविद्धि सः॥
(मनुस्मृति 8:338)

अर्थात् - अपराध में शूद्र को आठ गुणा दण्ड दिया जाता है तो वैश्य को सोलहगुणा, क्षत्रिय को बत्तीसगुणा, ब्राह्मण को चौंसठगुणा, अपितु उसे सौगुणा अथवा एक सौ अट्ठाईसगुणा दण्ड देना चाहिए, क्योंकि उत्तरोत्तर वर्ण के व्यक्ति अपराध के गुण-दोषों और उनके परिणामों, प्रभावों आदि को भली-भांति समझने वाले हैं।

आप यहाँ समझ सकते है की शूद्र के लिए किसी भी अपराध के लिए सबसे कम दंड का विधान है क्यूंकि वो शिक्षित नहीं है.अतः ब्राह्मण को दण्डरहित छोड़ने का जहां भी कथन है, वह इस मनुव्यवस्था के विरुद्ध होने से प्रक्षिप्त (मिलावट) है।

【जनेऊ धारण का अधिकार】

◙ प्राचीन शैव आगम ग्रन्थ जो लोग किसी कारण वेदाध्यन से वंचित रह गए हो और शूद्र हो उन्हें भी जनेऊ धारण का अधिकार देता है शैव धर्म के ऐसे ही उदारवादी नियमों के कारण दक्षिण भारत के आदिवासी जातियों में शैव धर्म का सबसे ज्यादा प्रभाव रहा तथा वहां के अधिकांश कबीले शैव थे -

कार्पास निर्मित सत्र त्रिगुणं त्रिगुणीकृतम।
सूत्रमेकं तु शूद्राणां वैश्यानां द्विसरं भवेत्॥88
(कामिका आगम 3:88)

अर्थात् -पवित्र धागा कपास से बना होना चाहिए। एक जनेऊ तीन धागों से बना होना चाहिए और ऐसी तीन धागों से पवित्र धागा बनाना चाहिए। योग्यता अनुसार शूद्र को एक पवित्र धागा पहनना चाहिए ; वैश्य दो पवित्र धागे पहन सकते हैं।

क्षत्रविद्वद्ध जातीनां यदुक्तम् चोपवीतकम॥
पूजादि मन्त्रकाले तु धार्यन्नो घार्यमेव वा।
अनुलोमादि वर्णानां युक्तायुक्त विचार्य च॥
जातिभेदोक्त विधिना न धार्य धार्यमेव च।
(कामिका आगम 3:91-92)

अर्थात् -पवित्र धागा (जनेऊ) जिसे क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों द्वारा पहना जाना बताया गया है उन्हें केवल देवता-पूजा और मंत्र के समय ही पहना जाना चाहिए। अन्य समय में, वे पवित्र धागा पहन भी सकते हैं और नहीं भी। मिश्रित जातियों और अन्य लोगों के लिए निर्धारित

पवित्र धागा पहनने के सटीक नियमों से अच्छी तरह से परामर्श किया जाना चाहिए और यह तय किया जाना चाहिए कि वे पवित्र धागा पहन सकते हैं या नहीं।

पुरुषाघोर वामाजमन्त्रा विप्रदिततः क्रमात्।
स्वस्वजात्युक्त मन्त्रेण घार्य तदुपवीतकम्॥101
(कामिका आगम 3:101)

अर्थात् -तत्पुरुष मन्त्र, अघोर मन्त्र, वामदेव मन्त्र के जाप से पवित्र धागा धारण करना चाहिए। ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों द्वारा क्रमशः मंत्र और सद्योजाता मंत्र जैसे निर्धारित विशेष मंत्र के पाठ के साथ पहना जा सकता है।

【शूद्र के लिए ब्रहमचर्य आश्रम】

शूद्रस्य ब्रहमचर्यं च मुनिभिः कैश्चिदिष्यते
(योग याज्ञवल्क्य 1:36)

अर्थात्-याज्ञवल्क्य कहते हैं कि ऋषि - मुनि शूद्रों के लिए ब्रहमचर्य-आश्रम स्वीकार करते हैं।

यह आश्रम विशेष रूप से शिक्षा (वेदाध्ययन) के लिए है।इस आश्रम में शिक्षा पूर्ती के बाद सभी को उनका योग्यतानुसार वर्ण आचार्य द्वारा मिलता है जो शिक्षा से वंचित रह जाता है वो शूद्र ही रह जाता है

स्त्रियों के धार्मिक अधिकार

◙ स्त्रियों के धार्मिक अधिकार ◙

【दो प्रकार की स्त्रियां 】

हारीत संहिता में विदुषी महिलाओं के 'ब्रह्मवादिनी' वर्ग का वर्णन आता है । वे वेदादिशास्त्रों का अध्ययन करके ही ब्रह्मवादिनी बनती थीं।पराशर संहिता के प्रसिद्ध भाष्यकार मध्वाचार्य इस कि टिका में लिखते हैं कि-

"द्विविधा स्त्रियो ब्रह्मवादिन्य: सद्योवध्वश्च । तत्र ब्रह्मवादिनीनाम् उपनयनम् अग्निबन्धनम् वेदाध्ययनम् स्वगृहे भिक्षा इति, वधूनाम् तु उपस्थिते विवाहे कथंचित् उपनयनं कृत्वा विवाह: कार्य:।"

अर्थात्- दो प्रकार की स्त्रियाँ होती हैं- एक वे ब्रह्मवादिनी जिनका उपनयन होता है,जो अग्निहोत्र करती हैं,वेदाध्ययन करती हैं, अपने परिवार में ही भिक्षावृत्ति से रहती हैं और दुसरी वे जिनका शीघ्र ही विवाह होना होता है । इन स्त्रियों का भी जिनका शीघ्र विवाह होना होता है जिस-किसी तरह उपनयन संस्कार कर विवाह कर देना चाहिए ।"

【वैदिक ब्रह्मवादनी स्त्रियाँ 】

1-वेदों के मन्त्रों पर लगभग 26 महिलाओं के नाम का उल्लेख ऋषिका के रूप में मिलता है , ऋग्वेद की ऋषिकाओं की सूची बृहद् देवता के दूसरे अध्याय में इस प्रकार है–

घोषा गोधा विश्ववारा, अपालोपनिषन्निषत्।
ब्रह्मजाया जुहूर्नाम अगस्त्यस्य स्वसादिति:॥ 84॥
इन्द्राणी चेन्द्रमाता च सरमा रोमशोर्वशी।
लोपामुद्रा च नद्यश्च यमी नारी च शश्वती॥ 85॥
श्रीर्लाक्षा सार्पराज्ञी वाक्श्रद्धा मेधा च दक्षिणा।
रात्री सूर्या च सावित्री ब्रह्मवादिन्य ईरिता:॥ 86॥
(बृहद्देवता 2:84-86)

अनुवाद -घोषा, गोधा, विश्ववारा, अपाला, उपनिषद्, निषद्, ब्रह्मजाया (जुहू), अगस्त्य की भगिनी, अदिति, इन्द्राणी और इन्द्र की माता, सरमा, रोमशा, उर्वशी, लोपामुद्रा और नदियाँ, यमी, शश्वती, श्री, लाक्षा, सार्पराज्ञी, वाक्, श्रद्धा, मेधा, दक्षिणा, रात्री और सूर्या- सावित्री आदि सभी ब्रह्मवादिनी हैं।

अत्र सिद्धा शिवा नाम ब्राह्मणी वेद पारगा ।
अधीत्य सकलान वेदान लेभेऽसंदेहमक्षयम ॥
(महाभारत उद्योग पर्व 110:18)

अर्थात् - वेदों में पारंगत शिवा नामक ब्राह्मणी ने सभी वेदों का अध्ययन कर मोक्ष प्राप्त किया ।सहस्त्र वेदज्ञ विप्र-सभा में गार्गी ने ब्रह्मज्ञानी याज्ञवल्क्य को शास्त्रार्थ के लिए आह्वान किया ।

महाभारत में गार्गी सहित एक दर्जन से अधिक विदुषियों का वर्णन आता है। उनमें सुलभा का विशेष महत्त्व है। अन्य विदुषियां थीं शिवा, सिद्धा, श्रुतावली, विदुला आदि (शान्तिपर्व 320.82; उद्योगपर्व 109.18; शल्यपर्व 54.6; उद्योगपर्व 133 आदि)

2-शतपथ ब्राह्मण में याज्ञवल्क्य ऋषि की धर्मपत्नी मैत्रेयी को ब्रह्मवादिनी कहा है-
तयोर्ह मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी बभूव।
(शतपथ ब्राह्मण 14: 7: 3:1)
अर्थात्- मैत्रेयी ब्रह्मवादिनी थी।

【 वेदाध्ययन का अधिकार 】

1-“ब्रह्मचर्येण कन्या युवानं विन्दते पतिम्’ ’

(अथर्ववेद 3:5:18)

अर्थात्-‘कन्या ब्रह्मचर्यपूर्वक वेद-शास्त्रों का अध्ययन कर, विदुषी बनकर अपने सदृश पति का वरण करे।

2-कुलायिनी घृतवती पुरन्धि: स्योने सीद सदने पृथिव्या:।
अभित्वा रुद्रा वसवो गृणन्त्विमा।
ब्रह्म पीपिहि सौभगायाश्विनाध्वर्यू सादयतामिहत्वा।

(यजुर्वेद 14:2)

अर्थात् - हे स्त्री! तुम कुलवती घृत आदि पौष्टिक पदार्थों का उचित उपयोग करने वाली, तेजस्विनी, बुद्धिमती, सत्कर्म करने वाली होकर सुखपूर्वक रहो। तुम ऐसी गुणवती और विदुषी बनो कि रुद्र और वसु भी तुम्हारी प्रशंसा करें। सौभाग्य की प्राप्ति के लिये इन वेदमन्त्रों के अमृत का बार- बार भली प्रकार पान करो। विद्वान् तुम्हें शिक्षा देकर इस प्रकार की उच्च स्थिति पर प्रतिष्ठित कराएँ।

3- आचार्यादणत्वं। —(अष्टाध्यायी 4:1:49)

इस सूत्र पर सिद्धान्त कौमुदी में कहा गया है–

आचार्यस्य स्त्री आचार्यानी पुंयोग इत्येवं आचार्या स्वयं व्याख्यात्री।

अर्थात् -जो स्त्री वेदों का प्रवचन करने वाली हो, उसे आचार्या कहते हैं।

【 अनुष्ठानों को करने का अधिकार 】

1-अपत्यं धर्मकार्याणि शुश्रूषा रतिरुत्तमा ।

(मनुस्मृति 9:28)

अर्थात् -'सन्तानोत्पत्ति और धर्मकार्यों का अनुष्ठान पत्नी के दायित्व के अन्तर्गत आता है।

2-प्रजनार्थं स्त्रियः सृष्टाः सन्तानार्थं च मानवः ।

तस्मात् साधारणो धर्मः श्रुतौ पत्न्या सहोदितः ॥

(मनुस्मृति 9:96)

अर्थात् महिलाओं को संतान की जननी और पुरुष को संतान के जनक के रूप में बनाया गया है। इसलिए यह है कि वेद में धार्मिक संस्कारों को पुरुष और उसकी पत्नी के बीच सामान्य माना गया है।

अतः स्त्रियों के शिक्षा-निषेधपरक विधान मनुस्मृति के मौलिक विधान नहीं हो सकते।

【यज्ञ को करने का अधिकार】

1-''अयज्ञियो वैष योऽपत्नीकः' '

(तैत्तिरीय ब्राह्मण 3:3 :3: 1)

अर्थात् -'पत्नी के बिना यज्ञ करने वाला गृहस्थ यज्ञ के अयोग्य है।'

2-''यद्वै पत्नी यज्ञे करोति तत् मिथुनम्' '

(तैत्तिरीय संहिता 6:2: 1:1)

अर्थात् -'पत्नी यज्ञ में जो अनुष्ठान करती है वह दोनों के (पति-पत्नी के) लिए है।'

3-''जघनार्धो वा एष यज्ञस्य यत्पत्नी' '

(शतपथ ब्राह्मण 1:3:1 :12)

अर्थात् -दोनों वाक्यों का एक ही भाव है कि 'यज्ञ का पूर्व भाग पति है तो उत्तर भाग पत्नी है।' यज्ञ न केवल पति-पत्नी का संयुक्त कर्त्तव्य है अपितु वह दोनों के ऐक्य का प्रतीक है।

【पत्नी को अर्धांगिनी का सम्मान】

1-"अर्धो वा एष आत्मनः यत्पत्नी' '

(तैत्तिरीय ब्राह्मण 3: 3: 3:5)

अर्थ- 'पत्नी पति का आधा भाग है।' जैसे शरीर के आधे भाग की उपेक्षा नहीं की जाती, उसी प्रकार पत्नी की भी सर्वत्र बराबर भागीदारी होती है।

2-"अर्धात्मा वा एष यजमानस्य यत् पत्नी' '

(जैमिनीय ब्राह्मण 1:86)

अर्थ- 'पत्नी, यजमान पति का आधा भाग है। पूर्ण यजमान पति-पत्नी के संयुक्त रूप में कहाता है।'

उपनयन के विषय में लिखा है -

प्रावृतां यज्ञोपवीतिनीम् अभ्युदानयन्
जपेत सोमोऽददत् गन्धर्वाय इति ।"

(गोभिलीय गृहयसूत्र 2:1:19-21)

अर्थ- कन्या को कपड़ा पहने हुए,यज्ञोपवीत धारण किये हुए पति के निकट लाएँ । तथा यह मन्त्र पढ़ें "सोमोऽददत्"

【महर्षि मनु के पत्नी द्वारा यज्ञ तथा वेदाध्यन】

सातवें मनु राजर्षि मनु वैवस्वत (मनु श्रद्धादेव) एक बार अपने महल में पहुंचे तो देखते हैं कि उनकी पत्नी यज्ञानुष्ठान कर रही है और उसमें उच्च स्वर से यजुर्वेद के मन्त्रों का पाठ कर रही है।

' 'तत् पत्नीं यजुर्वदन्तीं प्रत्यपद्यत। तस्याः वाग् द्यां आतिष्ठत्।' '

(काठक ब्राह्मण 3:30 :1)

अर्थ– 'मनु जब महल में पहुंचे तो उनकी पत्नी यज्ञ में यजुर्वेद के मन्त्रों का उच्च स्वर से पाठ कर रही थी। उसकी वाणी आकाश में व्याप्त हो रही थी।'

इससे बढ़कर पत्नी द्वारा यज्ञ करने का स्पष्ट वर्णन क्या हो सकता है?

【 वाल्मीकि रामायण से प्रमाण 】

1-वैदेही शोकसन्तप्ता हुताशनमुपागमत्।

(वाल्मीकि रामायण 5:53 :26)

अर्थात् - तब शोक सन्तप्त सीताजी ने हवन किया।

2-'तदा सुमन्त्रं मन्त्रज्ञा कैकेयी प्रत्युवाच ह।'

(वाल्मीकि रामायण 2 :14 :61)

अर्थात् - वेदमन्त्रों को जानने वाली कैकेयी ने सुमन्त्र से कहा।

3-सा क्षौमवसना हृष्ट नित्यं व्रतपरायणा।

अग्निं जुहोति स्म तदा मन्त्रवत् कृतमंगला॥

(वाल्मीकि रामायण 2 :20 :15)

अर्थात् - वह रेशमी वस्त्र धारण करने वाली, व्रतपरायण, प्रसन्नमुखी, मंगलकारिणी कौशल्या मन्त्रपूर्वक अग्निहोत्र कर रही थी।

【पैतृक सपत्ति में पुत्री का समान अधिकार 】

निरुक्त में, महर्षि यास्क ने दायभाग में पुत्र-पुत्री के समान-अधिकार के विषय में किसी प्राचीन ग्रन्थ का श्लोक उद्‌धृत करके मनु के मत का प्रमाण रूप में उल्लेख किया है। वह श्लोक है-

अविशेषेण पुत्राणां दायो भवति धर्मतः।
मिथुनानां विसर्गादौ मनुः स्वायम्भुवोऽब्रवीत्॥ (निरुक्त 3:4)

अर्थात् -'कानून के अनुसार, दायभाग के विभाजन में, पुत्र-पुत्री में कोई भेद नहीं होता अर्थात् उन्हें समान दायभाग मिलता है।यह विधान, मानवसृष्टि के आरम्भिक काल में मनु स्वायम्भुव ने किया था "

यथैवात्मा तथा पुत्रः पुत्रेण दुहिता समा।
तस्यामात्मनि तिष्ठन्त्यां कथमन्यो धनं हरेत्॥ (मनुस्मृति 9:129)

अर्थात् -'पुत्र अपने आत्मा का ही एक रूप होता है, उस पुत्र के समान ही पुत्री भी आत्मारूप होती है, उनमें कोई भेद नहीं। जब तक आत्मारूप पुत्र और पुत्री जीवित हैं तब तक माता-पिता का धन उन्हें ही मिलेगा, अन्य कोई उसका अधिकारी नहीं है।'

◙ एक अन्य धन-विभाजन में माता और भाई के धन में क्रमशः पुत्र-पुत्रियों और भाई-बहनों का समान भाग वर्णित किया है –

जनन्यां संस्थितायां तु समं सर्वे सहोदराः।
भजेरन् मातृकं रिक्थं भगिन्यश्च सनाभयः॥ (मनुस्मृति 9:192)
सोदर्या विभजेरन् तं समेत्य सहिता समम्।
भ्रातरो ये च संसृष्टा भगिन्यश्च सनाभयः॥ (मनुस्मृति 9.212)

अर्थात् -'माता के देहान्त के पश्चात् सभी सगे भाई और सगी बहनें मातृधन को बराबर बांट लें।इसी प्रकार किसी अविवाहित भाई के मर जाने पर सभी सगे भाई व बहनें मिलकर उसके धन को बराबर बांट लें।'

◙ निरुक्त में इस प्रकार उद्धृत किया गया है-

अविशेषेण पुत्राणां दायो भवति धर्मतः।
मिथुनानां विसर्गादौ मनुः स्वायभुवोऽब्रवीत्॥ (निरुक्त 3:4)

अर्थात्-'सृष्टि के प्रारभ में स्वायभुव मनु ने यह विधान किया है कि धर्म अर्थात् कानून के अनुसार दायभाग (पैतृक सपत्ति) में पुत्र-पुत्री का समान अधिकार होता है।

सनातन धर्म और समानता

◙ गीता के अनुसार ज्ञानी मनुष्य सभी में समरूप परमात्मा को देखते है और किसी से भेदभाव नहीं करते -

विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः।।
(भगवद् गीता 5 :18)

अर्थात् - ज्ञानी महापुरुष विद्या-विनययुक्त ब्राह्मण में और चाण्डाल में तथा गाय हाथी एवं कुत्ते में भी समरूप परमात्मा को देखने वाले होते हैं।

◙ परमेश्वर किसी से भेदभाव नहीं करता-

समोऽहं सर्वभूतेषु न मे द्वेष्योऽस्ति न प्रियः।
(भगवद् गीता 9 :29)

अर्थात् - मैं सम्पूर्ण प्राणियों में समान हूँ। उन प्राणियों में न तो कोई मेरा द्वेषी है और न कोई प्रिय है।

◙ परमेश्वर को वही भक्त पसंद है लोगो से समानता रखते है भेदभाव नहीं करते-

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्र: करुण एव च।
निर्ममो निरहंकार: समदु:खसुख: क्षमी ॥13
संतुष्ट: सततं योगी यतात्मा दृढ़निश्चय: ।
मय्यार्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्त: स मे प्रिय: ॥14
(गीता-12:13-14)

अर्थात् - मेरे लिए वे भक्त प्रिय हैं जो सभी जीवों के प्रति भेदभाव नहीं करते है , जो मित्रवत हैं, और दयालु हैं। वे सम्पत्ति और अहंकार के प्रति आसक्ति से मुक्त होते हैं, सुख-दु:ख में समान , क्षमाशील , सन्तुष्ट हैं। वे आत्म-नियंत्रित में दृढ़ है और मन और बुद्धि में मेरे लिए समर्पित हैं।

◙ परमेश्वर कहता है कि कोई बड़ा छोटा नहीं -

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभाय ।
(ऋग्वेद 5 : 60 : 5)

अर्थात् - परमेश्वर कहता है कि हे संसार के लोगों ! न तो तुममें कोई बड़ा है और न छोटा।तुम सब भाई-भाई हो। सौभाग्य की प्राप्ति के लिए आगे बढ़ो।

◙ सबमें एक जैसी आत्मा इसलिए भेदभाव न करे -

यस्मिन्त्सर्वाणि भूतान्यात्मैवाभूद्विजानत:
तत्र को मोहः कः शोक एकत्वमनुपश्यत:

(यजुर्वेद 40 : 7)

अर्थात् - जो सभी आत्माओ में अपनी ही आत्मा को देखते हैं, उन्हें कहीं पर भी शोक या मोह नहीं रह जाता क्योंकि वे उनके साथ अपनेपन की अनुभूति करते हैं ।

◙ महर्षि याज्ञवल्क्य सभी को नमस्कार करते है क्युकी सबमे वह ईश्वर है-

ईश्वरो जीवकलया प्रविष्टो भगवानिति ।
प्रणमेद्ण्डवद्भूमावाश्वचण्डालगोखरम् ॥ ४॥
(याज्ञवल्क्य उपनिषद -4)

अर्थात् - ईश्वर को यह समझकर कि वह जीव के रूप में इस संसार के समस्त प्राणियों में स्थित है, घोड़े, चाण्डाल, गौ तथा गधे आदि सभी को दण्डवत् प्रणाम करता है ॥

◙ महोपनिषद् में वर्णित अद्भुत मानवीयता को पढ़िए -

अयं बन्धु-रयं नेति गणना लघुचेतसाम् ।
उदारचरितानां तु वसुधैव कुटुम्बकम्॥
(महा उपनिषद - 4 : 71)

अर्थात् - यह अपना बन्धु है और यह अपना बन्धु नहीं है, इस तरह की गणना छोटे चित्त वाले लोग करते हैं। उदार हृदय वाले लोगों की तो सम्पूर्ण धरती ही परिवार है।

◙ महाभारत में भी लिखा है प्रत्येक मनुष्य की आत्मा एक जैसी है इसलिए द्वेष न रखना -

नात्मनोऽस्ति प्रियतरः पृथिवीमनुसृत्य ह ।
तस्मात्प्राणिषु सर्वेषु दयावानत्मवान् भवेत् ।।
(महाभारत :अनुशासन पर्व 21:47)

अर्थात् - इस भूमण्डल पर आत्मा से बढ़कर कोई प्रिय पदार्थ नहीं है, अतः मनुष्य को चाहिए कि प्राणियों पर दया करे , द्वेष न रखे और सबको अपनी ही आत्मा समझे।

◙ ईश्वर संहिता भी सभी को एक सामान बताती है-

सर्वे समानास : चतवारो गोत्रप्रवरवर्जिता : ।
उत्कर्षो न-अपाकर्ष: च जातितस तेषु सम्मत:॥
(ईश्वर संहिता 21:40)

अर्थात् - गोत्र , वंश, या नस्ल ऐसे कोई भेद नहीं होता है ; चारों वर्ण (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र) चारों समान हैं। जाति का कोई उच्च और निम्न नहीं है।

वैष्णव धर्म और वर्ण व्यवस्था

◙ आरम्भ में सभी एक ही वर्ण के थे -

आदौ कृतयुगे वर्णो नृणां हंस इति स्मृत: ।
कृतकृत्या: प्रजा जात्या तस्मात् कृतयुगं विदु: ॥ १० ॥
(श्रीमद भागवतम 11.17.10)

अर्थात् -श्रीकृष्ण ने कहा -प्रारंभ में, सत्य-युग में, केवल एक सामाजिक वर्ग था , एक ही वर्ण था जिसे हंस कहा जाता था, जिससे सभी मनुष्य संबंधित हैं। उस युग में सभी लोग भगवान के अनन्य भक्त होते थे, और इस प्रकार विद्वान इस प्रथम युग को कृतयुग कहते हैं, या वह युग जिसमें सभी धार्मिक कर्तव्य पूरी तरह से पूरे होते हैं।

एक एव पुरा वेद: प्रणव: सर्ववाङ्मय: ।
देवो नारायणो नान्य एकोऽग्निर्वर्ण एव च ॥ ४८ ॥
(श्रीमद भागवतम -9: 14: 48)

अर्थात् -"पहले सर्व वांग्मय प्रणव (ओंकार) ही एक मात्र वेद था। एकमात्र देवता सर्वव्यापी नारायण थे और कोई नहीं। एक मात्र लौकिक अग्नि ही अग्नि थी और एकमात्र हंस ही एक वर्ण था।

◙ 1 वर्ण से 4 वर्णों में कर्मानुसार विभाजन –

न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राहममिदं जगत्।
ब्रहमणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम्॥
(महाभारत- शान्तिपर्व 188:10)

अर्थात्-सारा मनुष्य-जगत् एक ब्रह्म की सन्तान है। वर्णों में कोई भेद नहीं है। ब्रह्मा के द्वारा रचा गया यह सारा संसार पहले सम्पूर्णतः ब्राह्मण ही था। मनुष्यों के कर्मों द्वारा यह वर्णों में विभक्त हुआ।

विप्रक्षत्रियविट्शूद्रा मुखबाहूरुपादजा: ।
वैराजात् पुरुषाज्जाता य आत्माचारलक्षणा: ॥ १३ ॥
(श्रीमद भागवतम -11.17.13)

अर्थात् -श्रीकृष्ण ने कहा -ब्राह्मण नामक वर्ण के मुखमण्डल के गुणों के आधार पर प्रथम वर्ण का 'ब्राह्मण वर्ण' नाम रखा गया , भुजा 'क्षत्रिय वर्ण' को बनाया गया अर्थात् भुजाओं के गुणों के अनुसार 'राजन्य=क्षत्रिय वर्ण' नाम रखा गया जो 'वैश्य वर्ण' है, वह इसका मध्यभाग या जंघा रूप कहा गया अर्थात् पेट आदि मध्यभाग के गुणों के अनुसार 'वैश्य वर्ण' नाम रखा गया 'शूद्रवर्ण' पैरों की तुलना से निर्मित हुआ । प्रत्येक सामाजिक विभाजन को उसके विशेष कर्तव्यों और व्यवहार और लक्षणों के अनुसार पहचाना गया।

◙ चारो वर्णों को जो हंश नाम के वर्ण से निकले उनको गुणों और कर्मो के अनुसार विभाजित किया गया इसकी पुष्टि भगवद गीता भी करती है -

ब्राह्मणक्षत्रियविशां शूद्राणां च परंतप।
कर्माणि प्रविभक्तानि स्वभावप्रभवैर्गुणैः।।
(श्रीमद भगवद गीता 18:41)

अर्थात् -हे परंतप ब्राह्मण? क्षत्रिय? वैश्य और शूद्रों के कर्म स्वभाव से उत्पन्न हुए तीनों गुणों के द्वारा विभक्त किये गये हैं।

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागश: ।
तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम् ।।13।।
(श्रीमद भगवद गीता 4:13)

अर्थात् -ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र- इन चार वर्णों का समूह, गुण और कर्मों के विभागपूर्वक मेरे द्वारा रचा गया है। इस प्रकार उस सृष्टि रचनादि कर्म का कर्ता होने पर भी मुझ अविनाशी परमेश्वर को तू वास्तव में अकर्ता ही जान ।

◙ चारो वर्णों के कर्तव्य -

शमो दमस्तपः शौचं क्षान्तिरार्जवमेव च।
ज्ञानं विज्ञानमास्तिक्यं ब्रह्मकर्म स्वभावजम्।।
(श्रीमद भगवद् गीता -18:42)

अर्थात् -मनका निग्रह करना इन्द्रियों को वशमें करना; धर्मपालन के लिये कष्ट सहना; बाहर-भीतर से शुद्ध रहना; दूसरों के अपराध को क्षमा करना; शरीर, मन आदिमें सरलता रखना; वेद, शास्त्र आदि का ज्ञान होना; यज्ञविधि को अनुभव में लाना; और परमात्मा, वेद आदि में आस्तिक भाव रखना -- ये सब-के-सब ब्राह्मण के स्वाभाविक कर्म हैं।

शौर्यं तेजो धृतिर्दाक्ष्यं युद्धे चाप्यपलायनम्।
दानमीश्वरभावश्च क्षात्रं कर्म स्वभावजम्।।
(श्रीमद भगवद् गीता -18:43)

अर्थात् -शूरवीरता, तेज, धैर्य, प्रजा के संचालन आदि की विशेष चतुरता, युद्ध में कभी पीठ न दिखाना, दान करना और शासन करने का भाव -- ये सबके सब क्षत्रिय के स्वाभाविक कर्म हैं।

कृषिगौरक्ष्यवाणिज्यं वैश्यकर्म स्वभावजम्।
परिचर्यात्मकं कर्म शूद्रस्यापि स्वभावजम्।।
(श्रीमद भगवद् गीता -18:44)

अर्थात् - कृषि, गौपालन तथा वाणिज्य - ये वैश्य के स्वाभाविक कर्म हैं, और शूद्र का स्वाभाविक कर्म है परिचर्या अर्थात् नौकरी करना।।

◙ भेदभाव रहित , दयालु रहना ही मनुष्यता -

तप्यन्ते लोकतापेन साधवः प्रायशो जनाः ।
परमाराधनं तद्धि पुरुषस्याखिलात्मनः ॥४४॥
(श्रीमद भागवतम -8.7.44)

अर्थात् -सज्जन पुरुष दूसरों को दुखी देखकर स्वयं दयार्द्र हो जाते हैं। इस संसार के समस्त प्राणियों की सेवा ही उनका परम आराधन होता है।

विद्याविनयसंपन्ने ब्राह्मणे गवि हस्तिनि।
शुनि चैव श्वपाके च पण्डिताः समदर्शिनः।।
(श्रीमद भगवद् गीता - 5 :18)

अर्थात् - ज्ञानी महापुरुष विद्या-विनययुक्त ब्राह्मण में और चाण्डाल में तथा गाय हाथी एवं कुत्ते में भी समरूप परमात्मा को देखने वाले होते हैं।

अद्वेष्टा सर्वभूतानां मैत्र: करुण एव च।
निर्ममो निरहंकार: समदु:खसुख: क्षमी ॥13
संतुष्ट: सततं योगी यतात्मा दृढ़निश्चय: ।
मय्यार्पितमनोबुद्धिर्यो मद्भक्त: स मे प्रिय: ॥14
(श्रीमद भगवद् गीता -12:13-14)

अर्थात् - मेरे लिए वे भक्त प्रिय हैं जो सभी जीवों के प्रति भेदभाव नहीं करते है , जो मित्रवत हैं, और दयालु हैं। वे सम्पत्ति और अहंकार के प्रति आसक्ति से मुक्त होते हैं, सुख-दु:ख में समान , क्षमाशील , सन्तुष्ट हैं। वे आत्म-नियंत्रित में दृढ़ है और मन और बुद्धि में मेरे लिए समर्पित हैं।

◙ परमेश्वर प्रत्येक प्राणी में है –

यच्चापि सर्वभूतानां बीजं तदहमर्जुन ।
न तदस्ति विना यत्स्यान्मया भूतं चराचरम् ।।
(श्रीमद भगवद् गीता 10:39)

अर्थात् - हे अर्जुन ! मैं सम्पूर्ण प्राणियों का उत्पत्ति का बीज हूँ, क्योंकि चर और अचर कोई भी ऐसा पदार्थ नहीं है, जो मुझसे रहित हो ।

अहमात्मा गुडाकेश सर्वभूताशयस्थित: |
अहमादिश्च मध्यं च भूतानामन्त एव च ||
(श्रीमद भगवद् गीता 10:20)

अर्थात् - हे अर्जुन, मैं सभी जीवों के हृदय में विराजमान हूं। मैं सभी प्राणियों का आरंभ, मध्य और अंत हूँ।

◙ जात पात न पूछो भक्त की -

अहो बत श्वपचोऽतो गरीयान्य ज्जिह्वाग्रे वर्तते नाम तुभ्यम् ।
तेपुस्तपस्ते जुहुवु: सस्नुरार्या ब्रह्मानूचुर्नाम गृणन्ति ये ते ॥ ७ ॥
(श्रीमद भागवतम - 3:33:7)

अर्थात् -'अहो! वह चाण्डाल भी सर्वश्रेष्ठ है, जिसकी जीभ के अग्रभाग पर आपका नाम विराजता है। जो श्रेष्ठ पुरुष आपका नाम उच्चारण करते हैं, उन्होंने तप, हवन, तीर्थस्नान, सदाचार का पालन और वेदाध्ययन- सब कुछ कर लिया।'

विप्राद् द्विषड्गुणयुतादरविन्दनाभ पादारविन्दविमुखात् श्वपचं वरिष्ठम् ।
मन्ये तदर्पितमनोवचनेहितार्थ प्राणं पुनाति स कुलं न तु भूरिमान: ॥ १० ॥
(श्रीमद भागवतम -7.9.10)

अर्थात् -यदि एक ब्राह्मण में सभी बारह गुणों से युक्त हैं [जैसा कि सनत-सुजाता नामक पुस्तक में कहा गया है] लेकिन वह भक्त नहीं है और भगवान के चरण कमलों से विमुख है, तो उससे निश्चित रूप से एक चाण्डाल श्रेष्ठ है जो सब कुछ - मन, शब्द, कार्य, धन और जीवन - सर्वोच्च भगवान को समर्पित कर दिया है। ऐसा भक्त ऐसे ब्राह्मण से बेहतर है क्योंकि भक्त अपने पूरे परिवार को शुद्ध कर सकता है, जबकि तथाकथित ब्राह्मण झूठी

प्रतिष्ठा की स्थिति और बड़प्पन का अभिमान रखने वाला खुद को भी शुद्ध नहीं कर सकता है।

चाण्डालोऽपि सुनेः श्रेष्ठो विष्णुभक्तिपरायणः।
विष्णुभक्तिविहीनस्तु द्विजोऽपि श्वपचोऽधमः ।।
(पद्मपुराण)

अर्थात् -'हरिभक्ति में लीन रहने वाला चाण्डाल भी मुनि से श्रेष्ठ है, और हरिभक्ति से रहित ब्राह्मण चाण्डाल से भी अधम है।'

अवैष्णवाद् द्विजाद् विप्र चाण्डालो वैष्णवो वरः।
सगणः श्वपचो मुक्तो ब्राह्मणो नरकं ब्रजेत् ।।
(ब्रह्मवैवर्त पुराण:ब्रह्माखंड- 11:39)

अर्थात् -'अवैष्णव ब्राह्मण से वैष्णव चाण्डाल श्रेष्ठ है; क्योकि वह वैष्णव चाण्डाल अपने बन्धुगणों सहित भव-बन्धन से मुक्त हो जाता है और वह अवैष्णव ब्राह्मण नरक में पड़ता है।'

अपार्थकं प्रभाषन्तः शूद्रा भागवता इति।
न शूद्रा भगवद्भक्ता विप्रा भागवताः स्मृताः।।
(महाभारत आश्वमेधिकपर्व 118 : 32)

अर्थात् -'यदि भगवद्भक्त शूद्र है तो वह शूद्र नहीं, परमश्रेष्ठ ब्राह्मण है। वास्तव में सभी वर्णों में शूद्र वह है, जो भगवान की भक्ति से रहित है।'

शूद्रं वा भगवद्भक्तं निषादं श्वपचं तथा ।
द्विजजाति समंमन्यो न याति नरकं नरः ॥
(गरुडपुराण 1:230:49)

अर्थात् -जो व्यक्ति शूद्रों, निषादों या चण्डालों के परिवार में उत्पन्न भगवान के भक्तों को द्विज सामान नहीं मानता वो निश्चित ही नरक जाता है।

शूद्रं वा भगवद्भक्तं निषादं श्वपचं तथा ।

वीक्षते जातिसामान्यात् स याति नरकं ध्रुवम् ॥

(हरिभक्ति विलास 10:119)

अर्थात् - जो व्यक्ति शूद्रों, निषादों या चण्डालों के परिवार में उत्पन्न भगवान के भक्तों को उस विशेष जाति का मानता है, वह निश्चय ही नरक जाता है।

नास्ति तेषु जातिविद्यारूपकुलधन क्रियादिभेदः ॥ ७२ ॥

(नारद भक्तिसूत्र 72)

अर्थात् - भक्तों में जाति, विद्या, रूप, कुल, धन और क्रियादिका भेद नहीं है।

आनन्योन्यधिक्रियते पारम्पयत् सामान्यवत् ॥ ७८

(शाण्डिल्य भक्तिसूत्र 78)

अर्थात् - भक्ति में उच्च जाति से लेकर चाण्डालादि नीच जातितक के मनुष्यों का समान रूप से अधिकार है। ठीक उसी तरह जैसे अहिंसा, सत्य, अस्तेय आदि सामान्य धर्मो के ज्ञान और अनुष्ठान में सबका समान अधिकार है गुरु तथा शास्त्रोंके उपदेश को परम्परा से यही बात सिद्ध होती है।

उर्ध्वपुण्ड्रमृजुं सौम्यं सचिह्नं धारयेद्यदि ।

स चण्डालोऽपि शुद्धात्मा पूज्य एव सदा द्विजैः ॥

(पद्मपुराण पाद्मोत्तरखण्ड 39 अध्याय)

अर्थात् - चाण्डाल कुल में उत्पन्न व्यक्ति भी यदि (एकादश अङ्गोंमें) तिलक चिह्न के साथ ललाट में सरल और सुन्दर ऊर्द्ध्वपुण्ड्र धारण करते हैं, तो वे भी शुद्धात्मा एवं ब्राह्मणों के द्वारा निश्चय ही सर्वदा पूज्य हैं ।

सकृत् प्रणामी कृष्णस्य मातुः स्तन्यं पिबेत्र हि ।

हरिपादे मनो येषां तेभ्यो नित्यं नमो नमः ॥

पुक्कसः श्वपचो वापि ये चान्ये म्लेच्छजातयः ।

तेऽपि वन्द्या महाभागा हरिपादैकसेवकाः।।

(पद्मपुराण-स्वर्गखण्ड 24 अध्याय)

अर्थात् - जिन्होंने एक बार भी श्रीकृष्ण को सब प्रकार के अहङ्कारों का परित्याग कर प्रणाम किया है उसको पुनः मातृ स्तन पान करने की जरूरत नहीं है। अधम चाण्डाल, कुक्कुरभोजी चाण्डाल यहाँ तक कि म्लेच्छ जातियाँ भी यदि एकान्त भाव से हरिपादपद्मों में शरण ग्रहणकर सेवा करती हैं, तो वे भी महाभाग और पूजा के योग्य हैं ।

म्लेच्छकुल में उत्पन्न वैष्णव को सर्वश्रेष्ठ 'ब्राह्मण गुरु रूप में निर्देश -

आचार्य कहेन, - तुमि ना वासिह भय ।

सेइ आचरिब जेइ शास्त्रमत हय ॥

तुमि खाइले हय कोटि-ब्राह्मण भोजन ।

एत बलि' श्राद्धपात्र कराइल भोजन ॥

(चैतन्य चरितामृत 3:219-220)

अर्थात् - श्रीअद्वैताचार्य जी ने श्रीहरिदास ठाकुर को कहा- आप भयभीत न हों मैं वही करूँगा जो शास्त्र कहते हैं। आपको भोजन कराने से करोड़ों-करोड़ों ब्राह्मणों को भोजन कराना हो जायेगा। ऐसा कहकर उन्होंने श्रीहरिदास ठाकुर को भगवत् निवेदित उत्तम श्राद्ध- पात्र प्रदान किया और उन्हें भोजन कराया ॥

◙ वैष्णव परम संहिता में शूद्रों के अधिकार –

न मन्त्रोच्चारणा दोषः कर्मयोगस्य सम्मतः ।

तीव्रभक्तो भवे द्य स्तु विद्या धर्मरतः शुचिः॥

(परम संहिता 17:16)

अर्थात् - शूद्र (अशिक्षित) उसके श्रवण में मन्त्र जपने में कोई पाप नहीं है और न ही उसके द्वारा किए गए कर्म-योग का कोई दोष है। यदि कोई शूद्र उत्साही भक्त है, जो सीखने और

अच्छे आचरण के लिए उत्सुक है, और शुद्ध है, भले ही वह शूद्र हो, उसे हर चीज में भाग लेने की अनुमति देता है, बशर्ते वह गलती करने के लिए उत्तरदायी न हो।

शूद्रंतु तन्त्रजैमन्त्रै दासन्तं नामच स्मृतम् ।
उपवीतं च वस्त्रं च गुणमन्त्रेण योजयेत् ॥
(परम संहिता 17:14)

अर्थात् - शूद्रों के लिए मंत्रों का प्रयोग तंत्रों में निर्धारित मंत्रों का होना चाहिए, और उन्हें दास से समाप्त होने वाले नाम दें (जैसे माधवदास , रामदास बृजदास आदि जैसा की आज वैष्णव पुजारी अपने नाम में लगाते है)। उन्हें पवित्र धागा जनेऊ (उपनयन) ऊपर का कपड़ा और गुण-मंत्र का पाठ दें।

◙ ब्राह्मण का शरीर किस लिए है –

‘ब्राह्मणस्य हि देहोऽयं क्षुद्रकामाय नेष्यते ।
कृच्छ्राय तपसे चेह प्रेत्यानन्तसुखाय च ॥ ४२ ॥
(श्रीमद भागवतम -11:17:42)

अर्थात् - ब्राह्मण का यह शरीर विलासिता करने, धन बटोरने या राज्य करने जैसे छोटे कामों के लिए नहीं है। यह तो जीवन में घनघोर तप के लिए और शरीरपात होने पर सच्चिदानन्द की प्राप्ति के लिए है।

◙ अन्य पुराण भी यही मत रखते है-

सच्छ्रोत्रियकुले जातो अक्रियो नैव पूजितः ।
असत्क्षेत्रकुले पूज्यो व्यासवैभान्तकौ यथा ॥
क्षत्रियाणां कुले जातो विश्वामित्रोऽस्ति मत्समः ।

वेश्यापुत्रो वशिष्ठश्च अन्ये सिद्धा द्विजातयः ।।

यस्य तस्य कुले जातो गुणवानेव तैर्गुणैः ।

(पद्मपुराण - सृष्टिखण्ड-अध्याय 43)

अर्थात् - श्रीब्रह्मा जी कहते हैं - सत् श्रोत्रिय कुलमें उत्पन्न सदाचार रहित व्यक्ति कभी भी पूज्य नहीं होता। असत् क्षेत्र और कुलमें आविर्भूत व्यास और वैभान्तक मुनि पूजनीय हैं; क्षत्रिय कुल में उत्पन्न विश्वामित्र भी मेरे समान हैं। वेश्याके यहाँ उत्पन्न वशिष्ठ एवं ब्राह्मण गुणोंसे युक्त अन्य व्यक्ति भी ब्राह्मण कहे जाते हैं। वह किसी भी कुल में जन्म ग्रहण क्यों न करें, गुणवान् अपने गुणों द्वारा ही साक्षात् ब्रह्ममय ब्राह्मण है।

तत्वदर्शन सम्पन्नः समिधशिस्तितः ।

सत्यब्रह्मविदः शान्तः सर्वशास्त्रेषु निष्ठितः ।।

(भविष्य पुराण : ब्राह्मपर्व - 33 श्लोक 2,6)

अर्थात् -जो तत्वदर्शी समाधि संपन्न हो और जो ब्रह्म का ज्ञाता हो और सभी शास्त्रों में निष्ठा रखता हो वह ब्राह्मण है ।

यत्र वा तत्र वा वर्ण उत्तमाधममध्यमाः ।

निवृत्तः पापकर्मेम्यों ब्राह्मण: स विधीयते ।।

शूद्रीषपि शीलसम्पन्नह ब्राह्मणादधिको भवेत् ।

ब्राह्मण विगताचार: शृद्राद्धीनतरों भवेत्।।

(भविष्य पुराण : ब्रह्मपर्व -44 श्लोक 30-31)

अर्थात् -तदनुसार जिस किसी वर्ण में उत्तम, मध्यम या अधम कोई भी मनुष्य पाप कर्म न करे वह ब्राह्मण है। क्योंकि अच्छे शीलवाला शूद्र ब्राह्मण से उत्तम बताया गया है और आचार भ्रष्ट ब्राह्मण शूद्र से भी हीन कहा गया है ।

यद्येका स्फुटमेव जातिरपरा कृत्यात्परं भेदिनी।

यद्वा व्याहृतिरिकतामधिगता यच्चान्यधर्म ययो ।॥

(भविष्य पुराण : ब्रह्मपर्व - 44 श्लोक 33)

अर्थात् -मानव जाति एक ही है किन्तु वर्णो का निर्माण भिन्न भिन्न कर्मो द्वारा किये गया है इसलिए व्यवहार में यह मानव जाति एक है केवल कर्मों में भिन्नता है ।

सामग्रय़नुष्ठनगणौः समग्रः शूद्रायतः सन्ति समाद्विजानाम्।
तन्माद्विशेषो द्विज शूद्रनाम्नोनाध्यात्मिको बाह्य निमित्त को वा ॥
((भविष्य पुराण : ब्रह्मपर्व - 41:29)

अर्थात् -क्योंकि सम्मान्य शूद्र और सम्मान्य ब्राह्मण ये दोनों सामग्री , अनुष्ठान में समान ही हैं, इसलिये ब्राह्मण और शूद्र में बाह्य या आध्यात्मिक कोई भेद नहीं है।

वैष्णव धर्म और वर्ण परिवर्तन -

सभी पवित्र हिंदू शास्त्र वर्ण परिवर्तन का पूर्ण समर्थन करते हैं। आलवार , गौड़िया और रामानंदी जैसे वैष्णव सहमत हैं कि वर्ण को बदला जा सकता है।

◙ यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसो वर्णाभिव्यञ्जकम् ।
यदन्यत्रापि दृश्येत तत्तेनैव विनिर्दिशेत् ॥ ३५ ॥
(श्रीमद भागवतम -7.11.35)

अर्थात् –नारद जी ने कहा यदि कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र होने के लक्षण दिखाता है, जैसा कि वर्णित है, भले ही वह एक अलग वर्ग में प्रकट हुआ हो, उसे वर्गीकरण के उन लक्षणों के अनुसार स्वीकार किया जाएगा ।

=>उदाहरण :-

1- धृष्टाद् धार्ष्टमभूत् क्षत्रं ब्रह्मभूयं गतं क्षितौ ।
नृगस्य वंश: सुमतिर्भूतज्योतिस्ततो वसु: ॥ १७ ॥

(श्रीमद भागवतम - 9.2.17)

अर्थात् – मनु के पुत्र धृष्ट से धार्ष्ट नामक एक क्षत्रिय उत्पन्न हुवे,बाद में उन्होंने ब्राह्मणों का स्थान प्राप्त किया। नृग से सुमति उत्पन्न हुई। सुमति से भूतज्योति और भूतज्योति से वासु उत्पन्न हुवे।

2-नाभागो दिष्टपुत्रोऽन्य: कर्मणा वैश्यतां गत: ।
भलन्दन: सुतस्तस्य वत्सप्रीतिर्भलन्दनात् ॥ २३ ॥
(श्रीमद भागवतम - 9.2.23)

अर्थात् –दिष्ट का पुत्र नाभाग था वह अपने कर्म से वैश्य हो गया उसका पुत्र भलंदन हुवा और उससे वत्सप्रीति हुवा ।

3-यवीयांस एकाशीतिर्जायन्तेया: पितुरादेशकरा महाशालीना
महाश्रोत्रिया यज्ञशीला: कर्मविशुद्धा ब्राह्मणा बभूवु: ॥ १३ ॥
(श्रीमद भागवतम - 5.4.13)

अर्थात् – राजा ऋषभदेव और जयन्ती के 81 पुत्र अपने पिता के आदेश के अनुसार, वे अपनी गतिविधियों में वैदिक अनुष्ठानों को किया और वेदाध्यन किया। इस प्रकार वे सभी पूर्णतः योग्य ब्राह्मण बन गए ।

4-पृषध्रस्तु मनुपुत्रो गुरुगोवधाच्छूद्रत्वमगमत् ॥ १७॥
(विष्णु पुराण 4.1.17)

अर्थात् – मनु का पृषध्र नामक पुत्र गुरु की गौ का वध करने के कारण क्षत्रिय से शूद्र हो गया ।

5-एते क्षत्रप्रसूता वै पुनश्चाङ्गिरसा: स्मृता:।
रथीतराणां प्रवरा: क्षत्रोपेता द्विजातय: ॥ १०॥
(विष्णु पुराण 4.2.10)

अर्थात् – रथीतर के वंशज क्षत्रिय की संतान होते हुए भी आंगिरस कहलाये; अत: वे क्षत्रोपेत ब्राह्मण हुए ।

6-गृत्समदस्य शौनकश्चातुर्वर्ण्यप्रवर्तयिताभूत्॥

(विष्णु पुराण 4.8.6)

अर्थात् – क्षत्रिय गृत्समद का पुत्र शौनक चा्तुर्वर्ण्य का प्रवर्तक ब्राह्मण हुआ ।

7-पुत्रोगृत्समद्स्यापि शुनको यस्य शौनकाः।
ब्राह्मणः क्षत्रियाश्चैव वैश्याः शूद्रास्तथैवच॥

(हरिवंश पुराण- 1 . 29 . 8)

अर्थात् – गृत्समद के पुत्र शुनक हुए, जिससे शौनक-वंश का विस्तार हुआ । शौनक-वंश में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी वर्णो के लोग हुए।

◙ ऐतिहासिक उदाहरण -

महर्षि ऐत्रेय महिदास : परंपरा के अनुसार उनकी माता 'इतरा' नाम की दासी थीं। इस ऋषि को ऐत्रेय ब्राह्मण के संकलन का श्रेय दिया जाता है।

ऋषिका लोपामुद्रा: यह विदर्भ की एक क्षत्रिय राजकुमारी थीं, जिन्होंने महर्षि अगस्त्य से विवाह किया था। यह ऋग्वेद के कुछ श्लोकों की द्रष्टा हैं। इनके और महर्षि अगस्त्य के बीच कई संपादन संवाद पुराणों में दर्ज हैं।

महर्षि विश्वामित्र: यह 'विश्वरथ' नाम के क्षत्रिय थे। इनको 'गायत्री मंत्र' की सर्वोत्कृष्टता को प्रकट करने का श्रेय दिया जाता है। महर्षि विश्वामित्र ने अपनी आध्यात्मिक ज्ञान के कारण ब्राह्मणत्व को प्राप्त किया।

महर्षि वेद व्यास: यह पाराशर ऋषि से सत्यवती नाम की एक मछुआरे-महिला के पुत्र थे। इनका जन्मदिन 'गुरु-पूर्णिमा' के रूप में मनाया जाता है। महाभारत और कई अन्य सनातन ग्रंथों के संकलन का श्रेय इन्हें ही दिया जाता है।

महर्षि मातंग: यह एक शूद्र माता और एक वैश्य पिता के पुत्र थे। असल में, चांडालों को अक्सर (वराह पुराण 1.139.91) जैसे अंशों में 'मतंग' के रूप में संबोधित किया जाता है।

महर्षि वाल्मीकि: यह ऋषियों के वंशज थे लेकिन चांडाल बन गए थे (सामाजिक बहिष्कार कर दिया गया)चांडाल रत्नाकर नाम दिया गया था, क्योंकि इन्होने हत्या की और राजमार्ग डकैती की थी। प्रजापति ब्रहमा द्वारा इनका सुधार किया गया और दिव्य ऋषि नारद से प्रेरित होकर इन्होने हिंदू महाकाव्य सर्वोत्कृष्ट- रामायण रचना किया ।

ऋषिका सुलभा मैत्रेयी: यह एक क्षत्रिय महिला थीं जिन्होंने ऋग्वेद की शाखा सौलभा को प्रख्यापित किया था

। उनकी गिनती ऋग्वेद के उन श्रद्धेय आचार्यों में होती है जिनके लिए कौशिकी ब्राहमण जैसे ग्रंथों में सम्मान दिया गया है। सौलभा ब्राहमण अब खो गया है, लेकिन काशिका में नाम का उल्लेख किया गया है। विदेह के राजा जनक के साथ ऋषिका सुलभा का आध्यात्मिकता पर संवाद है महाभारत के शांति पर्व में दर्ज है।

भक्त नम्मालवर: आलवार वैष्णव संतों में सबसे प्रमुख, ये शूद्र माता पिता की संतान थे। इनका जन्म अलवारथिरुनागिरि (कुरुगुर) 3059 ईसा पूर्व में हुवा था । नम्मलवार को बारह अलवरों की पंक्ति में पांचवां माना जाता है। उन्हें वैष्णव परंपरा का एक महान रहस्यवादी माना जाता है। उन्हें बारह अलवरों में सबसे महान भी माना जाता है और नलयिर दिव्य प्रबंध में 4000 श्लोकों में से उनका योगदान 1352 श्लोकों में है । नाम्मलवार ने चार ग्रन्थ की रचना की हैं । वे इस प्रकार है -

तिरुविरुत्तम(ऋग वेद सामान)

तिरुवासिरियम (यजुर वेद सामान)

पेरिय तिरुवन्दादी (अथर्व वेद सामान)

तिरुवाय्मोळि (साम वेद सामान)

इन्हे “वेदम तमिल सेय्द मारन” नाम से भी सम्बोधित किया जाता हैं । इसका अर्थ हैं की संस्कृत वेदों का सारार्थ तमिल प्रभंधा में अनुग्रह करने वाले मारन । अन्य आल्वारों के प्रभंध वेदों के अंग (जैसे शिक्ष, व्याकरण इत्यादि) माने जाते हैं और तिरुवाय्मोळि को 4000 दिव्य पशुरो का सार संग्रह माना जाता हैं।

संत रविदास: वे एक मोची थे, और इसलिए शूद्र मूल के थे। उन्होंने भक्ति आंदोलन को आगे बढ़ाया इनकी 16 रचनाओं को आदि ग्रंथ- सिख ग्रंथ में शामिल किया गया था।

संत मीरा: यह मेवाड़ की एक राजपूत क्षत्रिय राजकुमारी थीं और उन्होंने अपना जीवन भगवान कृष्ण की सेवा में समर्पित कर दिया। भगवान कृष्ण को संबोधित उनकी सुंदर काव्य रचनाएँ हैं: जो आज तक हिंदुओं द्वारा बड़े उत्साह के साथ पाठ किया जाता है।इन्होने वैष्णव मत का प्रचार प्रसार किया।

स्वामी विवेकानंद: आधुनिक हिंदू धर्म के अग्रणी सुधारकों में से एक, वह बंगाल की कायस्थ उपजाति के थे । इन्होने अमेरिका और यूरोप में वेदांत का संदेश फैलाया और उनके लेखन और भाषण "द कलेक्टेड राइटिंग्स ऑफ़ स्वामी विवेकानंद" में निहित हैं । इन्होने रामकृष्ण मिशन- एक धार्मिक संगठन की स्थापना की अपने गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस की शिक्षाओं का प्रचार-प्रसार किया। धर्मांतरित हुवे लोगो की घर वापसी का काम विवेकानंद ने अपने धार्मिक संगठन रामकृष्ण मिशन द्वारा करवाया।

संत चोखामेला : यह एक महार, मराठी भक्ति आंदोलन में 14 वीं शताब्दी की एक प्रमुख हस्ती हैं। वे संत नामदेव के शिष्य थे, स्वयं एक शूद्र और भगवान विट्ठल के प्रबल भक्त थे। उन्होंने कई प्रसिद्ध अभंग लिखे जो भगवान विट्ठल (कृष्ण) को समर्पित भक्ति कविता हैं।

संत गुरु घासी दास : इनका जन्म रायपुर, छत्तीसगढ़ (1756–1850) में निम्न जाति के परिवार में हुआ था। दलित संत गुरु घासी दास जनता को हिंदू धर्म के सतनामी संप्रदाय का प्रचार किया और छत्तीसगढ़ में सतनामी संप्रदाय की स्थापना की।इन्होने हिन्दू धर्म त्याग कर

अन्य धर्म अपना लिए आदिवासी हिन्दुओ की घर वापसी करवाई । उनके काम के परिणामस्वरूप राज्य में कई दलित और बहिष्कृत समुदायों का सामाजिक और धार्मिक उत्थान हुआ।

संत बलराम हादी : इनका जन्म 18 वीं शताब्दी में हुआ , बलराम हादी ने बंगाल के नादिया क्षेत्र में बलहादी/बलरामी संप्रदाय की स्थापना की। वह हादी निम्न जाति के थे। इनके ज्ञान के कारण लोगो ने इन्हे राम का अवतार मान लिया। उन्होंने जिस धर्म का प्रचार किया वह गृहस्थों के लिए था और हादी, डोम, बगदी, मुची, बेडे जैसे निम्न पिछड़ी जातियां अनुयायी थे और यहां तक कि मुसलमानों के बीच भी इनको प्रसिद्धि मिली और वह के मुस्लिम भी इनके अनुयायी बने। इन्होने जातिवाद का विरोध किया और मुक्ति प्राप्त करने के लिए भक्ति और तपस्वी के मार्ग की वकालत की।

कलियुग में वर्ण व्यवस्था की दुर्गति -

शुकदेव गोस्वामी जी ने श्रीमद भागवतम में कलियुग में होने वाले चीज़ो के बारे में बताते हुवे कहा है -

दाम्पत्येऽभिरुचिर्हेतुर्मायैव व्यावहारिके ।
स्त्रीत्वे पुंस्त्वे च हि रतिर्विप्रत्वे सूत्रमेव हि ॥ ३ ॥
(श्रीमद भागवतम -12 : 2 : 3)

अर्थात् –केवल बाहरी चमड़े के आकर्षण के कारण स्त्री और पुरुष एक साथ रहेंगे, और व्यापार में सफलता छल पर निर्भर करेगी। स्त्रीत्व और पुरुषत्व का आंकलन किसी की सम्भोग में विशेषज्ञता के अनुसार किया जाएगा, और वैदिक वर्ण व्यवस्था के विपरीत एक आदमी को सिर्फ एक धागा (जनेऊ) पहनने से ब्राह्मण के रूप में जाना जाएगा।

क्षीयमाणेषु देहेषु देहिनां कलिदोषत: ।
वर्णाश्रमवतां धर्मे नष्टे वेदपथे नृणाम् ॥ 12 ॥
शूद्रप्रायेषु वर्णेषुच्छागप्रायासु धेनुषु ।

गृहप्रायेष्वाश्रमेषु यौनप्रायेषु बन्धुषु ॥ 14 ॥

(श्रीमद भागवतम -12:2:12-14)

कलियुग के दूषित होने से सभी जीवों के शरीर छोटे हो जायेंगे ,जब उनके धार्मिक सिद्धांतों को वेदों का मार्ग नष्ट कर दिया गया होगा। वर्णव्यवस्था और आश्रमव्यवस्था नष्ट हो जायेगा । सभी वर्णों के लोग वेद-हीन होकर शूद्र हो जायेंगे। आश्रम वाले गृहस्थ जैसे होंगे | वैवाहिक संबंध वाले ही भाई होंगे।

जैसा शुकदेव गोस्वामी जी ने संदेह जाता था आज वैसा ही हो रहा है इसलिए अब भी वक़्त है सुधर जाओ नहीं तो कलयुग का अंत होने से कोई नहीं रोक सकता।

पंचरात्र प्रमाणिकता और धर्माधिकार

प्रमाणिकता

[पंचरात्रिक मत के अन्य नाम]

"एकांतिक" वैष्णव संप्रदाय का प्राचीन नाम है। इस संप्रदाय का सर्वाधिक प्राचीन ग्रंथों में पंचरात्र है जिस कारण इसे पंचरात्र मत भी कहा जाता है। वैष्णव संप्रदाय को प्राचीन काल में अनेक नामों से पुकारते थे जिनमें भागवत, सात्वत तथा पांचरात्र नाम विशेष विख्यात हैं। एकांतिक' शब्द का अर्थ है - वह धर्म जिसमें एक ही (भगवान्) का सिद्धांत माना जाए। भागवत धर्म का प्रधान तत्व है प्रपत्ति या शरणागति। भगवान् की शरण में जाने पर ही जीव का कल्याण होता है।

सूरि: सुहृद् भागवत: सात्वत: पंचकालवित्।
एकान्ति कस्तन्मयश्च पांचरात्रिक इत्यपि॥
(पद्मतंत्र 4:2:88)

[पंचरात्रिक मत के प्रवर्तक ऋषि]

शुक्ल यजुर्वेद की काण्व शाखा का ही नाम 'एकायन शाखा' है, ऐसा 'काण्व शाखामहिमा संग्रह' नामक ग्रंथ में नागेश का कथन है। इस मत की पुष्टि 'जयाख्य संहिता' से भी होती है। इस

संहिता के अनुसार पांचरात्र (वेष्णव मत) के प्रवर्तक पाँचों ऋषि, जिनके नाम औपगायन, कौशिक, शांडिल्य, भरद्वाज तथा मौंजायन हैं, काण्व शाखा के अध्येता बतलाए गए हैं -

शाण्डिल्यश्च भरद्वाजो मुनिर्मौञ्जायनस्तथा
इमौ च पञ्चगोत्रस्था मुख्याः काण्वीमुपाश्रिताः ।
(जयाख्य संहिता 1: 116)

पारम्परिक दृष्टि से पाञ्चरात्र नाम की व्याख्या पाँच ऋषि-गणों (शाण्डिल्य, औपगायन, मौआयन, कौशिक तथा भारद्वाज) द्वारा प्रवर्तित शास्त्र पाञ्चरात्र कहा गया, ईश्वर संहिता में उल्लेख है कि-

पञ्चायुधांशास्ते पञ्च शाण्डिल्यश्चौपगायनः ।
मौ आयनः कौशिकश्च भारद्वाजश्च योगिनः ॥
(ईश्वर संहिता 21.519-33)

【पंचरात्रिक एकायन शाखा 】

'एकांतिक' तथा 'एकायन' दोनों शब्द प्राचीन भागवत संप्रदाय के लिए प्रयुक्त होते थे । उपनिषद् युग में भागवत धर्म 'एकायन' नाम से प्रख्यात था जो 'एकांतिक' का ही एक नूतन अभिधान है। छांदोग्य उपनिषद् में भूमाविद्या के वर्णनप्रसंग में नारद के द्वारा अधीत विद्याओं में 'एकायनविद्या' के नाम का प्रथम उल्लेख उपलब्ध होता है-

ऋग्वेदं भगवोऽध्येमि यजुर्वेदं सामवेदमथर्वाणं वाकोवाक्यमेकायन च।
(छांदोग्य उपनिषद् 7: 1:2)

इस शब्द के अर्थ के विषय में प्राचीन टीकाकारों में मतभेद है। रंग रामानुज नामक श्रीवैष्णव टीकाकार की सम्मति में 'एकायन' शब्द वेद की 'एकायन शाखा' का द्योतक है जिसका साक्षात् संबंध भागवत् या वैष्णव संप्रदाय से है। नागेश ने अपने ग्रन्थ काण्व शाखा महिमा संग्रह में कहा है कि एकायन शुक्ल यजुर्वेदीय काण्व शाखा है।

काण्वीं शाखामधीयानान् वेदवेदान्तपारगान् ।
संस्कृत्य दीक्षया सम्यक् सात्वतायुक्तमार्गतः ॥
(ईश्वर संहिता 25:94)

वेद वेदान्त के अधिकृत विद्वान् और काण्वी अर्थात् एकायनी शाखा में अधीत होकर सम्यक् वैष्णव दीक्षा से संस्कार प्राप्त करके ही मनुष्य सात्वत धर्म (वैष्णव धर्म) के युक्ति संगत मार्ग को प्राप्त कर सकता है।

इस बात की पुष्टि करते हुवे सात्वत संहिता 25:96 में उल्लेख है-
"एकायनान् यजुर्मयान श्रावि तदनन्तरम् "

【पंचरात्र की प्राचीनता 】

◙ शतपथ ब्राह्मण से प्रमाण-

“पुरुषो ह वै नारायणोकामयत । अतितिष्ठेयं सर्वाणि भूतानि अहमेवेदं सर्व स्याम् इति । स एतं पु- 'रुषमेधं पञ्चरात्रं यज्ञक्रतुम् अपश्यत् । तम् आहरत् । तेनायजत ।
'नेनेष्ट्वात्यतिष्ठत् सर्वाणि भूतानि । इदं सर्वम् अभवत् इति "
(शतपथ ब्राह्मण 13:6:1:1)

◙ महाभारत से प्रमाण-

1-एवमेकं साङ्ख्ययोगं वेदारण्यकमेव च |परस्पराङ्गान्येतानि पञ्चरात्रं च कथ्यते ||७६||
एष एकान्तिनां धर्मो नारायणपरात्मकः ||७६||
(महाभारत - शान्तिपर्व 336:76)

2-पञ्चरात्रस्य कृत्स्नस्य वेत्ता तु भगवान्स्वयम् |६३||
(महाभारत - शान्तिपर्व 337:63)

3-साङ्ख्यं योगं पञ्चरात्रं वेदाः पाशुपतं तथा
ज्ञानान्येतानि राजर्षे विद्धि नानामतानि वै || ५९ ||
(महाभारत - शान्तिपर्व 337:59)

4-इदं महोपनिषदं चतुर्वेदसमन्वितम् |
साङ्ख्ययोगकृतं तेन पञ्चरात्रानुशब्दितम् || १०० ||
(महाभारत - शान्तिपर्व 326:100)

5-पञ्चरात्रविदो ये तु यथाक्रमपरा नृप ।
एकान्तभावोपगतास्ते हरिं प्रविशन्ति वै || ६७ ||
साङ्ख्यंचयोगं च सनातने द्वे वेदाश्च सर्वेनिखिलेन राजन् |
सर्वैः समस्तैरृषिभिर्निरुक्तो नारायणो विश्वमिदं पुराणम् || ६८
(महाभारत - शान्तिपर्व 12:337:67-68)

वेद, सांख्य, योग, पाशुपत तथा पांचरात्र में सन्निहित ज्ञानों में विरोधाभास नहीं अपितु सैद्धांतिक सामंजस्य है। जो समर्पियों के द्वारा प्रणीत पांचरात्र के ज्ञाता हैं तथा तदनुसार अनन्य शरणागत सेवापरायण भगवद्भक्त हैं, वे उन श्रीहरि में ही लीन हो जाते हैं।

【पंचरात्र की चतुर्व्यूह प्रमाणिकता 】

शतपथ ब्राह्मण में पांचरात्र सूत्र का उल्लेख है। पांचरात्र साहित्य तीन भागों में विभक्त था -

1. पांचरात्र श्रुति ,

2. पांचरात्र उपनिषद् ,

3. पांचरात्र संहिता ।

पांचरात्र संहिताओं में जो चतुर्व्यूह का वर्णन है, वह भी इतिहास एवं पुराण सम्मत ही हैं-

◙ महाभारत से प्रमाण-

यो वासुदेवो भगवान्क्षेत्रज्ञो निर्गुणात्मकः ।
ज्ञेयः स एव भगवाञ्जीवः सङ्कर्षणः प्रभुः ।। ३८ ।।
सङ्कर्षणाच्च प्रद्युम्नो मनोभूतः स उच्यते । प्रद्युम्नाद्योऽनिरुद्धस्तु सोऽहङ्कारो महेश्वरः
।। ३९ ।।
(महाभारत - शान्तिपर्व 12:326:38-39)

◙ श्रीमद्भागवतम् का प्रमाण-

वासुदेवः सङ्कर्षणः प्रद्युम्नः पुरुषः स्वयम् ।
अनिरुद्ध इति ब्रह्मन् मूर्तिव्यूहोऽभिधीयते ॥ २१ ॥
(श्रीमद भागवतम 12:11:21)
अर्थात्- वासुदेव, संकरण, प्रद्युम्न और अनिरुद्ध सर्वोच्च भगवान के प्रत्यक्ष व्यक्तिगत विस्तार के नाम हैं, हे ब्राह्मण शौनक.

【 पंचरात्र और श्रुति 】

वैष्णव शास्त्र स्वयं अपने को श्रुतिमूलक सिद्ध करते हुए वेद की एकायन शाखा को अपना आधार बतलाता है। इसके अतिरिक्त यत्र-तत्र वैदिक आचार की मर्यादा को स्वीकार करने उसकी रक्षा करने की बात भी कही गयी है-

मनीषी वैदिकाचारं मनसाऽपि न लङ्घयेत् ।
यथा हि बल्लभो राज्ञो नदीं राज्ञा प्रवतिताम् ॥
(लक्ष्मीतन्त्र 17:96)
एवं बिलङ्घयन् मर्त्यो मर्यादां वेदनिमिताम् ।

प्रियोऽपि न प्रियोऽसौ मे मदाज्ञाव्यनिवर्तनात् ॥

(लक्ष्मीतन्त्र 17:98)

इस प्रकार पंचरात्रिक /वैष्णव शास्त्र अपने ऊपर वेदविरोधी होने के आरोप का निराकरण करते हुए प्रतीत होते हैं।

पंचरात्र आगामो पर दूसरा आरोप यह लगाया गया कि यह शास्त्र वेदबाह्य जनों के द्वारा परिगृहीत है। इस कारण पाञ्चरात्र आगम अप्रामाणिक हैं। यामुनाचार्य ने इसका बड़ा ही सुन्दर उत्तर दिया है कि पाश्चरात्रिक वेदबाह्य हैं और वैदिक पाञ्च रात्रबाह्य , यदि वेदवाह्य जनों से परिगृहीत होने से पाञ्चरात्र अप्रमाण है तो पाञ्च रात्रबाह्य जनों से परिगृहीत होने से वेद अप्रमाण क्यों नहीं है ?

वेदबाह्यगृहीतत्वादप्रामाण्यवादि यत् ।
एतद्वाह्यगृहीतत्वाद् वेदानां कुतो न तत् ॥ ४
(आगमप्रामाण्यम् पृ० 62)

तात्पर्य यह है कि यदि पाञ्चरात्र आगम वेदविद्या में अधिकृत को अपने में अधिकार देते हैं तो इसमें अप्रामाणिकता का कौन सा कारण है। वेद से विरोध तो वहां होता जहाँ पाञ्चरात्र वेद में उन्हें अधिकार प्रदान करता, जिन्हें वेद में अनधिकृत कहा गया है।

पंचरात्र वैष्णव सम्प्रदाय क अत्यंत प्राचीन ग्रन्थ हैं जो संस्कृत में हैं। पंचरात्र श्रीवैष्णव सम्प्रदाय के सबसे महत्वपूर्ण ग्रन्थ हैं। पंचरात्र के सिद्धांतों की व्याख्या के लिए इनके अन्तर्गत 100 से अधिक ग्रन्थ आते हैं जिनमें ज्यादातर संहिता, तंत्र तथा उपनिषद है जिनकी रचना इतिहासकारों के अनुसार तृतीय शताब्दी ईसापूर्व से लेकर 850 ई तक की अवधि में होती रही है।

धर्माधिकार

【पंचरात्र और दिक्षा अधिकार】

◙ पंचरात्र आगम दीक्षा में स्त्री और शूद्रों को भी स्थान देते हैं। दीक्षायोग्य शिष्य के लक्षण बतलाते हुए पंचरात्र के तंत्र शास्त्र लक्ष्मीतन्त्र में कहा गया है–

कुलीनं च तथा प्राज्ञं शास्त्रार्थनिरतं सदा।
ब्राह्मणं क्षत्रियं वैश्यं शूद्रं वा भगवत्परम्॥ ३९॥
ईदृग्लक्षणसंयुक्तं शिष्यमार्जवसंयुतम्।
वर्णधर्मक्रियोपेतां नारीं वा सद्विवेकिनीम्॥ ४०॥
विद्यादनुमते पत्युरनन्यां पतिमानिनीम्।
एवंलक्षणकं शिष्यमाचार्यो भगवन्मयः।
ज्ञापयेद्विधिवन्मन्त्रान् गुरुदृष्ट्या समीक्ष्य तु॥ ४१॥
(लक्ष्मीतन्त्र 21:39-41)

अर्थात् - शिष्य को भी सर्वलक्षणयुक्त होना चाहिये उसे कुलीन, प्राज्ञ और शास्त्रार्थी चिन्तन मे निरत होना चाहिये । वह ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य अथवा शूद्र अथवा कोई भगवद्भक्त भी हो सकता है । इस प्रकार से शिष्य के गुणों की समीक्षा करके भगवत्स्वरूप आचार्य उसे दीक्षा दे तथा वर्णधर्म-क्रिया में परायण तथा सदसद् का विवेक रखने वाली नारी को भी पति की अनुमति से आचार्य विधिवत् मन्त्रोपदेश उस स्त्री को करे ।

◙ स्त्री और शूद्रों को भी अधिकार -

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या दीक्षायोग्यास्त्रयः स्मृताः ।
जातिशीलगुणोपेताः शूद्राश्च स्त्रिय एव च ॥
(परम संहिता 7:24)

अर्थात् - ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य तीनों दीक्षा के योग्य माने जाते हैं; ऐसे शूद्र और स्त्रियाँ भी योग्य हैं जो अच्छे परिवार के हो या फिर अच्छे चरित्र और अच्छे गुणों के हो ।

स्त्रियः शूद्राश्चानुलोमाः कल्याणगुणसंयुताः ।
यदि तानपि शिष्यत्वे गृहणीयात् कृपया गुरुः ॥ 27 ॥
(विश्वामित्र संहिता 3:27)

अर्थात् - गुरु कृपा से स्त्री , शूद्र और (मिश्रित वर्ग) अनुलोम जो सद्गुणों से संपन्न है उन्हें दीक्षा के लिए भी स्वीकार किया जाता है ।

स्पष्ट है कि यहाँ पंचरात्रिक दिक्षा ग्रहण करने में स्त्री और शूद्रों के अधिकार का उल्लेख है।

◙ सभी प्राणियों को अधिकार -

विष्णुतत्त्वं परिज्ञाय एकं वानेकभेदवत् ॥
दीक्षयेन्मेदिनीं सर्वा किं पुनश्वोपसन्नवान् ।
(जयाख्य संहिता 16:10)

अर्थात् - विष्णुतत्त्व को जानकर पृथ्वी के उपसन्न तथा अनुपसन्न सभी प्राणियों को दीक्षा देनी चाहिये।

【पंचरात्र और दीक्षा आचार्य 】

विष्णुभक्तो गृहस्थश्च दीक्षाकर्म विचक्षणः ।
परोपकारनिरतः चक्रलिङ्ग घरस्तथा ॥
दीक्षातन्त्र मनाजीवन् केवलं कृत्यवत्सलः ।
यो निवृत्तश्रुतैर्युक्त आचार्यः परिकीर्तितः ॥
(परम संहिता 7:22-23)

अर्थात् - उन्हें आचार्य कहा जाता है, जो विष्णु का भक्तभाव से परिपूर्ण है, एक विवाहित जीवन व्यतीत करने वाला हो , दीक्षा देने का पूरा ज्ञान रखने वाला हो , दूसरों की मदद करने के लिए हमेशा तत्पर रहने वाला हो, शरीर पर चक्र आदि के निशान बनवाये हो। दीक्षा को

एक व्यवसाय के रूप में अपनाने के बिना , सांसारिक इच्छा से मुक्त , अपने कर्तव्य से काफी प्रेमवत हो और वैदिक शिक्षा का गहन ज्ञान रखते हो ।

किमप्यत्राभिजायन्ते योगिनः . सर्वयोनिषु ।
प्रत्यक्षितात्मनाथानां नैषां चिन्त्यं कुलादिकम् ॥४४॥
(भारद्वाज संहिता 1: 44)

अर्थात् - इस संसार में योगीजन अनेक निष्कृष्ट तथा उत्तम योनि तथा जातियों में जन्म ले लेते हैं अतः जिसने अपनी साधनाओं के कारण ब्रह्म-तत्त्व का साक्षात्कार प्राप्त कर लिया हो ऐसे योगीजन के लिये कुलादि का विचार नहीं माना जाता है। अतः ऐसे किसी भी योगी से मन्त्रदीक्षा लेना निषिद्ध नहीं है।

【पंचरात्र और प्रपत्ति/मोक्ष 】

प्रपत्ति अथवा शरणागति का सिद्धान्त पाञ्चरात्र आगमों का अत्यन्त महत्त्व पूर्ण सिद्धान्त है।

◙ प्रभु श्रीराम और प्रभु श्रीकृष्ण का वचन है -

सकृदेव प्रपन्नाय तवास्मीति च याचते |
अभयं सर्वभूतेभ्यो ददाम्येतद व्रतं मम ||
(वाल्मीकि रामायण 6:18:33)

अर्थात् - जो कोई एक बार भी ‘ मैं तुम्हारा हूँ ‘ – ऐसा कहकर शरणागत होता है उसे में समस्त प्राणियों से निर्भय कर देता हूँ यह मेरा व्रत है ।

सर्वधर्मान्परित्यज्य मामेकं शरणं व्रज।
अहं त्वा सर्वपापेभ्यो मोक्षयिष्यामि मा शुचः।।
(गीता 18:66)

अर्थात् - सम्पूर्ण धर्मों का आश्रय छोड़कर तू केवल मेरी शरण में आ जा। मैं तुझे सम्पूर्ण पापों से मुक्त कर दूँगा, चिन्ता मत कर।

◙ पंचरात्र के संहिता और तंत्र शास्त्र में प्रपत्ति/मोक्ष का अधिकार -

ब्राह्मणा: क्षत्रिया वैश्याः शूद्रा इति विभेदतः ॥ ३७ ॥
आत्मानो जीवसंज्ञास्ते बन्धमोक्षौ व्रजन्ति ते ।
(अहिर्बुध्न्य संहिता 6 : 37)

अर्थात् - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य एवं शूद्र वर्णभेद से चार रूप में हो जाते हैं । आत्माओं की जीव संज्ञा है तथा वे बन्धन से मुक्ति , मोक्ष प्राप्त करते हैं।

अनन्योपाय सक्तस्य प्राप्येच्छोरधिकारिता ।
प्रपत्तौ सर्ववर्णस्य सात्विकत्वादियोगतः ॥
सा हि सर्वत्र सर्वेषां सर्वकामफलप्रदा ।
इति सर्वफलप्राप्तौ सर्वेषां विहिता यतः ॥
(सनत्कुमार संहिता)

अर्थात् -आसक्ति का त्याग करने वाला और प्राप्य वस्तुमें रुचि रखनेवाला ही प्रपत्ति का अधिकारी है। इसमें वर्णाश्रमादि का नियम नहीं है, जीवमात्र का इसमें अधिकार है । सब वर्णों एवं सभी आश्रमों के लोगों को तथा स्त्री, शूद्र, अन्त्यजादि सबको सर्वत्र सम्पूर्ण फल देनेवाली प्रपत्तिका शास्त्रोंने विधान किया है । "

तत्र धर्मान् परित्यज्य सर्वानुच्चावधाकान् ।
संसारानलसंतप्तो मामेकां शरणं व्रजेत् ॥ ४३ ॥
अहं हि शरणं प्राप्ता नरेणानन्यचेतसा ।
प्रापयाम्यात्मनात्मानं निर्धृताखिलकल्मषम् ॥ ४४ ॥
(लक्ष्मी तंत्र 16: 43-44)

अर्थात् - सभी प्रकार के धर्मो (वर्णधर्म, आश्रमधर्म एवं कुलधर्म) को त्याग कर संसाराग्नि से उत्तप्त साधक मेरी शरण में आवे। इस प्रकार अनन्य चित्त वाले साधक जब मेरी शरण में आ जाते हैं, तब मैं उसका पाप मुक्त करके उसे प्राप्त होती हूं॥

स्पष्ट है कि शरणागति मानवमात्र के ही लिए न होकर प्राणिमात्र के लिए है ।

【पंचरात्र और वेदाध्यन अधिकार 】

ये हि ब्रह्ममुखादिभ्यो वर्णाश् चत्वार उद्गताः ॥ २० ॥
ते सम्यगधिकुर्वन्ति त्रय्यादीनां चतुष्टयम् ।२१
(अहिर्बुध्न्य संहिता 15 :20-21)

अर्थात् - ब्राह्मणदि चार वर्ण ब्रह्मदेव के मुख से उत्पन्न हुये हैं, वे ही प्रकार से त्रयी (वेद) आदि अध्ययन पर अधिकार रखते हैं।

इससे स्पष्ट होता है की पंचरात्र के शास्त्र वेदों पर चारों वर्णों को समान अधिकार देते हैं ।

【पंचरात्र और शरणागत 】

दुराचारोऽपि सर्वाशी कृतघ्नो नास्तिकः पुरा ।
समाश्रयेदादिदेवं श्रद्धया शरणं यदि ॥ २३ ॥
निर्दोषं विद्धि तं जन्तुं प्रभावात् परमात्मनः ।
(सात्वत संहिता 16:23)

अर्थात् - दुराचारी, कुत्ते, चाण्डाल के समान सब का सब कुछ खाने वाला, सर्वाशी, कृतघ्न, नास्तिक भी यदि श्रद्धापूर्वक आदिदेव परमात्मा की शरण ग्रहण करे, तो उसे परमात्मा के प्रभाव से सर्वथा दोषमुक्त समझना चाहिये ।

प्राप्तुमिच्छन्परां सिद्धिं जनः सर्वोऽप्यकिञ्चनः ।
श्रद्धया परया युक्तो हरि शरणमाश्रयेत ॥१.१३॥
न जातिभेदं न कुलं न लिङ्गं न गुणक्रिया ।
न देशकालौ नावस्थां योगो यमपेक्षते ॥१.१४॥
ब्रह्मक्षत्रविशः शूद्राः स्त्रियाश्चान्तरजास्तथा ।
सर्व एवं प्रपद्येरन् सर्वधातारमच्युतम् ॥१.१५॥
(भारद्वाज संहिता 1:15)

अर्थात् - जो परम सिद्धि को प्राप्त करना चाहते हैं उन्हें चाहिये कि अकिञ्चन भाव से, परम श्रद्धा से युक्त होकर भगवान श्री हरि की शरण ले । शरणागति के इस न्यास योग (या पाञ्चरात्रिक विधि) को अंगीकार करने में जाति, कुल, लिंग, गुण-कर्म, देश, काल, पात्र, अवस्था आदि किसी भी वस्तु का चिन्तन करने की आवश्यकता नहीं है । ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, स्त्री, अन्त्यज, और अन्य कोई भी व्यक्ति क्यों न हो, उसे परम श्रद्धा से, सभी जीवों के धाता (पालनकर्ता) भगवान् अच्युत की शरण लेनी चाहिये ।

क्या यह वैष्णवों के लिए विशेष विचार नहीं है, कि कोई भी भगवान् हरि की शरण ले सकता है, चाहे वह स्त्री हो या पुरुष, ब्राह्मण हो या शूद्र, सत्कुली हो या दुष्कुली ।

इससे यह स्पष्ट हो जाता है कि वैष्णव संप्रदाय में सभी मनुष्यों को स्वीकार किया जाता है किसी से कोई भेदभाव नहीं किया जाता ।

【पंचरात्र और व्यव्हार व्यवस्था 】

मयीव सर्वभूतेषु ह्यानुकूल्यं समाचरेत्।
तथैव प्रातिकूल्यं च भूतेषु परिवर्जयेत्॥ ६७॥
(लक्ष्मी तंत्र 17 : 67)

अर्थात् - मनुष्य को सभी प्राणियों के प्रति वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा कोई मेरे प्रति करता है। इसी प्रकार प्राणियों के विरुद्ध होने वाले सभी कृत्यों का पूर्णतः त्याग करना चाहिए।

इसीलिए या आवश्यक है कि एक वैष्णव को दूसरे अन्य सभी मनुष्यों के साथ वैसा ही व्यवहार करना चाहिए जैसा वह ईश्वर के प्रति करता है अर्थात् सभी को आदर सम्मान देना चाहिए ।

【पंचरात्र और इसका विरोध 】

◙ भट्टोजिदीक्षित द्वारा विरोध -

भट्टोजिदीक्षित ने अपने 'तन्त्राधिकारिनिर्णयः' नामक ग्रन्थ में निष्कर्ष है कि श्रुतिभ्रष्ट तथा पतित आदि ही पाञ्चरात्र आगमों में अधिकृत हैं-

तस्मात् पतितादय एवं शङ्खचकाङ्कनादावधिकारिण इति सिद्धम् ।
(तन्त्राधिकारि निर्णयः)

◙ आदि शंकराचार्य द्वारा विरोध

शंकराचार्य ब्रह्मसूत्र के भाष्य में पाञ्चरात्र आगम के कुछ अंशों में प्रमाण एवं कुछ अंशों को अप्रमाण मानते हैं ।

इस प्रकार यह स्पष्ट है कि पाञ्चरात्र आगमों पर वेदविरोधी होने का सुनियोजित आरोप लगाया जाता रहा है। उसका एक प्रमुख कारण इसके द्वार का मानव मात्र के लिए उद्घाटित होना है जिसमें स्त्री और शूद्र सम्मिलित हैं।

◙ विरोध का खंडन -

प्राचीन वैष्णवाचार्यों ने अप्रामाणिक आदि के आक्षेपों को सुना, उनका उत्तर दिया, और संघर्ष भी किया। चैतन्य महाप्रभु तो पंचरात्र को वैष्णवों की श्रुति मानते थे तथा इसके सिद्धांतों का प्रचार भी किया ।
यामुनाचार्य आदि वैष्णव आचार्यों को 'आगमप्रामाण्य' जैसे गन्थों की रचना भी प्राय: इसी प्रकार के आरोपों का उत्तर देने के लिए करनी पड़ी थी। इन्होंने पंचरात्र रक्षा नाम का ग्रंथ भी रचा जिसमें उन्होंने पंचरात्र को वेदों के अनुरूप सिद्ध किया।

रामानुजाचार्य पंचरात्र को पूरी तरह से प्रमाण मानते थे तथा इसे वेदों के अनुरूप भी मानते थे ।

जब परमेश्वर ने सभी को एक समान बनाया तो इतनी जातियाँ कैसे बनी ?

कुछ लोग यह आरोप लगाते हैं कि परमेश्वर ने चारों वर्णों को बनाया और जातियां बनायी किंतु यह सत्य नहीं है । वेदों में ईश्वर से वर्णों की उत्पत्ति को लेकर कर्म विभाग के अनुसार वहां अलंकारिक तुलना की गई हैं ना कि उनसे उत्पन्न होते बताया है । जो वर्ण व्यवस्था महापुरुषों द्वारा स्थापित की गई वह सर्व जन के लिए हितकारी थी किंतु बाद में वह व्यवस्था बहुत विकृत रूप ली जिसका एक कारण वर्ण व्यवस्था के प्रवर्तकों का कलयुग में ना उत्पन्न होना भी है क्योंकि वैदिक काल में समय-समय पर वर्ण व्यवस्था के प्रवर्तकों ने वर्ण व्यवस्था बिगड़े नहीं इसलिए उस व्यवस्था के सिद्धांतों को समय अनुसार बदलाव किया था तथा पुनः वर्ण व्यवस्था की स्थापना की थी ।

【परमेश्वर ने मनुष्य बनाये वर्ण/जाति नहीं】

◙ परमेश्वर ने सबसे पहले मनुष्य बनाये जो एक समान थे । सभी का वर्ण एक था -

न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राह्ममिदं जगत्।
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम्॥
(महाभारत- शान्तिपर्व 188:10)

अर्थात् -सारा मनुष्य-जगत् एक ब्रह्म की सन्तान है। वर्णों में कोई भेद नहीं है। ब्रह्म के द्वारा रचा गया यह सारा संसार पहले सम्पूर्णतः ब्राह्मण ही था। मनुष्यों के कर्मों द्वारा यह वर्णों में विभक्त हुआ।

ब्रह्म वा इदमासीदेकमेव, तदेकं सन् न व्यभवत्। तत् श्रेयोरूपमत्यसृजत् क्षत्रम्,.....सः नैव व्यभवत्, स विशमसृजत्, ...सः नैव व्यभवत्, सः शौद्रं वर्णमसृजत्।' '
(बृहदारण्यक उपनिषद्-1: 4 :11-13)

अर्थात् -'ब्राह्मण वर्ण ही आरंभ में अकेला था। अकेला होने के कारण उससे समाज की चहुंमुखी समृद्धि नहीं हुई। आवश्यकता पड़ने पर ब्राह्मण वर्ण में से तेजस्वी वर्ण क्षत्रियवर्ण

का निर्माण किया गया। उससे भी समाज की चहुंमुखी समृद्धि नहीं हुई। आवश्यक जानकर उस ब्राह्मणवर्ण में से वैश्यवर्ण का निर्माण किया। उससे भी समाज की पूर्ण समृद्धि नहीं हुई। तब उस ब्राह्मणवर्ण में से शूद्रवर्ण का निर्माण किया। इन चार वर्णों से समाज में पूर्ण समृद्धि हुई।'

◙ मनुष्यों के उत्पत्ति के बाद कई महापुरुषों ने मनुष्यों को उनके कर्म विभाग बनाये और इसप्रकार वो वर्णव्यस्था के प्रवर्तक बने -

हमें इतिहास में कई महान राजा और महर्षि देखने को मिलते है जिन्होंने अपनी प्रजा को उनके कर्मानुसार उनके वर्ण बनाये । यह तथ्य सर्वमान्य है कि प्रथम चतुर्वण का प्रवर्तक महर्षि मनु थे किन्तु उसके उपरांत समय - समय पर वर्णव्यस्था के प्रवर्तकों का जन्म हुआ जिन्होंने बिगड़ती वर्णव्यस्था को सुधारने के लिए पुनः वर्णव्यस्था की स्थापना की और उन्होंने अपने परिवार जन और प्रजा को उनके कर्मानुसार वर्ण निर्धारित किये जो कि परिवर्तन शील भी थे जिससे सामाजिक व्यवस्था में दोष न आये और कोई भेद न पैदा हो । जैसे -

1- गृत्समदस्य शौनकश्चातुर्वर्ण्यप्रवर्तयिताभूत्॥

(विष्णु पुराण 4:8:6)

अर्थात् - क्षत्रिय गृत्समद का पुत्र शौनक चा्तुर्वर्ण्य का प्रवर्तक ब्राह्मण हुआ ।

पुत्रोगृत्समद्स्यापि शुनको यस्य शौनकाः।
ब्राह्मणः क्षत्रियाश्चैव वैश्याः शूद्रास्तथैवच॥

(हरिवंश पुराण 1 : 29 : 8)

अर्थात् - गृत्समद के पुत्र शुनक हुए, जिससे शौनक-वंश का विस्तार हुआ । शौनक-वंश में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी वर्णो के लोग हुए।

2- ततः स चतुरो वर्णानाश्रमांश्च व्यभाजयत्।।

(समराङ्गणसूत्रधार 7: 9)

अर्थात् - तदनन्तर अनुशासन के लिए महाराज पृथु ने प्रजाजनों के मध्य चार वर्णों एवं चार आश्रमों का विभाग किया।

◙ अगर किसी को लगता है कि ईश्वर पक्षपाती है तो उसने एकता और समानता की बात क्यों की है और उसने ऐसा क्यों कहा है कि वेदवाणी का तेज ध्वनि के साथ पाठ किया जिससे उसको सब सुने ? सीधी सी बात है ईश्वर भेदभाव रहित है-

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते संभ्रातरो वावृधः सौभगाय (ऋग्वेद 5:60:5)

अर्थात् - मनुष्यों में न कोई बड़ा है, न कोई छोटा, ये सब बराबर के भाई हैं ! वे सब मिलकर लौकिक और पारलौकिक उत्तम ऐश्वर्य के लिए प्रयत्न करें ।

स हृदयं सांमनस्यं विद्वेषं कृणोमि वः अन्यो अन्यमभि हर्यत वत्सं जात्मिवा घ्या

(अथर्ववेद - 3:30:1)

अर्थात् - हे मनुष्यों तुम सब एक ह्रदय से, एक मन से, निद्वेश होकर रहो! एक दुसरे को सब ओर से प्रेम करो ।

मिमीहि श्लोकमास्ये पर्जन्य इव ततनः । गाय गायत्रमुक्थ्यम् ॥

(ऋग्वेद 1:38:14)

अर्थात् - हे विद्वन् ! तू वेदवाणी को अपने मुख मे भर ले, फिर उस वेदवाणी को बादल के समान गर्जता हुआ दूर-दूर तक गम्भीर स्वर से फैला, उसका सर्वत्र उपदेश कर । प्राणों की रक्षा करने वाले वेद-मन्त्रों को स्वयं गान कर, स्वयं पढ़ और दूसरों को पढ़ा।

【कर्माधारित वर्णव्यस्था के समर्थन में महापुरुषों के वचन 】

1- महाकवि भवभूति ने भी जातिगत भेदभाव से विपरीत गुणों को ही पूजा (आदर) का स्थान माना है -

गुणा: पूजास्थानं गणिषु न च लिंङ्ग न च वयं ।।

(उत्तररामचरितम् 4:11)

अर्थात् - पूजा (सम्मान) के योग्य व्यक्ति के गुण होते हैं, न कि लिंग (स्त्री-पुरुष) भेद से या उम्र भेद से सम्मान के योग्य होते हैं ।

2 - महर्षि शुक्राचार्य का गुण आधारित व्यवस्था को प्रबल समर्थन -

कर्मशीलगुणाः पूज्यास्तथा जातिकुले न हि ।
न जात्या न कुलेनैव श्रेष्ठत्वं प्रतिपद्यते ।
(शुक्रनीति -2:55)

अर्थात् -मनुष्य कर्मशीलता और गुणो से सम्मानीय और पूज्यनीया होता है किसी विशेष जाति और कुल में जन्म लेने से नहीं । किसी भी जाति कुल में पैदा होने से कोई श्रेष्ट नहीं होता है।

3 - 12 शताब्दी के हितोपदेश के रचयिता आचार्य नारायण भी गुण कर्म को प्राथमिकता देते है -

जातिमात्रेण किं कश्चिद्धन्यते पूज्यते क्वचित्
व्यवहारं परिज्ञाय वध्यः पूज्योऽथवा भवेत्।।
(हितोपदेश 1:58)

अर्थात् - कोई भी मनुष्य जातिमात्र से मारने या पूजने योग्य नहीं हो जाता। व्यवहार को जानकर ही यह निर्धारित किया जा सकता है कि मनुष्य मारने योग्य है अथवा पूजने योग्य ।

यात्यधोऽधो व्रजत्युच्चैर्नरः स्वैरेव कर्मभिः।
कूपस्य खनिता यद्वत्प्राकारस्येव कारकः।।
(हितोपदेश 2 : 48)

अर्थात् - अपने ही कर्मों से मनुष्य ऊंचा चढ़ता है और गिर जाता है। जैसे कुएं का खोदने वाला नीचे जाता है और दीवार का बनाने वाला ऊंचा चढ़ता है।

4 - भविष्य पुराण के रचनाकार का गुण आधारित व्यवस्था का समर्थन -

शूद्रोऽपि शीलसम्पन्नो ब्राह्मणादधिको भवेत् ।

ब्राह्मणो विगताचारः शूद्राद्धीनतरो भवेत् ।३१।

(भविष्यपुराण ब्राह्मपर्व 44 : 31)

अर्थात् - अच्छे शीलवाला शूद्र ब्राह्मण से उत्तम बताया गया है और आचार भ्रष्ट ब्राह्मण शूद्र से भी हीन कहा गया है ।

5 - श्री वेदव्यास जी ने वेदान्तदर्शन प्रथमाध्याय के तृतीय पाद में प्रसङ्गवश शूद्रों को ब्रह्मविद्या एवं वेद पढने के अधिकार की चर्चा करते हुवे कहा है -

भावं तु बादरायणोऽस्ति हि।।

(वेदान्त दर्शन 1:3:32)

भावार्थ - (भावं तु बादरायण:) बादरायण अर्थात् वेदव्यास ब्रह्मविद्या एवं वेदाध्ययन में अधिकार का भाव मानते हैं (अस्ति, हि) क्योंकि मधुच्छन्दा आदि वैदिक ऋषियों में शूद्र ऋषियों का भी अस्तित्व है।

जैसे दासीपुत्र कवष-ऐलूष अपोनप्त्रीय सूक्त का ऋषि (ऐतरेय ब्राह्मण 2:3:1)

अपनी बात को प्रमाणित करते हुवे महर्षि वेदव्यास जनश्रुति नाम के शूद्र का उदहारण देते है जो आगे चलकर महान राजा बनता है -

शुगस्य तदनादरश्रवणात् तदाद्रवणात् सूच्यते हि।।

(वेदान्त दर्शन 1:3:34)

अर्थात् - (शुक् अस्य तदनादरश्रवणात्) इस जानश्रुति नामक शूद्र का ब्रह्मविद्या एवं वेदाध्ययन में अनादर सुनाई देने से वह शुक्=शोक से व्याकुल हो गया है वह शुक्=शोक से आद्रवित होने से ब्रह्मविद्या के उपदेश के लिये रैक्व नामक गुरु के पास द्रुत गति से गया ।

उस शूद्र को रैक्व ऋषि ने ब्रह्मविद्या का उपदेश दिया। अत: शूद्र को भी ब्रह्मविद्या एवं वेदाध्ययन का अधिकार है। (द्रष्टव्य - छान्दोग्य उपनिषद 4:1:1)

क्षत्रियत्वगतेश्र्चोत्तरत्र चैत्ररथेन लिङ्गात् ।।
(वेदान्त दर्शन 1:3:35)

अर्थात् - (अत्तरत्र क्षत्रियगते: च) जानश्रुति पौत्रायण पहले शूद्र था, किन्तु गुण और कर्म के कारण वह फिर क्षत्रिय गति को प्राप्त हो गया।

6 - महर्षि बादरि वर्णव्यस्था में सभी के पूर्ण अधिकार का समर्थन करते है तथा इसे वेदों के अनुरूप मानते है -

निमित्तार्थेन बादरि स्तस्मात्सर्वाधिकारं स्यात् ॥ २७॥
अपि वान्यार्थदर्शनाद्यथाश्रुति प्रतीयेत ॥ २८॥
(मीमांसा दर्शन 6 :1 : 27-28)

भावार्थ - महर्षि बादरि का मत है कि नैमित्तिक सामर्थ्य योग्यता से अधिकार उत्पन्न होता है। इस दृष्टि से वैदिक कर्मों में सबका अधिकार होता है। श्रुतियो में भी कहा गया है कि जैसे परमात्मा वेदवाणी का सबको उपदेश करता है वैसे ही मनुष्य को भी बिना भेदभाव से करना चाहिए ।

7- आचार्य चाणक्य गुण कर्माधारित वर्णव्यस्था के प्रबल समर्थक थे -

कि कुलेन विशालेन विद्याहीनेन देहिनाम् ।
दुष्कुलं चापि विदुषो देवैरपि स पूज्यते ॥ ।।१८।।
(चाणक्य नीति 8 :18)

अर्थात् -विद्याहीन होने पर विशाल कुल का क्या लाभ है? विद्वान नीच कुल का भी हो, तब भी देवताओं द्वारा पूजा जाता है ।

गुणैरुत्तमतां याति नोच्चैरासनसंस्थिताः ।
प्रासादशिखरस्थोऽपि काकः कि गरुडायते ॥ ॥६॥

(चाणक्य नीति 17 : 6)

अर्थात् - व्यक्ति को महत्ता उसके गुण प्रदान करते है वह नहीं जिन पदों पर वह काम करता है। क्या एक ऊँचे भवन पर बैठा कौवे को गरुड़ कहा जा सकता है।

8 - भगवान शिव भी महाभारत में मां पार्वती को दिए गए उपदेश में सदाचार कर्माधारित वर्णव्यस्था का प्रबल समर्थन करते है -

न योनिनोपि संस्कारो न श्रुतंन च संततिः
कारणानि द्विजत्वस्य वृत्तमेव तु कारणम् ॥
सर्वोष्य त्राह्मणो लोके वृत्तेन तु विधीयते।
वृत्ते स्थितस्तु शुद्रो पि ब्राह्मणत्वं नियच्छति॥
(महाभारत- अनुशासन पर्व 143 : 50-51)

अर्थात् - भगवान शिव ने कहा ब्राह्मणत्व की प्राप्ति न तो जन्म से न संस्कार न शास्त्रज्ञान और न सन्तति के कारण है ।ब्राह्मणत्व का प्रधान हेतु तो सदाचार ही है। लोक में यह सारा ब्राह्मण समुदाय सदाचार से ही अपने पदपर बना हुआ है | सदाचार में स्थित रहने वाला शूद्र भी ब्राह्मणत्व को प्राप्त हो सकता है ।

9 - महाराज युधिष्ठिर भी महाभारत में यक्ष के प्रश्नों का उत्तर देते हुए सदाचार कर्माधारित वर्णव्यस्था का समर्थन करते हैं -

श्रुणु यक्ष कुलं तात न स्वाध्यायो न च श्रुतम् ।
कारणं हि द्विजत्वे च वृत्तमेव न संशय:।।
(महाभारत - वनपर्व 313 : 108)

अर्थात् - युधिष्ठिर ने कहा-तात यक्ष !सुनो न तो कुल ,न स्वाध्याय और न शास्त्र श्रवण से ब्राम्हणत्व प्राप्त होता है|ब्राम्हणत्व की प्राप्ति मात्र आचार से प्राप्त होती है|इसमे संशय नही है|

10 - ऋषि वैश्यम्पायन युधिष्ठिर से आश्वमेधिकपर्व में धर्म आधारित व्यवस्था का समर्थन करते हुए कहते हैं-

न जात्या पुजीतो राजन्गुणाः कल्याणकारणाः।
चण्डालमपि वृत्तस्थं तं देवा ब्राह्मणं विदुः।।
(महाभारत -आश्वमेधिकपर्व 116:8)

अर्थात् - कुल, जाति से कोई पूजनीय नहीं होता है व्यक्ति के अन्दर का गुण ही कल्याणकारक होता है और , यदि चाण्डाल भी वृत्तस्थ हो तो वह ब्राह्मण होता है।

11 - देवर्षि नारद भी कर्म आधारित वर्ण व्यवस्था का समर्थन करते हुए वर्ण को परिवर्तनशील बताते हैं -

यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसो वर्णाभिव्यञ्जकम् ।
यदन्यत्रापि दृश्येत तत्तेनैव विनिर्दिशेत् ॥ ३५ ॥
(श्रीमद भागवतम -7:11:35)

अर्थ – नारद जी ने कहा यदि कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र होने के लक्षण दिखाता है, जैसा कि वर्णित है, भले ही वह एक अलग वर्ग में प्रकट हुआ हो, उसे वर्गीकरण के उन लक्षणों के अनुसार स्वीकार किया जाएगा ।

12 - महाराज शूद्रक कर्म आधारित व्यवस्था का समर्थन करते हुए जाति पर घमंड करने वालों पर कटाक्ष करते हुए कहते हैं -

किं कुलेनोपदिष्टेन शीलमेवात्र कारणम् ।
भवन्ति सुतरां स्फीताः सुक्षेत्रे कण्टकिद्रुमाः ।।
(मृच्छकटिकम् 8 : 29)

अर्थ – कुल को बताने से क्या लाभ है? (अनुचित कार्य को करने में) स्वभाव ही प्रमुख कारण होता है। उत्तम खेत में भी कांटेदार पौधे खूब विकसित होने लगते हैं।

13 - महात्मा विदुर महाभारत के उद्योगपर्व में कुलों पर उपदेश देते हुए कहते हैं -

कुलानि समुपेतानि गोभिः पुरुषतोऽर्थतः ।
कुलसंख्यां न गच्छन्ति यानि हीनानिवृत्ततः ॥
वृत्ततस्त्वविहीनानि कुलान्यल्पधनान्यपि ।
कुलसंख्यां च गच्छन्ति कर्षन्ति च महद् यशः ॥
(महाभारत - उद्योगपर्व 36:28-29)
(विदुर नीति 6:5:6 -7)

अर्थ –यदि किसी कुल के पास गौ , अत्यधिक धन एवं सेवा के लिये बहुत से पुरुष सहायक हैं लेकिन सदाचार से रहित हैं अर्थात् उनका आचरण अच्छा नहीं है , तो ऐसे पुरुष की अच्छे कुल में गणना नहीं की जा सकती है।परन्तु थोड़े धनवाले कुल भी यदि सदाचार से सम्पन्न हैं तो वे अच्छे कुलों की गणनामें आ जाते हैं और महान् यश प्राप्त करते हैं।'

14 - यामुनाचार्य जी ने अपने ग्रन्थ में ऐसे प्रमाण दिए थे जिससे वो बिगड़ रही वर्णव्यवस्था को सुधार सके । उन्होंने धर्म को व्यापार न बना दिया जाये इसके लिए ग्रंथों में इसपर भी नियम के विवरण दिए थे -

देवकोशोपजीवी यः स देवलक उच्यते ।
वृत्त्यर्थं पूजयेद्देवं त्रीणि वर्षाणि यो द्विजः ।
स वै देवलको नाम सर्वकर्मसु गर्हितः ॥
(श्रीयामुनाचार्यकृत आगम प्रमाण)

अर्थ – जो देवपूजा की आय से जीविका चलाता है, वह 'देवल' नामसे कथित होता है। जो ब्राह्मण जीविका चलाने के लिए तीन वर्ष तक देवपूजा करता है, वह देवल सभी कर्मों में अत्यन्त निन्दा के योग्य है।

आपद्यपि च कष्टायां भीतो वा दुर्गतोऽपि वा ।
पूजयेन्नैव वृत्त्यर्थं देवदेवं कदाचन ।
(श्रीयामुनाचार्यकृत आगमप्रामाण्यधृत परमसंहिता-वाक्य)

अर्थ – अत्यन्त कष्टपूर्ण स्थिति में भी अथवा भयग्रस्त, दुर्दशाग्रस्त और विपदापन्न होकर कभी भी जीविका चलाने के लिए देवपूजा नहीं करनी चाहिए ।

【उपाधि का जाति में परिवर्तन】

इंद्र, वृत्त, शंभर, गार्गी, कृष्ण, कौत्स, चार्वाक, राम, अर्जुन, दुर्योधन, अत्रि, एकलव्य, हनुमान, रावण आदि ऐसे हजारों प्रचलित पात्र आपको वैदिक इतिहास में मिल जाएंगे, जो बिना जातिगत उपनाम के ही आज तक प्रसिद्ध हैं। फिर सरनेम और उपनाम की शुरुआत किसने और कब से की?

यह इतिहासकारों द्वारा सर्वमान्य है की उपाधियों को देने का कार्य गुप्त काल से प्रारंभ हुआ तथा इसकी शुरुआत प्रजाजन के कर्मों के आधार पर हुई थी जोकि पीढ़ी दर पीढ़ी नहीं दिया जाता था बल्कि उनके कर्मों को देखकर ही दिया जाता था । किंतु गुप्त वंश के पतन के साथ ही इस व्यवस्था ने जन्माना व्यवहार ले लिया लोगों ने अपनी उत्पन्न संतानों को भी वही उपाधि उपनाम के रूप में नाम में लगवाना शुरू कर दिया जिससे आगे आने वाले 500 साल के अंदर ही वर्ण व्यवस्था पूर्ण रूप से जन्म आधारित हो गई। अधिकतर उच्च उपाधियां प्राप्त लोग अपने नाम के आगे उपाधि को ही उपनाम बनाकर दर्शाते थे ताकि उन्हें लोग उच्च समझे। फिर एक ही तरह की उपाधियों का एक उच्च वर्ग निर्मित होने लगा और इस प्रकार समाज में जातिवाद की शुरुआत हुई । बाद में जब मुगल आए तो सर्वप्रथम उन्होंने उपाधि प्राप्त लोगों को ही अपने राजदरबार में उच्च पद पर रखा। फिर धीरे-धीरे उन्होंने समय और परिस्थिति के अनुसार अन्य कई जाति समूह के लोगों के उक्त क्षेत्र का अच्छे से संचालन करने के लिए नए-नए पद निर्मित किए, जो बाद में एक जाति में बदल गए। हिन्दुओं को विभाजित रखने के उद्देश्य से ब्रिटिश राज में हिन्दुओं को 2,378 जातियों में विभाजित किया गया। ग्रंथ खंगाले गए और हिन्दुओं को ब्रिटिशों ने नए-नए नए उपनाम देकर स्पष्ट तौर पर और नयी नयी जातियों में बांट दिया।

गुप्त काल में प्रजा जन को उनके कर्मों के अनुसार दी गई उपाधियों के कुछ उदाहरण -

1-द्विवेदी - जो 2 वेदों का ज्ञाता हो । उसे द्विवेदी उपाधि गुप्त काल में दी जाती थी ।

2-त्रिवेदी - जो वेदत्रयी का ज्ञाता हो । उसे त्रिवेदी उपाधि गुप्त काल में दी जाती थी ।

3-चतुर्वेदी - जो चारों वेदों का ज्ञाता हो । उसे चतुर्वेदी उपाधि गुप्त काल में दी जाती थी ।

4-निषाद - जो जंगल में रहता हो अर्थात् आदिवासी । उसे निषाद उपाधि गुप्त काल में दी जाती थी ।

5-आचार्य - गुरुकुल का शिक्षक जो वेदों और शास्त्रों का शिष्यों को उपदेश देता है । उसे आचार्य उपाधि गुप्त काल में दी जाती थी ।

6-उपाध्याय - जो वेद का कोई भाग अथवा वेदांग शुल्क लेकर पढाये । उसे उपाध्याय उपाधि गुप्त काल में दी जाती थी ।

7-पुरोहित - प्रधान याजक जो यजमान के यहाँ अगुआ बनकर यज्ञ आदि श्रौतकर्म, गृहकर्म और संस्कार तथा शांति आदि अनुष्ठान करे-कराए। उसे पुरोहित उपाधि गुप्त काल में दी जाती थी ।

8-चर्मकार- मृत पशुवो के चमड़े को निकालने का काम करने वाला व्यक्ति । उसे चर्मकार उपाधि गुप्त काल में दी जाती थी ।

जन्माधारित वर्णव्यवस्था का खंडन

समय के साथ व्यवस्था बहुत ज्यादा विकरित हो चुकी है यही कारण है कि आज बहुत से लोग इस भ्रम को फैला पा रहे हैं कि वर्ण पिछले जन्म के कारणों से तय होता है और उपनयन केवल द्विजो की संतानों का होता है जोकि वैदिक वर्ण व्यवस्था के आधार पर देखा जाए तो बिल्कुल निराधार है । हम इस लेख में इन्हीं दोनों तथ्यों की समीक्षा करेंगे ।

【क्या वर्ण निर्धारण पूर्व जन्म के कर्माधारित है ?】

◙ यह समझने के लिए सबसे पहले हमें यह जानना होगा कि कर्म कितने प्रकार के होते हैं , उनकी व्याख्या क्या है और उनका सिद्धांत क्या हैं अन्यथा हम इस विषय को नहीं समझ पाएंगे-

सनातन धर्म कर्म और पुनर्जन्म की प्रणाली में विश्वास करता है। शास्त्रों के अनुसार कर्म तीन प्रकार के होते हैं: - संचित , प्रारब्ध और अगामी ।

(वराह उपनिषद 12)

1- संचित कर्म - अनेक पूर्व जन्मों से लेकर वर्तमान में किये गए कर्मों के संचय को संचित कर्म कहते हैं यह वह कर्म है जो उन्होंने अपने पिछले जन्म में नहीं चुकाए थे जिसके कारण उन्हें अपने कर्म के अनुसार जन्म मिलता है।

बहूनि मे व्यतीतानि जन्मानि तव चार्जुन।
तान्यहं वेद सर्वाणि न त्वं वेत्थ परन्तप।।

(गीता 4:5)

अर्थात् - हे परन्तप अर्जुन ! मेरे और तेरे बहुत-से जन्म हो चुके हैं। उन सबको मैं जानता हूँ, पर तू नहीं जानता।

2- प्रारब्ध कर्म- संचित कर्म में से, थोड़ा सा अंश मात्र कर्मों का फल जो हमें इस जन्म में भोगना है उसे प्रारब्ध कर्म कहते हैं । हमारे जीवन में जो अच्छा-बुरा घटित होता है, जिन पर हमारा निरंतरण नहीं है वो प्रारब्ध है। ये प्रारब्ध कर्म ही नए होने वाले जन्म की योनि व उसमें मिलने वाले भोग को निर्धारित करते हैं। फिर इस जन्म में किए गए कर्म, जिनको क्रियमाण कहा जाता है, वह भी संचित संस्कारों में जाकर जमा होते रहते हैं।

'कर्मण्येवाधिकारस्ते मा फलेषु कदाचन ।

(गीता 2:47)

अर्थात् - "केवल कर्म करने में ही तेरा अधिकार है, उसके फलों में नहीं।"

3- क्रियमाण कर्म - वर्तमान में जो कर्म कर रहे हो क्रियमाण कर्म है । जो हम क्रियमाण कर्म करते है वो ही संचित कर्म में जाकर जमा होता रहता है और उसी संचित कर्म का अंश प्रारब्ध कर्म (भाग्य) के रूप में हमें मिलता है।

'कथं कर्म विना दैवं स्थास्यति ।'

(महाभारत अनुशासनपर्व 6:23)

अर्थात् - "कर्म के बिना भाग्य कैसे स्वयं स्थापित हो सकता है?

◙ अब आते हैं प्रश्नों पर -

♦प्रश्न - क्या हमारा जन्म द्विज अथवा शूद्र परिवार में पिछले जन्म के कर्मों के कारण होता है ?

उत्तर- हाँ, जैसा कि आपने ऊपर पढ़ा एक व्यक्ति को उसके पिछले जन्म के कर्मों से अच्छे समृद्ध परिवार में जन्म मिलता है, किंतु इससे उसका वर्ण का निर्धारण नहीं हो जाता है , अभी उसको वैदिक संस्कार तथा वर्ण निर्धारण की प्रक्रिया से गुजरना होता है।

♦प्रश्न - क्या इसका मतलब यह है कि वर्ण का जन्म से कोई संबंध है?

उत्तर - नहीं, वास्तव में ब्राह्मण के पुत्र के ब्राह्मण बनने की संभावना अधिक होती है शूद्र के पुत्र की तुलना में , लेकिन इसका मतलब यह नहीं है कि ब्राह्मण का पुत्र निश्चित रूप से बड़ा होकर ब्राह्मण ही बनेगा या शूद्र का पुत्र बड़ा होकर शूद्र ही बनेगा। यदि शूद्र के पुत्र में ज्ञान, अच्छा चरित्र आदि जैसे अन्य गुण हों, तो वह ब्राह्मण बन सकता है। इसी तरह यदि कोई ब्राह्मण पुत्र ज्ञान नहीं लेगा और शूद्र की तरह व्यवहार करेगा तो वह शूद्र बन जाएगा । जैसा कि आपने ऊपर पढ़ा यदि शूद्र परिवार में जन्म लेने वाला व्यक्ति इस जन्म में अपने अच्छे कर्मों से अपने अंदर ब्राह्मणीय गुणों का विकास करके संचित कर्मों का भुगतान करता है तो वह इसी जन्म में ब्राह्मणत्व प्राप्त करता है।

【द्विज के संतानों के लिए उम्र आधारित उपनयन का विधान क्यों?】

◙इस विषय को समझने के लिए सबसे पहले हम यह समझते हैं की द्विजो की संतानों के लिए किस उम्र तक उपनयन का विधान हैं -

गर्भाष्टमेऽब्दे कुर्वीत ब्राह्मणस्योपनयनम् ।
गर्भादेकादशे राज्ञो गर्भात्तु द्वादशे विशः ॥
(मनुस्मृति 2:36)

अर्थात् - ब्राह्मण के बालक का यज्ञोपवीत संस्कार गर्भ से आठवें वर्ष में करे, क्षत्रिय के बालक का गर्भ से ग्यारहवें वर्ष में, और वैश्य के बालक का गर्भ से बारहवें वर्ष में उपनयन संस्कार करना चाहिए ।

ब्रह्मवर्चसकामस्य कार्यं विप्रस्य पंचमे
राज्ञो बलार्थिनः षष्ठे वैश्यस्येहार्थिनोऽष्टमे ॥
(मनुस्मृति 2:37)

अर्थात् - ब्राह्मण के गुण लक्षण जिस बच्चे में दिखाई दिये हों ऐसे बच्चे को गर्भधारणा से या प्रत्यक्ष जन्म से पांचवें वर्ष में, क्षत्रिय को छठे वर्ष में और वैश्य को आठवें वर्ष में गुरुकुल में प्रवेश के लिये लाया जाता था ।

♦निष्कर्ष - गुरूकुल प्रवेश के बाद बच्चे को परखा जाता था। उस के उपरांत ही उस का वर्ण निश्चित कर उपनयन किया जाता था। जो बच्चे इस आयु तक अपने को सिद्ध नहीं कर पाते उन की आगे भी परीक्षा चलती रहती थी। परीक्षा के आधार पर ब्राह्मण को उपनयन का सोलह वर्ष तक, क्षत्रिय को बाईस वर्ष तक और वैश्य को चौबीस वर्ष तक अवसर होता था । जैसा कि आगे के श्लोकों में वर्णन है -

आषोडशात् ब्राह्मणस्य सावित्री नातिवर्तते।
आद्वाविंशात् क्षत्रबन्धोराचतुर्विंशतेर्विशः॥
(मनुस्मृति 2:38)
अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालमसंस्कृताः।
सावित्रीपतिता व्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिताः॥
(मनुस्मृति 2:39)
नैतैरपूतैर्विधिवदापद्यपि हि कर्हिचित्।
ब्राह्मान् यौनांश्च सबन्धानाचरेद् ब्राह्मणः सह॥
(मनुस्मृति 2:40)

अर्थात् -'सोलह वर्ष का होने के बाद ब्राह्मण बनने के इच्छुक बालक का, बाईस वर्ष के बाद क्षत्रिय बनने के इच्छुक का, चौबीस वर्ष के बाद वैश्य बनने के इच्छुक का उपनयन संस्कार का अधिकार नहीं रहता। उसके बाद ये सावित्री व्रत (उपनयन) से पतित होकर आर्यवर्णों से बहिष्कृत हो जाते हैं। व्रत का पालन न करने वाले बहिष्कृत हो गयी ऐसी द्विजो की संतानों से कोई फिर कोई अध्ययन-अध्यापन तथा विवाह सबन्धी वैधानिक व्यवहार न करे।'

द्विज की संतान को उचित अवधि में उपनयन संस्कार तथा वेद अध्ययन ना हो पाता था वह शूद्र हो जाता है ऐसे में वह आगे चाहे तो इसके लिए प्रायश्चित करके दोबारा विद्या ग्रहण कर सकता है -

येषां द्विजानां सावित्री नानूच्येत यथाविधि ।
तांश्चारयित्वा त्रीन्कृच्छ्रान्यथाविध्युपनाययेत् ।।
(मनुस्मृति 11:191)

अर्थात् - जिन द्विज संतानो का नियत काल में विधिवत् गायत्री उपदेश और उपनयन न हुआ हो वह तीन कृच्छव्रत करें यथाविधि इसके उपरांत अपना उपनयन करा लें।

♦निष्कर्ष - इस आयु तक जो अपने को इन तीन वर्णों के योग्य सिद्ध नहीं कर पाते थे, उन्हें शूद्र वर्ण प्राप्त होता था। अपने को सिद्ध करने का पूरा अवसर मिलने के कारण और अपनी अक्षमता समझ में आने से जिसे शूद्र वर्ण प्राप्त होता था उस में सामान्यत: अन्य वर्णों के लोगोंं के प्रति ईर्ष्या का भाव पनपता नहीं था। महर्षि मनु की व्यवस्था जन्म आधारित नहीं थी अगर वह होती तो यहां निर्धारित समय पर उपनयन ना होने पर वर्ण पतन का विधान ना होता !

अब जो द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) बन जाते थे अगर वह अपने निर्धारित कर्म को नहीं करते थे तो उनका वर्णपतन भी हो जाता था -

न तिष्ठति तु यः पूर्वां नोपास्ते यश्च पश्चिमाम्।
स शूद्रवद् बहिष्कार्यः सर्वस्माद् द्विजकर्मणः॥
(मनुस्मृति 2:103)

अर्थात् -जो द्विज (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य) प्रातःकालीन संध्या नहीं करता और जो सायंकालीन संध्या भी नहीं करता। वह शूद्र के समान है, उसको द्विजों के सभी अधिकारों या कर्त्तव्यों से बहिष्कृत कर देना चाहिए अर्थात् उसे 'शूद्र' घोषित कर देना चाहिए।

◙ अब आते हैं प्रश्नों पर -

♦प्रश्न - यदि ब्राह्मण मुसलमान बन जाये तो क्या वह ब्राह्मण रहेगा तथा क्या उसकी भविष्य की संताने भी ब्राह्मण होगी?

उत्तर - अगर वर्ण व्यवस्था जन्म आधारित होती तो यह संभव होता किंतु वर्ण व्यवस्था कर्म आधारित है क्योंकि रज और वीर्य के मेल से वर्ण नहीं मिलता अपितु गुण कर्म स्वभाव से ही वर्ण मिलता है जिसको परखने का कार्य आचार्य का होता है।

♦ क्या शूद्र यज्ञोपवीत धारण कर सकता है ?

उत्तर - सभी मनुष्य जन्म से शूद्र होते हैं। अतः शूद्र को ही यज्ञोपवीत धारण कराया जाता है। तत्पश्चात् वे गुरुकुल में वेद विद्या का अध्ययन कर ब्राह्मण, क्षत्रिय अथवा वैश्य बनते हैं। इसके लिए समावर्तन संस्कार होता है।

उपनयन संस्कार होने से पहले सभी एक शूद्र अबोध अवस्था में होते हैं इसका प्रमाण मनुस्मृति तथा धर्मसूत्र आदि ग्रंथ देते हैं -

नास्य कर्म नयच्छिन्त किंचिदा मौञ्जिबन्धनात्
वृत्या शूद्रसमो ह्येष यावद्वेदे न जायत इति ।
(बोधायन धर्मसूत्र 1:3: 6)

अर्थात् - जब तक किसी बालक का उपनयन संस्कार नहीं हो जाता तब तक उससे कोई धार्मिक अनुष्ठान नहीं करवाया जाता क्योंकि उपनयन संस्कार होने से पहले सभी एक शूद्र अबोध स्तर पर होते हैं ।

◙ इसके अतिरिक्त धर्मसूत्रों में वर्णन है यहाँ सभी को जब तक उपनयन न हो जाता तब तक जन्मतः शूद्र की तरह अधिकार दिया गया है -

प्रागुपनयनात्कामचारः कामवादः कामभक्षः ॥१॥
अहुतात् ॥२॥ ब्रह्मचारी ॥३॥ यथोपपादितमूत्रपुरीषो भवति ॥४॥ नास्याऽऽचमनकल्पो विद्यते ॥५॥अन्यत्रापमार्जनप्रधावनावोक्षणेभ्यः ॥६॥न तदुपस्यर्शनादशौचम् ॥७॥नत्वेवैनमग्निहवनबलिहरणयोर्नियुञ्ज्यात् ॥८॥
(गौतम धर्मसूत्र 1 : 2 : 1-9)

अर्थात् - जब तक किसी बालक का उपनयन संस्कार ना हो तब तक हुआ जैसा चाहे भोजन ग्रहण , बोलना और कार्य कर सकता है । जब तक उपनयन संस्कार ना हो वह हवन के उपरान्त अवशिष्ट आदि का भोजन नहीं नहीं कर सकता , वह ब्रह्मचारी बनकर रह सकता है । जैसा चाहे मूत्र त्याग कर सकता है किंतु आचमन नहीं कर सकता , ना ही उसपे शौच के नियम उस पर लागू होते हैं।

♦प्रश्न - जिस तरह द्विजो की संतानों के लिए उपनयन की समय अवधि तय की गयी है उसी प्रकार शूद्रों की संतानों के उपनयन की अवधि क्यों तय नहीं की गयी ?

उत्तर - शुद्रो की संतानों के पास ये अधिकार होता था की वो किसी उम्र में जब वो वेदाध्यन के योग्य हो तब वो अपनी योग्यता का परिचय आचार्य को देकर उपनयन करा सकते है और द्विज बन सकते है ।ज्यादातर शूद्रों में शास्त्राध्यन के प्रति झुकाव नहीं होता था यही कारण है की जादातर शूद्रों की संतान वैदिक संस्कारों से रहित अशिक्षित शूद्र ही रह जाते थे ।

◙ शूद्र अपनी योग्यता का परिचय आचार्य को देकर अपना उपनयन करवा कर शिक्षा ग्रहण कर सकता है ऐसा महाऋषियों का मत है -

निमित्तार्थेन बादरि स्तस्मात्सर्वाधिकारं स्यात् ‖ २७‖

अपि वान्यार्थदर्शनाद्यथाश्रुति प्रतीयेत ‖ २८‖

(मीमांसा दर्शन 6 :1 : 27-28)

अर्थात् - महर्षि बादरि का मत है कि नैमित्तिक सामर्थ्य योग्यता से अधिकार उत्पन्न होता है। इस दृष्टि से वैदिक कर्मों में सबका अधिकार होता है। श्रुतियो में भी कहा गया है कि जैसे परमात्मा वेदवाणी का सबको उपदेश करता है वैसे ही मनुष्य को भी बिना भेदभाव से करना चाहिए ।

न काम्यत्वात् ‖३१‖ संस्कारे च तत्प्रधानत्वात् ‖३२‖

(मीमांसा दर्शन 6 : 1 : 31-32)

अर्थात् - मीमांसाकार का मत है , शूद्रों में भी कामना पाई जाने से उनका अधिकार सिद्ध होता है। संस्कारों के कारण ब्राह्मणादि वर्णों की प्रधानता मानी जाती है, पर शूद्र भी अपनी योग्यता का प्रमाण देकर उपनयन और वैदिक कर्मों का अधिकारी बन सकता है ।

◙ वेदों में भी शूद्रों को द्विज बनने का ईश्वर का उपदेश दिया गया है -

आ संयतमिन्द्र णः स्वस्ति शत्रुतूर्याय बृहतीममृधाम्। यया दासान्यार्याणि वृत्रा करो वज्रिन्त्सुतुका नाहुषाणि ॥

(ऋग्वेद 6:22:10)

अर्थात् - हे राजन् ! आप सत्यविद्या के दान और उपदेश से शूद्र के कुल में उत्पन्न हुऐं को भी द्विज फरिये , इस प्रकार से ऐश्वर्य को प्राप्त कराया जाय तथा शत्रुओं को निधारण करके सुख की वृद्धि कीजिये ।

♦प्रश्न - क्या उपनयन के बिना भी वेदाध्यन अथवा ब्रह्ज्ञान लेना संभव है ?

उत्तर - इस शंका का समाधान स्वयं महर्षि वेदव्यास ने किया है । वेदव्यास के अनुसार चारों वर्णों के गुणवान् बालकों को ब्रह्मविद्या और वेदाध्ययन का अधिकार है, गुणहीन को नहीं।

संस्कारपरामर्शात् तदभावाभिलापात्।।

(महर्षि वेदव्यास वेदान्त दर्शन 1:3:36)

व्यख्या - (संस्कार-परामर्शात्) शास्त्र के अध्ययन में उपनयन-संस्कार का सम्बन्ध बतलाया जाता है, इसलिये यह विचार उत्पन्न हुआ, किन्तु (तदभाव-अभिलापात्) कहीं उस उपनयन-संस्कार के अभाव का भी कथन मिलता है।

जैसे- तं होपनिन्ये... (शतपथ ब्राह्मण 1:5:3:13) यहाॅ उपनयन-संस्कार का विधान है और तान् हानुपनीयैतदुवाच... (छान्दोग्य उपनिषद् 5:11:7) अर्थात् प्राचीन शाल आदि ब्राह्मणों को कैकेय अश्र्वपति ने वैश्र्वानर-विद्या का उपनयन-संस्कार के बिना ही उपदेश किया था।

अत: उपनयन संस्कार के बिना भी ब्रह्मविद्या की शिक्षा की जा सकती है। अत: ब्रह्मविद्या के अधिकार में उपनयन संस्कार का कोई प्रतिबन्ध नहीं है।

शूद्रों को भी था उपनयन का अधिकार

हमने पढ़ा और सुना है कि एक समय पर सनातन धर्म पूरे विश्व में फैला हुआ था किंतु आज यह सिकुड़कर विश्व के एक छोटे हिस्से तक ही मुख्य रूप से सीमित रह गया है इसका कारण यह है कि हमने अपने ऋषियों द्वारा रचित का प्राचीन ग्रंथों को मिलावट करके दूषित किया जिसके कारण सामाजिक व्यवस्था बिगड़ी और यह धार्मिक पतन हुआ।

【 मिलावट के प्रमाण 】

मौजूदा वक्त में आपस्तम्ब-धर्मसूत्रम् 1:1:6 जो सूत्र मौजूद है उसके अनुसार शूद्र के सन्तान का उपनयन नहीं हो सकता -

अशूद्राणामदुष्टकर्मणामुपायनं वेदाध्ययनमग्न्याधेयं फलवन्ति च कर्माणि।
(आपस्तम्ब-धर्मसूत्रम् 1:1:6)

अर्थात् - शूद्र और दुष्टकर्म करने वालों को छोड़कर शेष के लिये उपनयन,वेदाध्यन, अग्नि का आधान विहित किया गया है ।

परंतु याज्ञिक रामकृष्ण द्वारा लिखी गई " संस्कार गणपति " नाम का ग्रंथ में यही सूत्र लिखा गया है किंतु उसमें शूद्रों के लिए उपनयन का विधान है इससे पता चलता है कि जब यह ग्रंथ लिखा गया तब ये मिलावट नहीं की गई थी बाद में आपस्तंब धर्मसूत्र में ज्यादातर सूत्रों को संपादित कर दिया गया -

अथ शूद्राणामुपनयनं । आपस्तंबः । शूद्राणामदुष्टकर्मणामुपनयनं । मद्यपानरहितानामिति ॥

(आपस्तम्ब-धर्मसूत्रम् 1:1:6)

(संस्कारगणपति:कांड 2 कण्डिका 2), पृष्ठ 642

अर्थात् - यह शूद्र उपनयन के विषय में आपस्तंब ऋषि का मत - शूद्र और दुष्टकर्म वाला मनुष्य के लिए भी उपनयन का विधान है किन्तु वो मदिरापान न करता हो ।

नीचे के लिंक पर क्लिक करके आप संकर गणपति के उस पृष्ठ को ऑनलाइन पढ़ सकते है

https://archive.org/details/in.ernet.dli.2015.352257/page/n704/mode/1up?view=theater

इसके अत्रिरिक्त इस सूत्र पर पुराने भाष्यों में भी यही सूत्र लिखा है । शुक्लयजुर्वेदीय पारास्करगृह्यसूत्र 2:5:43 सूत्र के भाष्य में आचार्य गदाधर ने आपसम्बधर्म सूत्र के

"शूद्राणामदुष्टकर्मणामुपायनं वेदाध्ययन मग्न्याधेयं फलवन्ति च कर्माणि"

सूत्र को उद्धृत करके लिखा है -

'शूद्राणामदुष्टकर्मणामुपनयनम् । इदं च रथकारस्योपनयनम् । तस्य च मातामहीद्वारकं शूद्रत्वम् । अदुष्टकर्मणां मद्यपानादिरहिता नामिति ।।

(शुक्लयजुर्वेदीय पारास्करगृह्यसूत्र 2:5:43 गदाधर भाष्य)

भावार्थ - आचार्य गदाधर ने लिखा है, अदुष्ट अर्थात् जो शराब नहीं पीते हैं ऐसे शूद्रों का उपनयन संस्कार करना चाहिये ।

यद्यपि आपस्तम्बधर्मसूत्र के में उक्त सूत्र में पाठ भेद किया गया है तथापि पारास्करगृह्यसूत्र के गदाधर भाष्य में उक्त सूत्रका प्राचीन पाठ और उस पर गदाधर भाष्य उपलब्ध होता है । जिसमें स्पष्ट है, शूद्र का उपनयन, वेदाध्ययन और अग्निहोत्र सभी कर्म विहित हैं। ध्यान रहे जाति वर्ण नहीं है ।

【आदिवासी भी आर्य है तथा उनका उपनयन】

◙ आज मौजूदा वक्त में निषाद जाति बन गई है किंतु प्राचीन काल में निषाद होने की उपाधि उसे देते थे जो आदिवासी होते थे तथा जंगल में रहते थे ।

पञ्चजन कौन है इसपर महर्षि यास्क लिखते है -

"पञ्चजनाः चत्वारो वर्णाः, निषादः पञ्चमः।"

(निरुक्त 3:8)

अर्थात् - चार वर्ण और पञ्चम कोटि का निषाद अर्थात् अरण्य ।

वेदों में पञ्चजनो को एक साथ यज्ञादि करने के मंत्र प्रतिपादित है जैसे -

यज्ञियासः पञ्चजनाः मम होत्रं जुषध्वम्।

(ऋग्वेद 10:53:4)

अर्थात् - पञ्चजन (ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र, निषाद) मेरा यज्ञ होत्र करें।

अब इस से स्पष्ट है कि यज्ञाधिकार सब को है, जब यज्ञाधिकार है तो बिना यज्ञोपवीत धारण किए कोई उपनयन नहीं कर सकता यह नियम तो मनु का ही था ।

◙ कामिक आगम के रचनाकार को प्राचीन शास्त्रों में कई शूद्र पुत्रों के ऋषियों द्वारा उपनयन के कई प्रमाण मिले होंगे तभी उन्होंने ये कहा है की -

क्षत्रविद्वद्ध जातीनां यदुक्तम् चोपवीतकम॥

पूजादि मन्त्रकाले तु धार्यन्नो घार्यमेव वा।

अनुलोमादि वर्णानां युक्तायुक्त विचार्य च॥

जातिभेदोक्त विधिना न धार्य धार्यमेव च।

(कामिका आगम 3:91-92)

अर्थात् -पवित्र धागा (जनेऊ) जिसे क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों द्वारा पहना जाना बताया गया है उन्हें केवल देवता-पूजा और मंत्र के समय ही पहना जाना चाहिए। अन्य समय में, वे पवित्र धागा पहन भी सकते हैं और नहीं भी। मिश्रित जातियों और अन्य लोगों के लिए निर्धारित पवित्र धागा पहनने के सटीक नियमों से अच्छी तरह से परामर्श किया जाना चाहिए और यह तय किया जाना चाहिए कि वे पवित्र धागा पहन सकते हैं या नहीं।

यह सब केवल कहने की बाते नहीं बल्कि ये सत्य प्रमाण है तभी पंचयज्ञों का अधिकार शूद्रों को भी है तभी लघुविष्णु-स्मृति पञ्च यज्ञों का विधान शूद्र के लिए भी करती है -

पञ्चयज्ञविधानं तु शूद्रस्यापि विधीयते ॥

(लघुविष्णु-स्मृति 5:9)

【 उपनयन न होने के दुष्परिणाम 】

◙ जन्मतः व्यक्ति अज्ञानी होता है और अज्ञानी व्यक्ति को ही शूद्र कहा गया है प्राचीन तैतरीय ब्राह्मण ग्रन्थ में , उपनयन के उपरान्त मंत्र दीक्षा के बाद जब वो पढ़ाई पूरी करके द्विज बनता है तो वो अपने माता पिता का नाम रोशन करता है । किंतु धार्मिक शास्त्रों में या विधान है कि पुत्र चाहे द्विज का हो या शूद्र का अगर उसका उपनयन संस्कार नहीं होता तो वह शूद्र ही रह जाता है। जैसा कि शास्त्रों में वर्णित है -

अत ऊर्ध्वं त्रयोऽप्येते यथाकालं असंस्कृताः ।

सावित्रीपतिता व्रात्या भवन्त्यार्यविगर्हिताः ।

(मनुस्मृति 2:39)

अर्थात् - निर्धारित समय पर संस्कार न होने पर द्विजो की संताने यज्ञोपवीत से पतित हुए श्रेष्ठ व्यक्तियों द्वारा निन्दित 'व्रात्य' होकर पतित हो जाते हैं ।

'अत ऊध्र्वं पतितसावित्रीका भवन्ति ।।६।।

(आश्वालायन गृह्यसूत्र)

अर्थात् - यदि निर्धारित काल में इनका यज्ञोपवीत न हो तो वे पतित मानें जावें ।

◙ George Buhler ने संस्कृत शास्त्रों के अपने कम ज्ञान के कारण व्रात्य को बहिष्कृत के रूप में अनुवादित किया लेकिन शास्त्रों में श्रीमद् भागवतम 12:1:36 व्रात्य एक ऐसा शब्द है जो बिना संस्कार के शूद्रों के लिए प्रयोग किया जाता है। जैसे -

सौराष्ट्रावन्त्याभीराश्च शूरा अर्बुदमालवा: ।

व्रात्या द्विजा भविष्यन्ति शूद्रप्राया जनाधिपा: ॥ ३६ ॥

(श्रीमद् भागवतम 12:1:36)

अर्थात् - ज्यों-ज्यों घोर कलियुग आता जायगा, त्यों-त्यों सौराष्ट्र, अवन्ती, आभीर, शूर, अर्बुद और मालव देशके ब्राह्मणगण व्रात्य संस्कारशून्य हो जायेंगे तथा राजालोग भी शूद्रतुल्य हो जायेंगे ॥ ३८

सिन्धोस्तटं चन्द्रभागां कौन्तीं काश्मीरमण्डलम् ।

भोक्ष्यन्ति शूद्रा व्रात्याद्या म्लेच्छाश्चाब्रह्मवर्चस: ॥ ३७ ॥

(श्रीमद् भागवतम 12:1:37)

अर्थात् - सिंधु नदी के किनारे की भूमि, साथ ही साथ चंद्रभागा, कौन्तीपुरी और कश्मीरी पर व्रात्य शूद्रों (संस्कार के बिना) और म्लेच्छो द्वारा शासित होंगे।

यहाँ पर ब्राह्मण और क्षत्रिय की संतानों को व्रात्य (शुद्र) कहा गया है उपनयन संस्कार से रहित होने के कारण इससे ये प्रमाणित होता है कि उपनयन रहित जो भी है वो शूद्र है ।

【 शूद्र संतान के उपनयन के उदहारण 】

◙ प्रथम प्राचीन प्रमाण -

ऋषयो वै सरस्वत्यां सत्रमासत । ते कबषमैलूषं सोमादनयन्- "दास्याः पुत्रः, कितवो ऽब्राह्मणः कथं नो मध्ये दीक्षिष्टेति ?" तं बहिर धन्वोदवहन्—अत्रैनं पिपासा हन्तु, सरस्वत्या उदकं मा पातु इति । स बहिर् धन्वोदूढः पिपासया वित्त एतदपोनप्त्रीयमपश्यत् ।

(ऐतरेय ब्राह्मण-भाष्य 2:1:8, ऐतरेयालोचन, पृष्ठ 11-15)

भावार्थ - इलूषा के पुत्र कवष को ऋषियों ने सरस्वती के तट पर अनुष्ठित सोम यज्ञ से यह कह कर निकाल दिया कि 'यह दासी-पुत्र, जुआड़ी, अब्राह्मण हमारे मध्य में दीक्षा कैसे प्राप्त करेगा ?" उसे मरुभूमि में भगा दिया गया कि वह प्यासा मर जाय और सरस्वती का जल न पी पाये। जब वह प्यास से व्याकुल हो गया तब उसे ऋग्वेद के दशम मण्डल के अपोनप्त्रीय । अपां नपात्। आपः सूक्त के दर्शन हुए, अर्थात् उस पर उक्त वेद-सूक्त प्रकट हुआ। वह सूक्त वेद में कवप ऐलूष के नाम से अब तक चला आ रहा है।

यह कथा ऐतरेय ब्राह्मण की है , इसी प्रकार इतरा दासी के पुत्र महिदास ऐतरेय पर ऐतरेय ब्राह्मण का प्रादुर्भाव हुआ था। विद्वानों ने अपना मत दिया है की महर्षि ऐतरेय ऐतरेय ब्राह्मण की रचना से पहले उपनयन संस्कार किया था ।

◙ द्वितिय प्राचीन प्रमाण -

श्री रामानुजाचार्य जी वैष्णव मत के थे और वैष्णव मत के प्रवर्तक "शठकोप" थे जो कंजर जाति के थे। शठकोप को तमिल प्रदेश में द्विव्य कवि कहा जाता था। नम्मालवार का दूसरा नाम शठकोप बतलाया जाता है। इनके परम शिष्य का नाम मधुरकवि आल्वार था । श्री नम्माल्वार जी को को मारन, शठगोपन ,परान्कुश, वकूलाभरण, वकुलाभिरामन, मघिल्मारान, शटज़ित,कुरुगूर नम्बी इत्यादि नामों से भी जाना जाता हैं।

स्वामी महेश्वरानन्दगिरिः महामण्डलेश्वर, कनखल लिखते हैं-

"एवं श्री रामानुजाचार्यसम्प्रदायेऽपि 'पल्ली' संज्ञकस्य शूद्रस्य कुले जात: शठकोप:, सच गुणकर्मभ्यामेव ब्राह्मण्यमधिगत्य श्रीवैष्णसंप्रदायस्य परमाचार्य: संवृत इति दिव्यसूरिचरित्रचतुर्थसप्तर्गोक्त वचनैरेतत् विदितं भवति। श्रेष्ठ श्रीवैष्णवाचार्य्य: 'शठकोपोऽन्त्यजात्मज:'।

जन्मकर्म - विशुद्धानां ब्राह्मणानामभूद् गुरु:।"

अर्थात् - "श्री रामानुजाचार्य-सम्प्रदाय में भी 'पल्ली' नाम के शूद्र के कुल में उत्पन्न शठकोप गुण, कर्म से श्री वैष्णव सम्प्रदाय के परमाचार्य हुए, यह 'दिव्यसूरिचरित्र' के चतुर्थसर्ग के वचन से विदित होता है। श्रेष्ठ श्रीवैष्णवाचार्य 'शठकोप' अन्त्यज-उत्पन्न थे। वे जन्म-कर्म से विशुद्ध ब्राह्मणों के भी गुरु हुए।"

आज खासकर दक्षिण भारत के वैष्णव मंदिरों में इनकी भी पूजा होती है । इनका भी उपनयन संस्कार हुवा था ।

【 मिलावट का कारण 】

शास्त्रों के सूत्रों को ऐसे समय के साथ बदले जाना साबित करता है की आज जो भी जन्म आधारित व्यवस्था पर सूत्र/श्लोक /मंत्र है वो मिलाए गए है ताकि मूल वैदिक वर्णव्यस्था का नाश किया जा सके जिससे हिन्दुओ की एकता भंग हो और इस धर्म का नाश हो सके ।

शुरू में इस वर्णव्यस्था सम्बंधित संदर्भों में मिलावट स्मार्तों ने की होगी बाद में अंग्रेजो के समय मांसाहार और मदिरापान के समर्थन में श्लोक विदेशी शक्तियों ने मिलवाये होंगे ताकि सनातन संस्कृति का नाश किया जा सके।

प्राचीन मनुस्मृती के भाष्य का प्रमाण-

मनुभाष्य लिखने वाले मेधातिथि ने मनुस्मृति 10:4 पर भाष्य करते हुवे लिखा है की –

" अष्टमे ब्राह्मणमुपनयोतैकादशे राजन्यं द्वादशे वैश्यम्" इति । कस्मिंश्चित्काले शूद्रं पठन्ति । न "ननु कालविशेषानुपादानादनियतकालं शूद्रोपनयनमस्तु ।" भवेद्यसंयुक्ता सामान्येनोपनयनस्योत्पत्तिः स्यात् । एताश्च वर्णकाल विशेषयुक्ता निमित्तार्थः स्तुतयः स्युः । न तु पृथगुत्पत्तिरस्यास्ति । तत्कस्य प्रमाणस्य सामर्थ्य नास्योपनयनमनियत कालं क्रियताम् ।

अर्थात् - आठवें वर्ष में ब्राह्मण, ग्यारहवें में क्षत्रिय और बारहवें में वैश्य को गायत्री दीक्षा दी जाएगी; और शूद्र का नाम नहीं बताया गया है। चूँकि शूद्र के संबंध में कोई समय निर्दिष्ट नहीं है, इसका सीधा सा अर्थ यह है कि उसके उपनयन के लिए कोई समय निर्धारित नहीं है। यदि उपनयन के लिए एक सामान्य निषेधाज्ञा थी ; और उस स्थिति में जातियों के संबंध में ये सभी नियम उपनयन के लिए समय को विशुद्ध रूप से प्रशंसनीय विवरण के रूप में लेना होगा। हालाँकि उपनयन के लिए ऐसा कोई सामान्य निषेधाज्ञा नहीं है। इन परिस्थितियों में, हम किस अधिकार के बल पर शूद्रों की उपनयन को बिना किसी समय के प्रतिबंध के कर सकते हैं?

इसलिए शूद्र पुत्र किसी भी समय जब वो उपनयन के योग्य हो जाये तब वो उपनयन करवा सकता है उसके लिए उचित समय नहीं निर्धारित किया गया है।

शूद्र नीच, अवर्ण , अनार्य दस्यु नहीं

धर्म शास्त्रों में लोभी मनुष्यों द्वारा मिलावट और दुष्प्रचार के कारण ऐसा काल्पनिक अत्याचारों की चित्रण किया गया है जोकि हुवा भी नहीं था । अगर हम उनकी समीक्षा करते है तो वो तथ्य सत्य प्रतीत नहीं होते ।

【 शूद्र आर्य है 】

शूद्र आर्य नहीं है यह सिद्धांत मक्समूलर था किंतु वर्तमान में बहुत से भारतीय इस बात को सच मानते हैं जोकि निराधार है।

◙ महर्षि यास्क आर्य शब्द की व्याख्या करते हुवे कहते है -

आर्य ईश्वरपुत्रः ।

(निरुक्त 6:26)

अर्थात् - आर्य ईश्वर के पुत्र है ।

◙ इससे साबित होता है सभी मनुष्य आर्य है क्यूंकि सभी मनुष्य ईश्वर के पुत्र है जैसा कि शास्त्रों में वर्णन है की सभी को ईश्वर ने बनाया है -

चातुर्वर्ण्यस्य कर्माणि चातुर्वर्ण्यं च केवलम् ।

असृजत् स हि यज्ञार्थे पूर्वमेव प्रजापतिः ॥

(महाभारत - अनुशासन पर्व 48 : 3)

अर्थात् - चारों वर्णों के कर्मों और चारों वर्गों को परमेश्वर ने प्रथम ही यज्ञ के निमित्त सृजे, उत्पन्न किए।

◙ सृष्टि के शुरवात में सभी मनुष्य आर्य थे किंतु कुछ ने अवैदिक कार्य किये और कुछ ने वेदों का त्याग कर दिया जिससे उनका वर्णव्यस्था से भहिष्कार कर दिया गया और वो अनार्य बन गए । यही कारण है कि ईश्वर सभी को पुनः आर्य बनाने का अनुमति देता है -

कृण्वन्तो विश्वमार्यम ।

(ऋग्वेद 9:63:5)

अर्थात् - ईश्वर आदेश करता है कि समस्त विश्व को आर्य बनाओ ।

◙ चारो वर्णों के मनुष्य आर्य है इस बात की पुष्टि आचार्य चाणक्य भी करते है -

व्यवस्थितार्यमर्यादः कृतवर्णाश्रमस्थितिः।

त्रय्या हि रक्षितो लोकः प्रसीदति न सीदति।।

(अर्थशास्त्र 1:3:17)

अर्थात् - वर्णाश्रम की जो स्थिति बनाई गई है उस में आर्यों की मर्यादा सन्निहित है। इस वर्णाश्रम की स्थिति से लोग प्रसन्न होते हैं उन्हें दुःख नहीं होता है।

शूद्र भी चतुर्वर्ण में आता है इसलिए वह भी आर्य हे।

【शूद्र सवर्ण है 】

"सवर्ण" का अर्थ है वर्ण-सहित, अर्थात् वर्णव्यवस्था के अन्तर्गत चारों वर्ण । अवर्ण वह है जो चारों वर्गों से बाहर हो।

म्लेच्छों ने जानबूझकर आधुनिक काल में "सवर्ण" और "अवर्ण" के गलत अर्थ प्रचारित किये ।

◙ आंबेडकर भी यही मानते थे -

सवर्ण का अर्थ है कि चार वर्णों में से एक वर्ण का होना, अवर्ण का अर्थ है चारों से परे।

(डॉ. आंबेडकर वांग्मय खंड 6 पृष्ठ 181)

【शूद्र नीच नहीं 】

एकविंश स्तोम, अनुष्टुप् छन्द,

वैराज साम, शूद्र मनुष्य:अश्व।

(तैत्तिरीय संहिता 7: 1:1)

अर्थात् - शूद्र ,अश्व के साथ ऋग्वेद और सामवेद आदि धर्मग्रन्थों के मन्त्रों की उत्पत्ति भी चरणोंसे है।

यहां पैर से शूद्र के साथ वेद मंत्रों की उत्पत्ति बताई गई है यदि शूद्र पैर से उत्पत्ति के अलंकारिक वर्णन के कारण नीच है तो क्या वेद भी नीच होंगे ,नहीं ना! यह अलंकारिक वर्णन है गुण के आधार पर इसे उसी आधार से देखना चाहिए।

【शूद्र दास नहीं 】

गुलामी करने और नौकरी करने में अंतर होता है । दास गुलामी करता है और उसको उसके काम का कुछ भी नहीं मिलता जबकि जो नौकरी करता है उसको उसके काम के बदले धन मिलता है और वर्णव्यस्था में शूद्र जो नौकरियां करते है उसके बदले में उनको उनके काम का धन मिलता है ।

◙ विभिन्न ग्रंथों में ऐसा वर्णन है की शूद्र को उसके काम का वेतन समय से मिल जाये , मनुस्मृति भी यही विवरण देती है -

राजा कर्मसु युक्तानां स्त्रीणां प्रेष्यजनस्य च ।

प्रत्यहं कल्पयेद् वृत्तिं स्थानकर्मानुरूपतः॥

(मनुस्मृति 7:125)

अर्थात् - राजा काम पर लगाये जाने वाले श्रमिकों, सेव, स्त्रियों का प्रतिदिन का वेतन, काम, पद और स्थान के अनुरूप निर्धारित कर दे।'

"स दीर्घस्यापि कालस्य तल्लमेतैव वेतनम्।"

(मनुस्मृति 8:216)

अर्थात् - यदि अवकाश से लौटने के बाद भृत्य अपने पूर्वनिर्धारित कार्य को पूर्ण कर देता है तो वह लंबे अवकाश का वेतन पाने का अधिकारी है अर्थात् भृत्य का दीर्घ अवकाश होने पर भी वेतन दिया जाना चाहिए।

वर्णव्यवस्था की विधि के अन्तर्गत नामकरण विधि में 'दास' का अर्थ 'सेवक' है, गुलाम नहीं।

【शूद्रों पर अत्याचार का खंडन 】

कई विद्वानों के भाष्य में तथा कुछ शास्त्रों में ऐसा वर्णन है कि यदि शूद्र और स्त्री वेदाध्ययन करें तो उसे कठोर दंड दिया जाए किंतु यह सब प्रक्षिप्त है तथा वेद विरोधी है ।

जैसा कि आदि शंकराचार्य के भाष्य में विवरण है -

तस्या हि शूद्रस्य वेद उपशृण्वतस्त्रपुजतुभ्यां

श्रोत्रपरिपूरणम्,उच्चारणे जिह्वाच्छेदो धारणे शरीरभेदः।

(ब्रह्मसूत्र शंकरभाष्य अपशूद्राधिकरण)

अर्थात् - शूद्र यदि वेद का मन्त्र सुन ले तो उसके कान में सीसा पिघलाकर भर दो,वेद का मन्त्र उच्चारण करे तो जीभ काट दो,वेद की पुस्तक उठाकर चले तो हाथ काट दो,यह नियम लागू होता।

खंडन :-

◙ आदि शंकराचार्य जी महाराज के अनुयायी स्वामी महेश्वरानन्दगिरि: महामण्डलेश्वर जी ने तो श्री आदि शंकराचार्य जी महाराज के भाष्य पर भी टीका-टिप्पणी करते हुए लिखा है-

"साक्षाद्वेदविरुद्धत्वात्, स्मृतिष्वेतादृशं वच:।

प्रक्षिप्तं स्यान्नृशंसैस्तु स्वार्थान्धैर्जनशत्रुभि:।"

अर्थात्- "शूद्रों का जिह्वाच्छेदन आदि की आलोचना करते हुए लिखते हैं कि ऐसा स्मृतिवचन तो साक्षात् वेद-विरुद्ध है, प्रक्षिप्त (मिलावट) हैं।"

इन्होंने स्वयं भी श्री आदि शंकराचार्य के भाष्य का खण्डन कर दिया। ऐसे वचन प्रक्षिप्त है क्युकी आदि शंकराचार्य ने एक चांडाल को अपना गुरु बना लिया था अगर वो ऐसे भेदभाव करते तो चांडाल को अपना गुरु कभी नहीं बनाते ।

आदि शंकराचार्य ने एक चांडाल को अपना गुरु बनाया था। इसका विवरण देते हुए आदि शंकराचार्य अपने ग्रंथ मनीषापञ्चकम में लिखते है -

ब्रह्मैवाहमिदं जगच्च सकलं चिन्मात्रविस्तारितं

सर्वं चैतदविद्या त्रिगुणाय शेषं माया कल्पितम्।

इत्थं यस्य दृढा मतिः सुखतरे नित्ये परे निर्मले

चाण्डालोऽस्तु स तु द्विजोऽस्तु गुरुरित्येषा मनीषा मम।। 2

अर्थात् - मैं ब्रह्म ही हूँ चेतन मात्र से व्याप्त यह समस्त जगत भी ब्रह्मरूप ही है। समस्त दृश्यप्रपंच मेरे द्वारा ही त्रिगुणमय अविद्या से कल्पित है। मैं सुखी, सत्य, निर्मल, नित्य, परब्रह्म रूप में हूँ, जिसकी ऐसी दृढ बुद्धि है वह चांडाल अथवा द्विज हो, वह मेरा गुरु है ।

शीशा पिघलाकर शूद्र के कान में डालने वाले सभी सन्दर्भ अप्रमाणित है क्युकी शीशे का आविष्कार जर्मन रसायनज्ञ जस्टिस वॉन लिबिग को श्रेय दिया जाता है। 1835 में जर्मन रसायनज्ञ जस्टस वॉन लिबिग को चांदी के गिलास दर्पण का आविष्कार किया था , इसलिए जब उस वक्त शीशा को पिघलाने की कोई मशीन नहीं थी उसका अविष्कार नहीं हुआ था तो उसको पिघला के कान में कैसे डाला जाता होगा इसीलिए ये बाद में मिलाये गए संदर्भ है ।

◙ मध्वाचार्य महाभाग करते हुए संकेत करते हैं की शास्त्र वही है जो वैदिक ग्रंथों से विरोधाभास ना करें , अगर कोई करता है तो उसे प्रक्षिप्त मान के नकार दें -

ऋग्यजुःसामाथर्वाश्च भारतं पञ्चरात्रकम् ।

मूलरामायणञ्चैव शास्त्रमित्याभिधीयते ।

यच्चानुकूलमेतस्य तच्च शास्त्रं प्रकीर्तितम् ।।

(ब्रहमसूत्र 1.1.3 पर मध्वाचार्य भाष्य के अन्तर्गत)

अर्थात् - श्रीमध्वाचार्य कहते हैं :- "चारों वेदों, महाभारत, पञ्चरात्र तथा मूल वाल्मीकी रामायण को शास्त्र कहते हैं। जो इनके अनुकूल हों (अर्थात् जिनसे उक्त ग्रन्थों के अर्थों का विरोध न हो), उन्हें भी शास्त्र कहते हैं।"

शास्त्र-शास्त्र कहकर कपोलकल्पित तथा अनार्ष ग्रन्थों को शास्त्र तथा वितण्डाओं को शास्त्र प्रमाण मानने वालों के मुख पर ज़ोरदार तमाचा मध्वाचार्यजी के इस वचन ने मार दिया ।

【शूद्र अछूत नहीं 】

शूद्र तो द्विजो के यहां नौकरी किया करते थे और घर में रहने वाला कभी अछूत नहीं होता। महर्षि मनु ने कहा है -

विप्राणां वेदविदुषां गृहस्थानां यशस्विनाम्

शुश्रूषैव तु शूद्रस्य धर्मो नैःश्रेयसः परः॥

(मनुस्मृति - 9:334)

अर्थात् - वेदों के विद्वान द्विजों, तीनों वर्गों के प्रतिष्ठित गृहस्थों के यहां सेवाकार्य (नौकरी) करना ही शूद्र का हितकारी कर्तव्य है।

यही नहीं बल्कि गुरुकुल में चारो वर्ण के माता पिता के संतान साथ में गुरुकुल में साथ-साथ पढ़ते थे इसलिए अछूत वाली बातों का प्रश्न ही नहीं उठाता -

श्रावयेच्चतुरोवर्णान् कृत्वा ब्राह्मणमग्रतः ।

वेदस्याध्ययनं हीदं तच्च कार्यं महत्स्मृतम् ॥

Visuddha Mahabharat -(महाभारत - शांतिपर्व 327:48)

Bori-(महाभारत - शांतिपर्व 314:45,46)

अर्थात् - चारों वर्णों को वेद पढ़ावे, पढ़ाते समय ब्राह्मण के संतान को सबसे आगे की पंक्ति में बिठावे। यह वेद का अध्ययन और अध्यापन कार्य ऊँचा माना गया है।

इसके अतिरिक्त मंत्रिपरिषद में भी अनपढ़ शूद्रों को स्थान मिलता था अगर वह अछूत होते तो ऐसा व्यवस्था संभव नहीं था क्योंकि वह अक्सर सभी मंत्रियों से मिलते जुलते रहते थे -

चतुरो ब्राह्मणान् वैद्यान् प्रगल्भान् स्नातकान् शुचीन् ॥

क्षत्रियांश्च तथैवाष्टौ बलिनः शस्त्रपाणिनः ॥

वैश्यान् वित्तेन सम्पन्नाने कविंशतिसंख्यया ।

त्रींश्च शूद्रान् विनीतांश्च शुचीन् कर्मणि पूर्वके

(महाभारत - शांतिपर्व 85:7-8)

अर्थात् - अब मंत्री कैसे व्यवस्थित करने चाहिये यह कहेंगे-चार ब्राह्मण जो वैद्य विद्वान्, वेद स्नातक, पवित्र हों, आठ क्षत्रिय जो बलवान् और शस्त्रधारी हों, इक्कीस वैश्य जो धन-धान्य से सम्पन्न हों, तीन शूद्र जो प्रथम से विनीत पवित्र हों।

इससे सिद्ध होता है कि शूद्र मंत्री भी होते थे। शूद्र गरीब नहीं थे (मैत्रेयी संहिता 4:2:7-10) पंचविंश ब्राह्मण (6:1:11) इसलिए छुआछूत गुलाम जैसी बातें ने केवल एक भ्रम है।

【शूद्र दस्यु नहीं 】

दस्यु शब्द के बारे में कोई प्रमाण इस बात का नहीं मिलता कि यह एक अनार्यों की जाति थी विपरीत उसके इस बात के प्रमाण अवश्य हैं कि दस्यु वे लोग थे जो आर्य धर्म नहीं मानते थे।

महाभारत में दस्यु का इस प्रकार उल्लेख है -

दृश्यते मानुषेषु लोक सर्वे वर्णेषु दस्यवः ।

(महाभारत - शांतिपर्व 65 : 23)

अर्थात् - सभी वर्गों में और सभी आश्रमों में दस्यु पाये जाते हैं।

इसलिए दस्यु शब्द किसी वर्ण -जाति विशेष का नाम नहीं था।

【गोत्रों की एकरूपता का कारण】

भारत में गोत्र परंपरा है जिससे हमें मूल पिता तथा परिवार का बोध होता है । वर्तमान में ब्राह्मण जातियों, क्षत्रिय जातियों, वैश्य जातियों और दलित जातियों में समान रूप से पाये जाने वाले गोत्र उस ऐतिहासिक वंश परंपरा के पुष्ट प्रमाण हैं, जो यह सिद्ध करते हैं कि ये सभी एक ही पिता के वंशज है। पहले वर्णव्यवस्था में जिसने गुण-कर्म योग्यता के आधार पर जिस वर्ण का चयन किया ये उस वर्ण के कहलाने लगे। बाद में विभिन्न कारणों के

आधार पर उनका ऊंचा नीचा वर्ण परिवर्तन होता रहा। बाद में वर्ण व्यवस्था विकृत हो जाती है जिसके चलते जो जहां रहता है वहीं रह जाता है ।

मूलगोत्राणि चत्वारि समुत्पन्नानि पार्थिव!

अङ्गिर: कश्यपश्चैव वसिष्ठो भृगुरेव च ॥

कर्मतोऽन्यानि गोत्राणि समुत्पन्नानि पार्थिव

नामधेयानि तपसा तानि च ग्रहणं सताम् ॥

(महाभारत - शांतिपर्व 296 : 17-18)

अर्थात् - मूलगोत्र चार उत्पन्न हुए हैं जो कि अङ्गिरा, कश्यप, वसिष्ठ और भृगु हैं। अन्य गोत्र कर्म से हैं। सत्पुरुषों के तप से वे नाम ग्रहण किए जाते हैं।

आश्चर्य की बात तो यह है कि आज सभी वर्णों के गोत्र सभी जातियों में है जैसे कौशिक ब्राह्मण भी हैं, क्षत्रिय भी कश्यप गोत्रीय ब्राह्मण भी हैं, राजपूत भी पिछड़ी जाति वाले भी वसिष्ठ ब्राह्मण भी है, दलित भी दलितों में राजपूतों और जाटो के अनेक गोत्र है। सिंहल गोत्रीय क्षत्रिय भी हैं , बनिये भी। राणा, तंवर, गहलोत गोत्रीय जाती है, राजपूत भी राठी-गोत्रीय जन जाट भी है, बनिये भी है । यह तथ्य स्वयं प्रमाण देता है कि हमारी मौजूदा वर्ण व्यवस्था जैसी है ये ऐसे पहले नहीं थी , ये विकृत हो गई है ।

गोत्रों की यह एकरूपता प्रमाणित करती है कि सभी मनुष्य एक पिता के वंशज या एक वर्ण के थे जिसको समय के साथ वर्ण व्यवस्था के नियमों में छेड़खानी तथा सिद्धांतों में परिवर्तन के कारण वर्ण व्यवस्था को जन्मना जातिवाद बना दिया जिससे ये ऊंच-नीच का भाव पैदा हुआ ।

घरवापसी शास्त्र सम्मत है या नहीं ?

【घरवापसी के शास्त्र प्रमाण 】

◙ श्रुति प्रमाण -

इन्द्रं वर्धन्तो अप्तुरः कृण्वन्तो विश्वार्यम |

अपघ्नन्तो अराव्णः ॥

(ऋग्वेद 9:63:5)

अर्थात् - हे परम ऐश्वर्ययुक्त आत्मज्ञानी ! तुम आत्म शक्ति का विकास करते हुए गतिशील, प्रमादरहित होकर कृपणता, अदानशीलता, ईर्ष्या, आदि का विनाश करते हुए आर्य बनो और सारे संसार को आर्य बनाओ।

श्रुति ही घरवापसी की आज्ञा देती है इसलिए किसी अन्य प्रमाण की आवश्यकता नहीं रह जाती अगर कोई स्मृति प्रमाण की बात करता है तो इसके स्मृति प्रमाण भी है -

◙ स्मृति प्रमाण-

तस्य शुद्धिं प्रवक्ष्यामि यावदेकं तु वत्सरम् ।

चान्द्रायणं तु विप्रस्य सपराकं प्रकीर्तितम् ||८

पराकमेकं क्षत्त्रस्य पादकृच्छ्रण संयुतम् ।

पराकाधं तु वैश्यस्य शूद्रस्य दिनपञ्चकम् ॥६

नखलोमविहीनानां प्रायश्चित्तं प्रदापयेत् ।

चतुर्णामपि वर्णानामन्यथाऽशुद्धिरस्ति हि ||१०

(देवलस्मृति 7-10)

अर्थात् -शुद्धि का वार्षिक उपाय –एक वर्ष तक चांद्रायण कर पराक व्रत करने वाला ब्राह्मण पुनःहिन्दू विप्र हो जाएगा। अन्य जाति का व्यक्ति इससे कम प्रायश्चित करेगा। यदि क्षत्रिय है तो वह एक पराक और एक कृच्छ्र व्रत करके ही शुद्ध हो जाएगा। वैश्य व्यक्ति आधा पराक व्रत से पुनः हिन्दू हो जाएगा। शूद्र व्यक्ति पांच दिन के उपवास से शुद्ध हो जाएगा। शुद्धि के अंतिम दिन बाल और नाखून अवश्य कटवाना चाहिए।

【घरवापसी के उदाहरण】

अब देखते है सनातन धर्म के 7 प्रमुख स्थलों में लोगो ने जब इस्लाम अपनाया तो वहां घरवापसी किसने की -

यंत्राणि कारयामासुः सप्तस्वेव पुरीषु च ।

तदघो ये गता लोकास्सर्वेते म्लेच्छतां गताः। ५०

महत्कोलाहलं जातमायणां शोककारिणाम् ।

(भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व -4 अध्याय 21:50)

अर्थात् -म्लेच्छों ने सात पवित्र पुरीयो में अपनी मस्जिदें बना ली जो उनके वश में आये म्लेच्छ बन गये तब तमाम आर्यों में एक कोलाहल मच गया।

◙ गौड़ीय वैष्णवों द्वारा जगन्नाथ पूरी में घरवापसी-

श्रुत्वा ते वैष्णवाः सर्वे कृष्ण चैतन्य सेवकाः ।

दिव्यं मंत्रं गुरोश्चैव पठित्वा प्रययुः पुरीः |५१

(भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व -4 अध्याय 21:51)

अर्थात् -तब वैष्णव धर्म्मानुयायी कृष्ण चैतन्य के सेवक अपने गुरु से योग्य शिक्षा लेकर पुरी में फैल गये (और म्लेच्छों की शुद्धि की।)

रामानंदी वैष्णवों द्वारा अयोध्या में घरवापसी-

रामानन्दस्य शिष्योवै चायोध्यायामुपागतः ।

कृत्वा विलोमं तं मंत्रं वैष्णवाँस्तानकारयत् ॥५२

भाले त्रिशूल चिन्हं च श्वेत रक्तं तदाभत्व ।

कण्ठे च तुलसीमाला जिहवा राममयी कृता ॥५३

म्लेच्छास्ते वैष्णवाश्चासन् रामानन्द प्रभावतः ।

संयोगिनश्च ते ज्ञेया रामानन्दमते स्थिताः ॥५४

आर्य्याश्च वैष्णवा मुख्या अयोध्यायां बभूविरे ॥

(भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व -4 अध्याय 21:52-54)

अर्थात् -रामानन्द का शिष्य अयोध्या में गये और वहां म्लेच्छों के उपदेशों को खण्डन कर उनको वैष्णव धर्मी बनाया माथे में त्रिशूलाकार वैष्णव तिलक दिया । गले में तुलसी की माला पहरा राम नाम का उपदेश दिया वह सम्पूर्ण म्लेच्छ रामानन्द के प्रभाव से वह संयोगि वैष्णव बने और वह मुख्य आर्य अयोध्या में रहने लगे।

◙ निम्बार्क वैष्णव निम्बार्काचार्य द्वारा काँची में घरवापसी-

निम्बादित्योगतो धीमान् सशिष्यः कांचिकांपुरीम्

म्लेच्छ यंत्रं राजमार्गे स्थितं तत्र ददर्श है।५५ ।

विलोमं स्वगुरोमंत्रं कृत्वा तत्र स चावसत् ।

वंशपत्र समारेखा ललाटे कण्ठमालिका ।५६॥

गोपी बल्लभ मंत्रोहि मुखे तेषां रराजसः ।

तदधो ये गता लोका वैष्णवाश्च बभूविरे ।५७

म्लेच्छाः संयोगिनो ज्ञेया आर्यास्तन्मार्ग वैष्णवाः

(भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व -4 अध्याय 21:55-57)

अर्थात् -बुद्धिमान् निम्बादित्य (निम्बार्काचार्य) कांची में गया और वहां पर म्लेच्छों के विरुद्ध उपदेश कर सब को अपने वश में करके वैष्णव बना आया। उनके मस्तक में वंश पत्र के तुल्य तिलक कण्ठ में माला तथा गोपी बल्लभ का मन्त्र सिखाता हुआ और वह सब वैष्णव बने।

◙ रूद्र वैष्णव विष्णु स्वामी द्वारा हरिद्वार में घरवापसी -

विष्णु स्वामी हरिद्वारे जगाम स्वगणैर्वृतः ।

"तत्रस्थितं महामंत्रं विलोमं तच्चकार ह ॥

तदघो ये गता लोका आसन् सर्वे च वैष्णवाः ।५९

(भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व -4 अध्याय 21:59)

अर्थात् -विष्णु स्वामी हरिद्वार में गया और वहां म्लेच्छों के विरुद्ध प्रचार कर सब को वैष्णव बनाया एवं बाणी भूषण आदि विद्वानों ने काशी आदि स्थानों में जाकर सहस्रों म्लेच्छों को शुद्ध किया।

◙ ब्रह्म वैष्णव मध्वाचार्य द्वारा मथुरा में घरवापसी-

मथुरायं रामायतो मध्वाचार्यो हरिप्रियः ॥ ६१

राजमार्गे स्थितं यन्त्रं विलोम म चकार ह ।

तदधो ये गता लोकां वैष्णवास्तस्य पक्षगाः ||६२

करवीरपत्रसदृशं ललाटे तिलकं शुभम् ।

स्थितम् नासार्द्धभागान्ते कण्ठे तुलसि मालिका॥६३

राधाकृष्णशुभं नाम मुखे तेषां बभूव ह ।

(भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व -4 अध्याय 21:61-63)

अर्थात् -मथुरा में हरिप्रिय मध्वाचार्य की यात्रा हुई। उन्होंने राजमार्ग में मस्जिद को देखकर उसे विलोम (मंदिर मे परिवर्तित) किया जिससे उसके नीचे पहुँचने वाले सभी वैष्णव हो जाते थे। वहाँ के वैष्णव वेश में भाल में करवीर पत्र के समान शुभ तिलक भी, जो नासिका के आधे भाग तक स्थित रहती है, कंठ में तुलसी की माला और मुख से सदैव राधाकृष्ण का परमोत्तम नामोच्चारण होता था।

◙ कण्व ऋषि द्वारा मिश्र देश में घरवापसी -

सरस्वत्याज्ञया कण्वो निश्रदेशमुपाययौ ।

म्लेच्छान्संस्कृतमभाष्य तदा दशसहस्रकान् ॥

वशीकृत्य स्वयम्प्राप्तो ब्रह्मावर्ते महोत्तमे ॥१५

(भविष्य पुराण प्रतिसर्ग पर्व -4 अध्याय 21:15)

अर्थात् - सरस्वती (विद्या) की प्रेरणा से कण्व ऋषि मिश्र देश में गया और वहां दश हजार म्लेच्छों को शुद्ध कर और पढ़ा कर और अपने वशीभूत करके पचित्र ब्रह्मावर्त्त में लाया।

【शिलालेखीय प्रमाण】

◙ नाशिक जिले में मिले शिलालेख में लिखा है-

'सिधं ओतराहम दत्ता मिति यकस योणकस धंम देव पुतस इन्द्राग्नि दतस धर्मात्मना "

इस से प्रतीत होता है कि उत्तर (सरहद) से आए हुए यवन के पिता पुत्र को संस्कार कर घम्भदेव और पुत्र को इन्द्राग्निदत्त बना कर आर्य बनाया।

◙ हिन्दुस्तान की उत्तर और तुर्क लोगों का राज्य था जिसको राजतरंगिणी नामक पुस्तक में "तुरुक" नाम से लिखा है इसी वंश का हिमकाढफिस-नाम का एक राजा हिन्दू होकर शैव बन गया था यह मसीह की दूसरी वा तीसरी सदी में राज्य करता था इनके विशेषणों में लिखा है -

" राजाधिराजस्य सर्व लोकेश्वरस्य माहेश्वरस्य”

इसका नाम हिन्दुओं का सा नहीं है परन्तु यह शैव हिन्दु था इसके सिक्कों पर एक तरफ तुर्की टोपी और दूसरी तरफ नन्दी बैल तथा त्रिशूल हस्त एक पुरुष (शिव) की तस्वीर है जिस से सिद्ध है कि यह राजा तुर्कों के वंश में पैदा होकर भी हिन्दु हो गया ।

◙ दूसरे देशों के आये हुए लोग ब्राह्मण भी बन जाते थे , इस के बहुत से उदाहरणों में से एक " मग " जाति के लोगों का है, इन लोगों ने पहिले पहिल राजपूताना, मारवाड़, बङ्गाल तथा संयुक्त प्रान्त में बसते है, शालिवाहन के २०२८ शके के एक शिलालेख से-

देवोजीया त्रिलोकी मणिरयमरूणो यनिवा सेन पुण्यः, शाकद्वीपस्सदुग्धाम्बुनिधि वलयितो यत्र विप्रा मगाख्याः |वंशस्तद्विजानां भ्रमि लिखित तनोर्भा स्वतः स्वाङ्गामुक्तः,
शाम्बोयानानिनाय स्वयं मिह महितास्ते जगत्यां जयन्ति ॥

शाकद्वीप में मग लोक रहते थे वहां से शाम्ब (साम्ब) उन्हें यहां लाया इस वंश में छः पुरुष प्रसिद्ध कवि थे, शाम्ब ने चन्द्रभागा (चिनाव) नदी के तट पर एक मन्दिर बनवाया उस समय ब्राह्मणलोक देवपूजन को निन्द नीय कर्म समझते थे इस लिये शाम्य को कोई पुजारी न मिला और उसने शाकद्वीप से आये हुए मग जाति के लोगों को पुजारी बना दिया।

【अन्य ऐतिहासिक प्रमाण 】

◙ मराठों ने 17वीं सदी में शुद्धिकरण की व्यवस्था ही खड़ी की थी। दबाव के कारण बने मुसलमान को शुद्ध कर स्वयं छत्रपति शिवाजी ने पुनः हिन्दू बनाने का कार्य किया था। हिन्दवी स्वराज्य में भ्रष्ट किए व्यक्तियों को शुद्ध करने की चार व्यवस्थाएं दी गई हैं। यह कार्य करवाने के लिए 'पंडितराव' उपाधि धारक अधिकारी भी नियुक्त किया गया था। शुद्ध हुए व्यक्ति को शुद्धिकरण का आधिकारिक प्रमाण-पत्र दिया जाता था और उस का पंजीकरण भी स्थानीय कोतवाली में होता था। 1665-70 ई. में पुर्तगाल-शासित प्रदेशों को जीतने के बाद शिवाजी ने पुर्तगाली शासन को बलपूर्वक ईसाइयत में धर्मांतरित हिन्दुओं की शुद्धि के भी आदेश दिए थे।

◙ हरिहर और बुक्का राय ने इस्लाम अपना लिया था लेकिन एक संत ने इनकी घरवापसी (शुद्धि) करवाई और इन्होने विजयनगर साम्राज्य की नींव रखी।

सनातन धर्म की आधारशिला गुण कर्म के आधार पर

सनातन धर्म में समय समय पर ऐसे महापुरुष हुवे जिन्होंने धर्म का उत्थान किया जो अलग अलग वर्ग से थे ये इसलिए संभव हो सका क्यूंकि सनातन धर्म हमेशा से गुण कर्म प्रधान धर्म है जिसमे व्यक्ति का गुण महत्व रखते है ख़ानदान नहीं उदाहरण के तौर पर आप इनके बारे में पढ़िए -

1- 【महर्षि ऐत्रेय महिदास】 : परंपरा के अनुसार उनकी माता 'इतरा' नाम की दासी थीं। इस ऋषि को ऐत्रेय ब्राह्मण के संकलन का श्रेय दिया जाता है।

2- 【ऋषिका लोपामुद्रा】 : यह विदर्भ की एक क्षत्रिय राजकुमारी थीं, जिन्होंने महर्षि अगस्त्य से विवाह किया था। यह ऋग्वेद के कुछ श्लोकों की द्रष्टा हैं। इनके और महर्षि अगस्त्य के बीच कई संपादन संवाद पुराणों में दर्ज हैं।

3- 【महर्षि विश्वामित्र】 : यह 'विश्वरथ' नाम के क्षत्रिय थे। इनको 'गायत्री मंत्र' की सर्वोत्कृष्टता को प्रकट करने का श्रेय दिया जाता है। महर्षि विश्वामित्र ने अपनी आध्यात्मिक ज्ञान के कारण ब्राह्मणत्व को प्राप्त किया।

4- 【महर्षि वेद व्यास】 : यह पाराशर ऋषि से सत्यवती नाम की एक मछुआरे-महिला के पुत्र थे। इनका जन्मदिन 'गुरु-पूर्णिमा' के रूप में मनाया जाता है। महाभारत और कई अन्य सनातन ग्रंथों के संकलन का श्रेय इन्हें ही दिया जाता है।

5- 【महर्षि मातंग】: यह एक शूद्र माता और एक वैश्य पिता के पुत्र थे। असल में, चांडालों को अक्सर (वराह पुराण 1.139.91) जैसे अंशों में 'मतंग' के रूप में संबोधित किया जाता है।

6- 【महर्षि वाल्मीकि】: यह ऋषियों के वंशज थे लेकिन चांडाल बन गए थे (सामाजिक बहिष्कार कर दिया गया)चांडाल रत्नाकर नाम दिया गया था, क्योंकि इन्होने हत्या की और राजमार्ग डकैती की थी। प्रजापति ब्रह्मा द्वारा इनका सुधार किया गया और दिव्य ऋषि नारद से प्रेरित होकर इन्होने हिंदू महाकाव्य सर्वोत्कृष्ट- रामायण रचना किया ।

7- 【ऋषिका सुलभा मैत्रेयी】: यह एक क्षत्रिय महिला थीं जिन्होंने ऋग्वेद की शाखा सौलभा को प्रख्यापित किया था। उनकी गिनती ऋग्वेद के उन श्रद्धेय आचार्यों में होती है जिनके लिए कौशिकी ब्राह्मण जैसे ग्रंथों में सम्मान दिया गया है। सौलभा ब्राह्मण अब खो गया है, लेकिन काशिका में नाम का उल्लेख किया गया है। विदेह के राजा जनक के साथ ऋषिका सुलभा का आध्यात्मिकता पर संवाद है महाभारत के शांति पर्व में दर्ज है।

8- 【भक्त नम्मालवर】: आलवार वैष्णव संतों में सबसे प्रमुख, ये शूद्र माता पिता की संतान थे। इनका जन्म अलवारथिरुनागिरि (कुरुगुर) 3059 ईसा पूर्व में हुवा था । नम्मलवार को बारह अलवरों की पंक्ति में पांचवां माना जाता है। उन्हें वैष्णव परंपरा का एक महान रहस्यवादी माना जाता है। उन्हें बारह अलवरों में सबसे महान भी माना जाता है और नलयिर दिव्य प्रबंध में 4000 श्लोकों में से उनका योगदान 1352 श्लोकों में है । नाम्मलवार ने चार ग्रन्थ की रचना की हैं । वे इस प्रकार है -

तिरुविरुत्तम(ऋग वेद सामान)

तिरुवासिरियम (यजुर वेद सामान)

पेरिय तिरुवन्दादी (अथर्व वेद सामान)

तिरुवाय्मोळि (साम वेद सामान)

इन्हे “वेदम तमिल सेय्द मारन” नाम से भी सम्बोधित किया जाता हैं । इसका अर्थ हैं की संस्कृत वेदों का सारार्थ तमिल प्रभंधा में अनुग्रह करने वाले मारन । अन्य आल्वारों के प्रभंध वेदों के अंग (जैसे शिक्ष, व्याकरण इत्यादि) माने जाते हैं और तिरुवाय्मोळि को 4000 दिव्य पशुरो का सार संग्रह माना जाता हैं।

9- 【नरसी मेहता】: उनका जन्म 15 वीं सदी में एक वैश्य परिवार में हुआ था, जो गुजरात के एक प्रसिद्ध वैष्णव संत हैं। हालांकि कुछ लोगों का मानना है वह ब्राह्मण थे। उनकी एक रचना- "वैष्णव जन" थी।

10- 【संत रविदास】: वे एक मोची थे, और इसलिए शूद्र मूल के थे। उन्होंने भक्ति आंदोलन को आगे बढ़ाया इनकी 16 रचनाओं को आदि ग्रंथ- सिख ग्रंथ में शामिल किया गया था।

11- 【संत मीरा】: यह मेवाड़ की एक राजपूत क्षत्रिय राजकुमारी थीं और उन्होंने अपना जीवन भगवान कृष्ण की सेवा में समर्पित कर दिया। भगवान कृष्ण को संबोधित उनकी सुंदर काव्य रचनाएँ हैं: जो आज तक हिंदुओं द्वारा बड़े उत्साह के साथ पाठ किया जाता है।इन्होने वैष्णव मत का प्रचार प्रसार किया।

12- 【स्वामी विवेकानंद】: आधुनिक हिंदू धर्म के अग्रणी सुधारकों में से एक, वह बंगाल की कायस्थ उपजाति के थे । इन्होने अमेरिका और यूरोप में वेदांत का संदेश फैलाया और उनके लेखन और भाषण "द कलेक्टेड राइटिंग्स ऑफ़ स्वामी विवेकानंद" में निहित हैं । इन्होने रामकृष्ण मिशन- एक धार्मिक संगठन की स्थापना की अपने गुरु स्वामी रामकृष्ण परमहंस की शिक्षाओं का प्रचार-प्रसार किया। धर्मांतरित हुवे लोगो की घर वापसी का काम विवेकानंद ने अपने धार्मिक संगठन रामकृष्ण मिशन द्वारा करवाया।

13- 【संत चोखामेला 】: यह एक महार, मराठी भक्ति आंदोलन में 14 वीं शताब्दी की एक प्रमुख हस्ती हैं। वे संत नामदेव के शिष्य थे, स्वयं एक शूद्र और भगवान विट्ठल के प्रबल भक्त थे। उन्होंने कई प्रसिद्ध अभंग लिखे जो भगवान विट्ठल (कृष्ण) को समर्पित भक्ति कविता हैं।

14- 【संत गुरु घासी दास】 : इनका जन्म रायपुर, छत्तीसगढ़ (1756–1850) में निम्न जाति के परिवार में हुआ था। दलित संत गुरु घासी दास जनता को हिंदू धर्म के सतनामी संप्रदाय का प्रचार किया और छत्तीसगढ़ में सतनामी संप्रदाय की स्थापना की।इन्होने हिन्दू धर्म त्याग कर अन्य धर्म अपना लिए आदिवासी हिन्दुओ की घर वापसी करवाई । उनके काम के परिणामस्वरूप राज्य में कई दलित और बहिष्कृत समुदायों का सामाजिक और धार्मिक उत्थान हुआ।

15- 【संत बलराम हादी 】: इनका जन्म 18 वीं शताब्दी में हुआ , बलराम हादी ने बंगाल के नादिया क्षेत्र में बलहादी/बलरामी संप्रदाय की स्थापना की। वह हादी निम्न जाति के थे। इनके ज्ञान के कारण लोगो ने इन्हे राम का अवतार मान लिया। उन्होंने जिस धर्म का प्रचार किया वह गृहस्थों के लिए था और हादी, डोम, बगदी, मुची, बेडे जैसे निम्न पिछड़ी जातियां अनुयायी थे और यहां तक कि मुसलमानों के बीच भी इनको प्रसिद्धि मिली और वह के मुस्लिम भी इनके अनुयायी बने। इन्होने जातिवाद का विरोध किया और मुक्ति प्राप्त करने के लिए भक्ति और तपस्वी के मार्ग की वकालत की।

वर्ण परिवर्तन और वर्ण व्यवस्था

वर्ण शब्द "वृञ" धातु से बनता है जिसका मतलब है चयन या वरण करना है इसलिए यास्क मुनि ने निरुक्त में कहा है कि ‘‘वर्णो वृणोतेः’ ’ (निरुक्त 2 : 3)

अर्थात् - वर्ण उसे कहते हैं जो वरण अर्थात् चुना जाये .

वर्ण शब्द के अर्थ से ही स्पष्ट है कि यहाँ व्यक्ति को स्वतन्त्रता थी कि वह किस वर्ण को चुनना चाहता है।

【 महर्षि मनु का मत 】

मनुस्मृति में इस बात की प्रमाणिकता मिलती हैं -

शूद्रेण हि समस्तावद् यावत् वेदे न जायते।

-(मनुस्मृति 2:172)

अर्थात्-‘जब तक कोई वेदाध्ययन नहीं करता तब तक वह शूद्र के समान है, चाहे किसी भी कुल में उत्पन्न हुआ हो।’

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम।

क्षत्रियाज्जातमेवं तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च।

- (मनुस्मृति-10:65)

अर्थात् - ब्राह्मण शूद्रता को प्राप्त हो जाता है और शूद्र ब्राह्मणत्व को। इसी प्रकार क्षत्रिय और वैश्य से उत्पन्न संतान भी अन्य वर्णों को प्राप्त हो जाया करती हैं।

शुचिरुत्कृष्टशुश्रूषूर्मृदुवागनहंकृत: ।

ब्राह्मणद्याश्रयो नित्यमुत्कृष्टां जातिमश्नुते

(मनुस्मृति- 9:335)

अर्थात् – शुद्ध-पवित्र, अपने से उत्कृष्ट वर्ण वालों की सेवा करने वाला, मधुरभाषी, अहंकार से रहित, सदा ब्राह्मण आदि तीनों वर्णों की सेवा में संलग्न शूद्र भी उत्तम ब्रह्मजन्म के अतंर्गत दूसरे वर्ण को प्राप्त कर लेता है ।

* ब्रह्मजन्म से अभिप्राय शिक्षित होने से है। शिक्षित होने को दूसरा जन्म भी कहा गया है ।

मनुस्मृति में, वर्ण परिवर्तन सिद्धान्त को नष्ट करने के लिए इससे पहले एक श्लोक प्रक्षिप्त कर दिया है जिसमें यह दिाया गया है कि वर्णपरिवर्तन सातवीं पीढ़ी में होता है। ऐसा विचार मनु की मान्यता के विरुद्ध है। पीढ़ियों का हिसाब संभव भी नहीं है।

वर्णपरिवर्तन के उदाहरण भी भारतीय प्राचीन इतिहास में मिलते हैं और इस सिद्धान्त की पुष्टि-परपरा भी। मनुस्मृति के उक्त श्लोकों के भावों को यथावत् वर्णित करने वाले श्लोक महाभारत में भी उपलध होते हैं।

【 वेदों का मत 】

त्व� ह्या३ङ्ग दैव्य पवमान जनिमानि द्युमत्तमः । अमृतत्वाय घोषयन् ॥९३८॥

(सामवेद » - उत्तरार्चिकः » मन्त्र संख्या - 938)

पदार्थान्वयभाषाः -

हे (अङ्ग) भद्र, (दैव्य) विद्वान् गुरु के शिष्य, (पवमान) चित्तशुद्धिप्रदाता आचार्य ! (द्युमत्तमः) अतिशय ज्ञानप्रकाश से युक्त (त्वं हि) आप (अमृतत्वाय) सुख के प्रदानार्थ (जनिमानि) शिष्यों के ब्राह्मण-क्षत्रिय-वैश्य रूप द्वितीय जन्मों की (घोषयन्) घोषणा किया करो ॥१॥

भावार्थभाषाः -

माता-पिता से एक जन्म मिलता है, दूसरा जन्म (ब्रह्मजन्म) आचार्य से प्राप्त होता है। जब शिष्य विद्याव्रतस्नातक होते हैं उस समय आचार्य गुणकर्मानुसार यह ब्राह्मण है, यह क्षत्रिय है, यह वैश्य है इस प्रकार स्नातकों को वर्ण देते हैं। उस काल में प्रथम जन्म का कोई ब्राह्मण भी गुण कर्म की कसौटी से क्षत्रिय या वैश्य बन सकता है,क्षत्रिय भी ब्राह्मण या वैश्य बन सकता है और वैश्य या शूद्र भी ब्राह्मण या क्षत्रिय बन सकता है ॥१॥

� ऋग्वेद के एक मंत्र में एक ही परिवार के लोगों को अलग-अलग कर्म करते हुए अर्थात् अलग-अलग वर्ण का बताया गया है -

का॒रुर॒हं त॒तो भि॒षगु॑पलप्र॒क्षिणी॑ न॒ना । नाना॑धियो वसू॒यवोऽनु॒ गा इ॑व तस्थि॒मेन्द्रा॑येन्दो॒ परि॑ स्रव ॥

(ऋग्वेद » मण्डल:9» सूक्त:112» मन्त्र:3)

पदार्थान्वयभाषाः -(कारुः, अहं) मैं शिल्पविद्या की शक्ति रखता (ततः) पुनः (भिषक्) वैद्य भी बन सकता हूँ, (नना) मेरी बुद्धि नम्र है अर्थात् मैं अपनी बुद्धि को जिधर लगाना चाहूँ, लगा सकता हूँ, (उपलप्रक्षिणी) पाषाणों का संस्कार करनेवाली मेरी बुद्धि मुझे मन्दिरों का निर्माता भी बना सकती है, इस प्रकार (नानाधियः) नाना कर्मोंवाले मेरे भाव (वसुयवः) जो ऐश्वर्य्य को चाहते हैं, वे विद्यमान हैं। हम लोग (अनु, गाः) इन्द्रियों की वृत्तियों के समान तस्थिम की ओर जानेवाले हैं, इसलिये (इन्दो) हे प्रकाशस्वरूप परमात्मन् ! हमारी वृत्तियों को (इन्द्राय) उच्चैश्वर्य्य के लिये (परि,स्रव) प्रवाहित करें ॥३॥

भावार्थभाषाः मैं सूत बुननेवाला हूँ, मेरा पिता वैद्य और माता धान कूटती है, इस प्रकार अलग-अलग वर्णवाले हम एक ही परिवार के हैं हम सब समाज के पोषण में एक गौ की भांति अपना अपना योगदान करते हैं॥३॥

ऋग्वद के एक अन्य मंत्र में शूद्रों को द्विज बनाना तथा शत्रु का नाश करने का आदेश राजा को दिया गया है -

आ सं॒यत॑मिन्द्र णः स्व॒स्तिं श॑त्रु॒तूर्या॑य बृ॒हतीम॑मृ॑ध्राम्।

यया॑ दासा॒न्यार्या॑णि वृ॒त्रा करो॑ वज्रिन्त्सु॒तुका॑ नाहु॑षाणि ॥१०॥

(ऋग्वेद »मंडल:6» सूक्त:22» मंत्र:10)

पदार्थान्वयभाषाः -हे (वज्रिन्) शस्त्र और अस्त्र के धारण करनेवाले (इन्द्र) अत्यन्त ऐश्वर्य के करनेवाले ! आप (यया) जिससे (दासानि) शूद्र के कुलों को (आर्याणि) द्विजकुल और (सुतुका) उत्तम प्रकार बढ़नेवाले (नाहुषाणि) मनुष्यसम्बन्धी (वृत्रा) धनों को (आ) सब प्रकार (करः) करती हैं उस (अमृध्राम्) नहीं हिंसा करनेवाली (बृहतीम्) बड़ी सेना को (शत्रुतूर्याय) शत्रुओं के नाश के लिये करिये और उससे (नः) हम लोगों के लिये (संयतम्) किया है संयम जिसके निमित्त उस (स्वस्तिम्) सुख को करिये ॥१०॥

भावार्थभाषाः-हे राजन् ! आप सत्यविद्या के दान और उपदेश से शूद्र के कुल में उत्पन्न हुओं को भी द्विज करिये और सब प्रकार से ऐश्वर्य को प्राप्त कराय तथा शत्रुओं का निवारण करके सुख की वृद्धि कीजिये ॥१०॥

इस प्रकार यह साबित होता है कि वैदिक वर्ण व्यवस्था में वर्ण परिवर्तन होता था ।

【 सूत्र ग्रंथों का मत 】

यह परपरा सूत्र-ग्रन्थों में भी मिलती है। आपस्तब धर्मसूत्र में बहुत ही स्पष्ट शदों में उच्च-निन वर्णपरिवर्तन का विधान किया है-

धर्मचर्यया जघन्यो वर्णः पूर्वं पूर्वं वर्णमापद्यते जातिपरिवृत्तौ।

अधर्मचर्यया पूर्वो वर्णो जघन्यं वर्णमापद्यते जातिपरिवृत्तौ॥

-(आपस्तब धर्मसूत्र 2:5:10-11)

अर्थात् -निर्धारित धर्म के आचरण से निचला वर्ण उच्च वर्ण को प्राप्त कर लेता है, उस-उस वर्ण की वैधानिक दीक्षा लेने के बाद। इसी प्रकार अधर्माचरण करने पर उच्च वर्ण निचले वर्ण में चला जाता है, आचरण के अनुसार वर्णपरिवर्तन की वैधानिक स्वीकृति या घोषणा होने के बाद।

मनुस्मृति की तरह इस सूत्र में भी बहुत प्रछिप्त श्लोक है लेकिन ऐसे श्लोक मिलना बताता है कि इसके मूल अवधारणा को कैसे बदला गया

【 उपनिषद का मत 】

? याज्ञवल्क्य उपनिषद में जब अत्री ऋषि महर्षि याज्ञवल्क्य से पूछते हैं कि बिना कोई संस्कार के कोई सन्यासी ब्राह्मणत्व कैसे प्राप्त कर सकता है तो वह कहते हैं-

अथ हैनमत्रिः पप्रच्छ याज्ञवल्क्यं यज्ञोपवीती

कथं ब्राह्मण इति । स होवाच याज्ञवल्क्य इदं

प्रणवमेवास्य तद्‌यज्ञोपवीतं य आत्मा । प्राश्याचम्यायं

विधिरथ वा परिव्राड्‌विवर्णवासा मुण्डो परिग्रहः शुचिरद्रोही

भैक्षमाणो ब्रह्म भूयाय भवति ।॥ ४॥सा पन्थाः परिव्राजकानां वीराध्वनि वानाशके वापां प्रवेशे वाग्निप्रवेशे वा महाप्रस्थाने वा | एष पन्था ब्रह्मणाहानुवित्तस्तेनेति स संन्यासी ब्रह्मविदिति | एवमेवैष भगवज्निति वै याज्ञवल्क्य ।॥५॥तत्र परमहंसा नाम

संवर्तकारुणिश्वेतकेतुदूर्वासकऋरभुनिदाघदत्तात्रयशुकवामदेवहारीतक प्रभूतयोव्यक्तलिड्‌डाव्यक्ताचारा ॥ ६॥

(याज्ञवल्क्य उपनिषद 4-6)

अर्थात् - इसके पश्चात् याज्ञवल्क्य जी से अत्रि ऋषि ने पूछा- 'हे महर्षे ! यज्ञोपवीत के बिना कोई ब्राह्मण कैसे हो सकता है? याज्ञवल्क्य ऋषि ने कहा कि यह ओमकार ही उस संन्यासी का यज्ञोपवीत है, यही आत्मा है। जो पूर्वोक्त प्रकार से हवन करके उसका प्राशन कर आचमन कर लेता है। उस के लिए मात्र यही विधि है ॥ ४॥

इस प्रकार गेरुवे वस्त्र धारण करने वाला संन्यासी मुण्डनयुक्त,अपरिग्रही, पवित्रतायुक्त, किसी से द्रोह (ईर्प्या-द्वेष) न करने वाला, भिक्षाचरण करता हुआ

ब्राह्मणत्व को प्राप्त होता है, वह ब्रह्म का ज्ञाता है अर्थात् ब्रह्म की प्राप्ति के लिए समर्थ है। संन्यासियों के लिए यही मार्ग है-यही विधि है। जल प्रवेश, अग्नि प्रवेश, वीरगति, महाप्रस्थान(मृत्युमोक्ष) आदि में परिव्राजकों (संन्यासियों) के लिए यह रास्ता निर्दिष्ट किया है। इसी कारण से संन्यासी ब्रह्म का ज्ञाता होता है। यह विधि ऐसी ही है महाराज; ऐसा याज्ञवल्क्य जी ने कहा ॥५॥

यहाँ इन संन्यासियों में श्रेष्ठ परमहंस नाम वाले, अव्यक्त चिह्न को धारण करने वाले, अव्यक्त स्वभाव वाले, अनुन्मत्त होते हुए भी उन्मत्त आचरण करने वाले हैं। (इनके नाम इस प्रकार हैं-) संवर्तक, आरुणि, श्वेतकेतु, दुर्वासा, ऋभु , निदाघ, दत्तात्रेय, शुक, वामदेव, हारीतक आदि-आदि ॥ ६॥

 वज्रसूचि उपनिषद् में जब एक प्रश्न किया जाता है क्या ब्राह्मण एक जाति है तब उसमें जो कहा जाता है वह वर्ण परिवर्तन की बात को प्रमाणित सिद्ध करता है

तर्हि जाति ब्राह्मण इति चेत् तन्न । तत्र

जात्यन्तरजन्तुष्वनेकजातिसम्भवात् महर्षयो बहवः सन्ति ।ऋष्यशृङ्गो मृग्याः, कौशिकः कुशात्, जाम्बूको जाम्बूकात्, वाल्मीको वाल्मीकात्, व्यासः कैवर्तकन्यकायाम्, शशपृष्ठात् गौतमः, वसिष्ठ उर्वश्याम्, अगस्त्यः कलशे जात इति शृतत्वात् । एतेषां जात्या विनाप्यग्रे ज्ञानप्रतिपादिता ऋषयो बहवः सन्ति । तस्मात् न जाति ब्राह्मण इति ॥

(वज्रसूचि उपनिषद् -6)

अर्थात् - ब्राह्मण कोई जाति है ? नहीं, यह भी नहीं हो सकता; क्योंकि विभिन्न जातियों एवं प्रजातियों में भी बहुत से ऋषियों की उत्पत्ति वर्णित है ! जैसे – मृगी से श्रृंगी ऋषि की, कुश से कौशिक की, जम्बुक से जाम्बूक की, वाल्मिक से वाल्मीकि की, मल्लाह कन्या

(मत्स्यगंधा) से वेदव्यास की, शशक से गौतम की, उर्वशी से वसिष्ठ की, कुम्भ से अगस्त्य ऋषि की उत्पत्ति वर्णित है ! इस प्रकार पूर्व में ही कई ऋषि बिना ब्राह्मण घर में में जन्म लिए प्रकांड विद्वान् हुए हैं, इसलिए केवल कोई जाति विशेष भी ब्राह्मण नहीं हो सकती है !

� छान्दोग्य उपनिषद में वर्णन है जिसमें एक अज्ञात कुल का व्यक्ति ब्राह्मण बना . सत्यकाम जाबाल गणिका (वेश्या) के पुत्र थे परन्तु वे ब्राह्मणत्व को प्राप्त हुए।

तँ होवाच किङ्गोत्रो नु सोम्यासीति स होवाच नाहमेतद्वेद भो यद्गोत्रोऽहमस्म्यपृच्छं मातरँ सा मा प्रत्यब्रवीद्बह्वहं चरन्ती परिचरिणी यौवने त्वामलभे साहमेतन्न वेद यद्गोत्रस्त्वमसि जबाला तु नामाहमस्मि सत्यकामो नाम त्वमसीति सोऽहँ सत्यकामो जाबालोऽस्मि भो इति ॥ ४ ॥ तँ होवाच नैतदब्राह्मणो विवक्तुमर्हति समिधँ सोम्याहरोप त्वा नेष्ये न सत्यादगा इति तमुपनीय कृशानामबलानां चतुःशता गा निराकृत्योवाचेमाः सोम्यानुसंव्रजेति ता अभिप्रस्थापयन्नुवाच नासहस्रेणावर्तयेति स ह वर्षगणं प्रोवास ता यदा सहस्रँ संपेदुः ॥ ५ ॥

(छान्दोग्य उपनिषद 4.4 .4-5)

अर्थात् - सत्यकाम से वह ऋषि बोला - हे सोम्य! (तुम्हारा) गोत्र क्या है ? वह बोला - भगवन्! मैं यह नहीं जानता । जिस गोत्र का मैं हूं माता से मैंने पूछा था उसने मुझ से कहा - 'बहुत' (पुरूषों) की सेवा करती हुई (इस) सेविका ने तुझे प्राप्त किया है सो मैं यह नहीं जानती जिस गोत्र का तू है । परन्तु मैं जबाला नाम वाली हूं और सत्यकाम नाम वाला तू है भगवन्! सो मैं सत्यकाम जबाला हूं ।

ऋषि ने कहा कि ऐसी बात कोई अनार्य नहीं बोल सकता। हे सोम्य! समिधम् ला तुझ को उपनीत (उपनयन संस्कार)करूंगा । तू सत्य से पृथक् नहीं हुआ । उसको उपनयन देकर दुबली पतली और कमजोर चार सौ गाय गोशाला से निकाल कर बोला । हे सोम्य ! इनके पीछे पीछे जाओ उन गायों को हांकते हुए सत्यकाम ने कहा कि हजार गाएं हुए बिना न लौटूंगा । वह कहा जाता है कि, अनेक वर्ष वन में रहा वे गायें जब हजार हो गईं ।

【 ब्राह्मण ग्रंथों का मत 】

गुणकर्मानुसार वर्णव्यवस्था के स्पष्ट संकेत ब्राह्मण ग्रन्थों में मिलते हैं। ब्राह्मण व्यक्ति भी कर्मों के आधार पर क्षत्रिय वैश्य अथवा शूद्र बन सकता है।

स ह दीक्षमाणः एव ब्राह्मणतामभ्युपैति

(ऐतरेय ब्राह्मण 7 : 23)

अर्थात् - क्षत्रिय दीक्षित होकर ब्राह्मणतत्त्व को प्राप्त हो जाता है।

तस्मात् अपि (दीक्षितम्) राज्यन्यं वा वैश्यं वा ब्राह्मण इत्येव ब्रूयात्। ब्राह्मणो हि जायते यो यज्ञात् जायते।

(शतपत ब्राह्मण 3: 2 :1: 40)

अर्थात् - क्षत्रिय वैश्य भी यज्ञ दीक्षा ग्रहण करके ब्राह्मण वर्ग में दीक्षित हो सकता है।

यहाँ पर यज्ञ में दीक्षित होने से तात्पर्य ब्रह्मचर्याश्रम में वेदाध्ययन के समय से है। उसके बाद वह ब्राह्मण भी कर्मानुसार क्षत्रियत्व, वैश्यत्व अथवा शूद्रत्व को प्राप्त होते हैं।

ब्राह्मण ग्रंथों में भी वर्ण परिवर्तन के कई उदाहरण है जैसे -

1-वत्स शूद्र कुल में उत्पन्न होकर भी ऋषि बने ।

(ऐतरेय ब्राह्मण 2:11)

2-चक्रवर्ती क्षत्रिय राजा मनु वैवस्वत का नाभानेदिष्ट नामक पुत्र ब्राह्मण बना

(ऐतरेय ब्राह्मण 5:14)

3-सत्यकाम जाबाल अज्ञात कुल का था। वह अपनी सत्यवादिता एवं प्रखर बुद्धि के कारण महान् और प्रसिद्ध ऋषि बना।

(पंचविश ब्राह्मण 8:6:1)

4-दासी का पुत्र 'कवष ऐलूष' शूद्र परिवार का था। वह विद्वान् ब्राह्मण बनके मन्त्रद्रष्टा ऋषि कहलाया। इस ऋषि द्वारा अर्थदर्शन किये गये सूक्त आज भी ऋग्वेद के दशम मण्डल में (सूक्त 31-33) मिलते हैं, जिन पर ऋषि के रूप में इसी का नाम अंकित है। (सांयायन ब्राह्मण 12:1-3)

अलग अलग वर्ण के लोग वर्ण परिवर्तन करके ब्राह्मण बन रहे थे इसलिये मैत्रायणी संहिता में ब्राह्मण से उसका माता पिता के नाम पूछे जाने पर आपत्ति जताई गयी है -

किं ब्राह्मणस्य पितरं किमु पृच्छसि मातरं ।

श्रुतं चेदस्मिन् वेद्यं स पिता स पितामहः ॥

(मैत्रायणी संहिता 4:8:1)

अर्थात्-ब्राह्मण के माता-पिता को क्यों पूछते हो? यदि उसमें श्रतु है, तो वही उस का पिता है, वही पितामाह है।

【 महाभारत भी यही मत रखता है 】

‘ ‘कर्मणा दुष्कृतेनेह स्थानाद् भ्रश्यति वै द्विजः।’ ’

‘ ‘ब्राह्मण्यात् सः परिभ्रष्टः क्षत्रयोनौ प्रजायते।’ ’

‘ ‘स द्विजो वैश्यतां याति वैश्यो वा शूद्रतामियात्।’ ’

‘ ‘एभिस्तु कर्मभिर्देवि, शुभैराचरितैस्तथा।’ ’

शूद्रो ब्राह्मणतां याति वैश्यः क्षत्रियतां व्रजेत्।

-(महाभारत, अनुशासन 143 : 7, 9, 11, 26)

अर्थात्-दुष्कर्म करने से द्विज वर्णस्थ अपने वर्णस्थान से पतित हो जाता है।……क्षत्रियों जैसे कर्म करने वाला ब्राह्मण भ्रष्ट होकर क्षत्रिय वर्ण का हो जाता है।…….वैश्य वाले कर्म करने वाला द्विज वैश्य और इसी प्रकार शूद्र वर्ण का हो जाता है। हे देवि! इन अच्छे कर्मों के करने और शुभ आचरण से शूद्र, ब्राह्मणवर्ण को प्राप्त कर लेता है और वैश्य, क्षत्रिय वर्ण को। इसी प्रकार अन्य वर्णों का भी परस्पर वर्ण-परिवर्तन हो जाता है।

महाभारत के वनपर्व में जब युधिष्ठिर से पूछा गया अगर किसी शूद्र में ब्राह्मण के लक्षण हुवे तो वो क्या होगा इसपर युधिष्ठिर ने कहा-

शूद्रे चैतद्भवेल्लक्ष्यं द्विजे तच्च न विद्यते ।

न वै शूद्रो भवेच्छूद्रो ब्राह्मणो न च ब्राह्मणः ॥

(महाभारत - वनपर्व 177:20)

अर्थात् - यदि शूद्र में ब्राह्मणीय लक्षण हैं तो वो ब्राह्मण है और अगर किसी ब्राह्मण में ब्राह्मणीय लक्षण का आभाव है तो वो ब्राह्मण शूद्र है ।

�शिव जी महाभारत में इस विषय पर कहते है-

ज्ञानविज्ञानसम्पन्नः संस्कृतो वेदपारगः।

विप्रो भवति धर्मात्मा क्षत्रियः स्वेन कर्मणा।। 45।।

एतैः कर्मफलैर्देवि न्यूनजातिकुलोद्भवः।

शूद्रोऽप्यागमसम्पन्नो द्विजो भवति संस्कृतः।। 46।।

-(महाभारत- अनुशासन पर्व 143 : 45-46)

अर्थात् - धर्मात्मा क्षत्रिय अपने कर्म से ज्ञान-विज्ञान सम्पन्न, संस्कारयुक्त तथा वेदों का पारगंत विद्वान् ब्राह्मण होता है।देवि! इन कर्म फलों के प्रभाव से नीच जाति एवं हीन कुल में उत्पन्न हुआ शूद्र भी शास्त्र ज्ञान सम्पन्न और संस्कार युक्त ब्राह्मण होता है।

न योनिनोपि संस्कारो न श्रुतंन च संततिः

कारणानि द्विजत्वस्य वृत्तमेव तु कारणम् ॥

सर्वोष्य त्राह्मणो लोके वृत्तेन तु विधीयते।

वृत्ते स्थितस्तु शुद्रो पि ब्राह्मणत्वं नियच्छति॥

-(महाभारत- अनुशासन पर्व 143 : 50-51)

अर्थात् - भगवान शिव ने कहा ब्राह्मणत्व की प्राप्ति न तो जन्म से न संस्कार न शास्त्रज्ञान और न सन्तति के कारण है ।ब्राह्मणत्व का प्रधान हेतु तो सदाचार ही है। लोक

में यह सारा ब्राह्मण समुदाय सदाचार से ही अपने पदपर बना हुआ है |सदाचार में स्थित रहने वाला शूद्र भी ब्राह्मणत्व को प्राप्त हो सकता है ।

एतत् ते गुह्ममाख्यातं यथा शूद्रो भवेद् द्विजः।

ब्राह्मणो वा च्युतो घर्माद् यथा शुद्गत्वमाप्नुते॥ ५९ ॥

(महाभारत- अनुशासन पर्व 143 : 59)

अर्थात् -शूद्र धर्माचरण करने से जिस प्रकार ब्राह्मणत्व को प्राप्त करता है तथा ब्राह्मण स्वाधर्म का त्याग करके भ्रष्ट होकर शूद्र हो जाता है ये बताया गया है.

▯ महाभारत के वनपर्व के अन्तर्गत आरणेय पर्व के अध्याय 313 में यक्ष और युधिष्ठिर संवाद है |जिसमे यह कहा गया कि व्यक्ति द्वारा आचरण ही वर्ण का निर्धारण करता है,कुल और जाति उसका आधार कारण नही होता है |इस संवाद के प्रमुख अंश निम्नवत हैं:-

यक्ष उवाच

राजन् कुलेन वृत्तेन स्वाध्यायेन श्रुतेन वा|

ब्राम्हण्यं केन भवति प्रब्रूह्येतत् सुनिश्चितम् |(१०७)

युधिष्ठिर उवाच

श्रुणु यक्ष कुलं तात न स्वाध्यायो न च श्रुतम् |

कारणं हि द्विजत्वे च वृत्तमेव न संशय:|(१०८)

वृत्तं यत्नेन संरक्ष्यं ब्राम्हणेन विशेषत:|

अक्षीणवृत्तो न क्षीणो वृत्ततस्तु हतो हत:|(१०९)

पठका:पाठकाश्चैव ये चान्ये शास्त्रचिन्तका:|

सर्वे व्यसनिनो मूर्खा य: क्रियावान स पण्डित:|(११०)

चतुर्वेदोऽपि दुर्वृत्त: स शूद्रादतिरिच्यते|

(महाभारत - वन पर्व 313 : 107-110)

अर्थात् - यक्ष ने पूछा-राजन !कुल,आचार,स्वाध्याय और शास्त्रश्रवण-इनमें से किसके द्वारा ब्राम्हणत्व मिलता है निश्चय करके बताओ ?

युधिष्ठिर ने कहा-तात यक्ष !सुनो न तो कुल ,न स्वाध्याय और न शास्त्र श्रवण से ब्राम्हणत्व प्राप्त होता है|ब्राम्हणत्व की प्राप्ति मात्र आचार से प्राप्त होती है|इसमे संशय नही है|इसलिए सदाचार की यत्नपूर्वक रक्षा करना चाहिए ! ब्राम्हण को तो उस पर विशेष दृष्टि रखनी चाहिए|क्योंकि जब तक सदाचार सुरक्षित है,तभी तक ब्राम्हणत्व भी बना हुआ है और जिसका आचार नष्ट हो गया,वह स्वयं नष्ट हो गया अर्थात् वह ब्राम्हण नही रहा|चारो वेद पढ़कर भी जो दुराचारी है,वह ब्राम्हण नही शूद्र से भी अधिक अधम है |

? ऋषि वैश्यम्पायन युधिष्ठिर से आश्वमेधिकपर्व मे कहते हैं-

न जात्या पुजीतो राजन्गुणाः कल्याणकारणाः।

चण्डालमपि वृत्तस्थं तं देवा ब्राह्मणं विदुः।।

(महाभारत -आश्वमेधिकपर्व 116:8)

अर्थात् - कुल, जाति से कोई पूजनीया नहीं होता है व्यक्ति के अन्दर का गुण ही कल्याणकारक होता है और , यदि चाण्डाल भी वृत्तस्थ हो तो वह ब्राहमण होता है।

महाभारत - वन पर्व इसी बात को दोहराया-

शूद्रयोनौ हि जातस्य सद्गुणानुपतिष्ठतः ।

वैश्यत्वं भवति ब्रह्मन्क्षत्रियत्वं तथैव च ॥ ११ ॥

आर्जवे वर्तमानस्य ब्राह्मण्यमभिजायते ।

गुणास्ते कीर्तिताः सर्वे किं भूयः श्रोतुमिच्छसि ॥ १२ ॥

(महाभारत - वनपर्व 203:11-12)

अर्थात् - शूद्रयोनि में उत्पन्न मनुष्य भी यदि उत्तम गुणों का आश्रय ले, तो वह वैश्य तथा क्षत्रियभाव को प्राप्त कर लेता है , यदि शूद्र कुल में उत्पन्न व्यक्ति ब्राह्मण गुण यथा सत्य, शम, दम (आत्म संयम) तथा आर्जव (सरलता) उत्पन्न कर लेता है, तो वह ब्राह्मण का उच्च पद प्राप्त करता है। इस प्रकार मैंने आपसे सम्पूर्ण गुणों का वर्णन किया है, अब और क्या सुनना चाहते हैं ?

=>उदाहरण :-

1-प्रतीपस्य त्रयः पुत्रा जशिरे भरतर्षभ ।

देवापिः शास्तनुरुचेब बाह्नीकश्च- महारथः ॥६१॥

देवापिश्व प्रवत्नाज तेषां धर्महितेप्सया

शान्तनुददच महीं लेने बाह्नीकह्च महारथः ॥६२॥

(महाभारत - आदिपर्व 94 : 61-62)

अर्थात् - राजा प्रतीप के तीन पुत्र हुए-देवापि, शान्तनु और महारथी। इनमें से देवापि वेदवक्ता (ब्राहमण) बन गया और शान्तनु तथा महारथी बाल्हीक राजा (क्षत्रिय)बने।

2-पश्चालेषु च कोरव्य कथयन्त्युत्पलावनम् ।

विश्वामित्नोयजद् यत्र पुत्रेण सह कौशिकः ॥ १५॥

कान्यकुब्जे पिबत् सोममिन्द्रण सह कौशिक: ।

ततःक्षत्रादपाक्रामद् ब्राहमणो उस्मीति चात्रवीत् ॥१७॥

(महाभारत -वनपर्व 87 :15 , 17)

अर्थात् - “कुरुनन्दन पांचालदेश में ऋषि लोग उप्लावन बतलाते है की, जहाँ कुशिकनन्दन विश्वामित्र ने अपने पुत्र के साथ यश किया था । यज्ञ के पश्चात विश्वामित्र जी ने कान्यकुब्ज देश में इन्द्र के साथ सोमपान किया; वही वे क्षत्रियत्व से ऊपर उठ गये और मैं ब्राहमण हूँ? यह बात घोषित कर दी ।

3-ततो ब्राहमणतां जातो, विश्वामित्रो महातपाः।

क्षत्रियः सोऽप्यथ तथा, ब्रहम-वंशस्य कारकः॥

(महाभारत -अनुशासन पर्व 4 : 48)

अर्थात् - क्षत्रिय कुलोत्पन्न महातपस्वी विश्वामित्र भी ब्राहमण-गोत्र का प्रवर्तक ब्राहमण हो गया।

4-यत्रार्ष्टिषेणः कौरव्य ब्राहमण्यं संशितव्रतः ।

तपसा महता राजन्प्राप्तवानृषिसत्तमः ॥

सिन्धुद्वीपश्च राजर्षिर्देवापिश्च महातपाः ।

ब्राह्मण्यं लब्धवान्यत्र विश्वामित्रो महामुनिः ।

(महाभारत -शल्य पर्व 39 : 36-37)

अर्थात् - हे राजन! कुरुकुलोत्पन्न वृती राजा अरिष्टषेण ने महातप से ब्राह्मणत्व को प्राप्त कर लिया। राजर्षि सिन्धुद्वीप और महातपस्वी देवापि तथा विश्वामित्र मुनि ने ब्राह्मणत्व को प्राप्त किया।

5-तस्मिन्नेव तदा तीर्थे सिन्धुद्वीपः प्रतापवान् ।

देवापिंश्व महाराज ब्राह्मण्यं प्रापतुमेहत् ॥ १०॥

तथा च कौशिकस्तात तपोनित्यो जितेन्द्रियः ।.

तंपसा वै सुतप्तेन ब्राह्मणत्वमवाप्तवान ॥ ११॥

(महाभारत -शल्य पर्व 40 : 10-11)

अर्थात् - महाराज ! उन्हीं दिनों उसी तीर्थ में प्रतापी सिन्धुद्दीप तथा देवापि ने वहाँ तप करके महान् ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था। कुशिकवंशी विश्वामित्र भी वहीं निरन्तर इन्द्रिय संयमपूर्वक तपस्या करते थे । उस भारी तप के प्रभाव से उन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त किया और वे ब्राह्मण हो गए ॥

【 वैष्णव मत 】

सभी पवित्र हिंदू शास्त्र वर्ण परिवर्तन का पूर्ण समर्थन करते हैं। आलवार , गौड़िया और रामानंदी जैसे वैष्णव पूरी तरह से सहमत हैं कि वर्ण को बदला जा सकता है ।

प्रायः स्वभावविहितो नृषां धर्मो युगे युगे।।

(श्रीमद भागवत -7:11:31)

अर्थात् –वेददर्शी ऋषि–मुनियों ने युग-युग में मनुष्यों के स्वभाव के अनुसार धर्म की व्यवस्था की है। वही धर्म उनके लिए इस लोक तथा परलोक में कल्याणकारी है।

◙ यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसो वर्णाभिव्यञ्जकम् ।

यदन्यत्रापि दृश्येत तत्तेनैव विनिर्दिशेत् ॥ ३५ ॥

(श्रीमद भागवतम -7:11:35)

अर्थात् –नारद जी ने कहा यदि कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र होने के लक्षण दिखाता है, जैसा कि वर्णित है, भले ही वह एक अलग वर्ग में प्रकट हुआ हो, उसे वर्गीकरण के उन लक्षणों के अनुसार स्वीकार किया जाएगा ।

=>उदाहरण :-

1- धृष्टाद् धार्ष्टमभूत् क्षत्रं ब्रह्मभूयं गतं क्षितौ ।

नृगस्य वंश: सुमतिर्भूतज्योतिस्ततो वसु: ॥ १७ ॥

(श्रीमद भागवतम - 9:2:17)

अर्थात् –मनु के पुत्र धृष्ट से धार्ष्ट नामक एक क्षत्रिय उत्पन्न हुवे,बाद में उन्होंने ब्राह्मणों का स्थान प्राप्त किया। नृग से सुमति उत्पन्न हुई। सुमति से भूतज्योति और भूतज्योति से वासु उत्पन्न हुवे।

2-नाभागो दिष्टपुत्रोऽन्य: कर्मणा वैश्यतां गत: ।

भलन्दन: सुतस्तस्य वत्सप्रीतिर्भलन्दनात् ॥ २३ ॥

(श्रीमद भागवतम - 9:2:23)

अर्थात् –दिष्ट का पुत्र नाभाग था वह अपने कर्म से वैश्य हो गया उसका पुत्र भलंदन हुवा और उससे वत्सप्रीति हुवा ।

3-यवीयांस एकाशीतिर्जायन्तेया: पितुरादेशकरा महाशालीना

महाश्रोत्रिया यज्ञशीला: कर्मविशुद्धा ब्राह्मणा बभूवु: ॥ १३ ॥

(श्रीमद भागवतम - 5:4:13)

अर्थात् – राजा ऋषभदेव और जयन्ती के 81 पुत्र अपने पिता के आदेश के अनुसार, वे अपनी गतिविधियों में वैदिक अनुष्ठानों को किया और वेदाध्यन किया। इस प्रकार वे सभी पूर्णतः योग्य ब्राह्मण बन गए ।

4-पृषध्स्तु मनुपुत्रो गुरुगोवधाच्छूद्रत्वमगमत् ॥ १७॥

(विष्णु पुराण 4:1:17)

अर्थात् – मनु का पृषध्र नामक पुत्र गुरु की गौ का वध करने के कारण क्षत्रिय से शूद्र हो गया ।

5-एते क्षत्रप्रसूता वै पुनश्चाङ्गिरसा: स्मृता:।

रथीतराणां प्रवरा: क्षत्रोपेता द्विजातय: ॥ १०॥

(विष्णु पुराण 4:2:10)

अर्थात् – रथीतर के वंशज क्षत्रिय की संतान होते हुए भी आंगिरस कहलाये; अत: वे क्षत्रोपेत ब्राह्मण हुए ।

6-गृत्समदस्य शौनकश्चातुर्वर्ण्यप्रवर्तयिताभूत्॥

(विष्णु पुराण 4:8:6)

अर्थात् –क्षत्रिय गृत्समद का पुत्र शौनक चा्तुर्वर्ण्य का प्रवर्तक ब्राह्मण हुआ ।

7-पुत्रोगृत्समद्स्यापि शुनको यस्य शौनकाः।

ब्राह्मणः क्षत्रियाश्चैव वैश्याः शूद्रास्तथैवच॥

(हरिवंश पुराण 1 : 29 : 8)

अर्थात् –गृत्समद के पुत्र शुनक हुए, जिससे शौनक-वंश का विस्तार हुआ । शौनक-वंश में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी वर्णो के लोग हुए।

8-भगवान रामचन्द्र जी के गुरु महर्षि वसिष्ठ एक वैश्या या गणिका गर्भ से पैदा हुए थे-

गणिकागर्भ सम्भूतो वशिष्ठश्च महामुनि:|

तपसा ब्राम्हणो जात: संस्कारस्तत्र कारणम्||

(भविष्य पुराण 1 : 42 :29)

अर्थात् –महर्षि वशिष्ठ वैश्या के गर्भ से उत्पन्न हुए और संस्कार होने पर तपस्या करके ब्राह्मणत्व को प्राप्त करके ब्राम्हण बने ।

9-नाविकागर्भ सम्भूतो मंदपालो महामुनि:|

तपसा ब्राम्हणो जात: संस्कारस्तत्र कारणम्||

(भविष्य पुराण 1 : 42 :30)

अर्थात् –महर्षि मंदपाल नाविका के गर्भ से उत्पन्न हुए और संस्कार होने पर तपस्या करके ब्राह्मणत्व को प्राप्त करके ब्राम्हण बने |

10-जातो व्यासस्तु कैवर्त्याः श्वपाक्याश्च पराशरः ।

(भविष्य पुराण 1 : 42 :22)

अर्थात् –व्यास मल्लाही से, और श्वपाकी (चाण्डाली) से पराशर हुवे थे।

11-श्वपाकीगर्भ सम्भूतो पिता व्यासस्य पार्थिव:|

तपसा ब्राम्हणो जात: संस्कारस्तत्र कारणम्||

(भविष्य पुराण 1 : 42 :27)

अर्थात् –महर्षि व्यास के पिता महर्षि पराशर चाण्डाली के गर्भ से उत्पन्न हुए और संस्कार होने पर तपस्या करके ब्राह्मणत्व को प्राप्त करके ब्राम्हण बने |

12-नाभागारिष्टपुत्रौ द्वौ वैश्यौ ब्राह्मणतां गतौ॥

(हरिवंश पुराण 1:11:9)

अर्थात् –नाभाग और अरिष्ट दो वैश्य के पुत्र ब्राह्मण हो गये।

13-गर्गाच्छिनिस्ततो गार्ग्यः क्षत्राद् ब्रह्म ह्यवर्तत ।

दुरितक्षयो महावीर्यात् तस्य त्रय्यारुणिः कविः ॥१९॥

पुष्करारुणिरित्यत्र ये ब्राह्मणगतिं गताः ।

बृहत्क्षत्रस्य पुत्रोऽभूद्धस्ती यद्धस्तिनापुरम् ॥२०॥

(श्रीमद भागवतम - 9:21:19-20)

अर्थात् –मन्युपुत्र गर्ग से शिनि और शिनि से गार्ग्य का जन्म हुआ। यद्यपि गार्ग्य क्षत्रिय था, फिर भी उससे गार्ग्य ब्राह्मण क्षत्रियों हुवे ।। महावीर्यका पुत्र था दुरितक्षय। दुरितक्षयके तीन पुत्र हुए–त्रय्यारुणि, कवि और पुष्करारुणि। ये तीनों ब्राह्मण हो गये। बृहत्क्षत्रका पुत्र हुआ हस्ती, उसीने हस्तिनापुर बसाया था ॥

म्लेच्छास्ते वैष्णवाश्चासन्रामानन्दप्रभावतः ।

संयोगिनश्च ते ज्ञेया रामानन्दमते स्थिताः ।। ५४

आर्याश्च वैष्णवा मुख्या अयोध्यायां बभूविरे ।

(भविष्य पुराण - प्रतिसर्गपर्व खण्ड- 4: 21 :54)

अर्थात् –वे म्लेच्छ रामानन्द के प्रभाव से 'संयोगी" नामक वैष्णव हो गए और वे आर्य हो गए और मुख्य वैष्णव अयोध्या में हुए।

विलासिनीभुजंगादिजनवन्मदविह्वलाः ।

व्यामुह्यन्ति सदाचाराद्ब्राह्मणत्वात्पतन्ति च ।। १५

संस्कृतोऽपि दुराचारो नरकं याति मानवः ।

निःसंस्कारः सदाचारो भवेद्विप्रोत्तमः सदा ।। १६

(भविष्य पुराण 1 : 42 :15-16)

अर्थात् –बिलासी और दुष्ट आदि लोगों की भाँति मदान्ध होकर संस्कारी पुरुष मोह में पड़कर ब्राह्मणत्व से पतन हो जाता है और वो नर्क जाते है किन्तु संस्कार हीन पुरुष, सदाचारी एवं उत्तम हो तो वो ब्राह्मण हो जाते हैं ।

【 शैव मत 】

जिस तरह वैष्णव पुराणों में सैकड़ों वर्ण परिवर्तन के उदाहरण है उस तरह शैव ग्रंथो में नहीं है लेकिन शैव ग्रन्थ भी वर्ण परिवर्तन को समर्थन करते है . शिव पुराण की विद्याश्वर-संहिता (अध्याय 17) इस बारे में है कि कैसे क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी शिव के मंत्र का उपयोग करके ब्राह्मण बन सकते हैं -

1-क्षत्रियः पञ्चलक्षण क्षत्रत्वमपनेष्यति ।

पुनश्च पञ्चलक्षण क्षत्रियो ब्राह्मणो भवेत् ।।

मन्त्रसिद्धिर्जपाद्यैव क्रमान्मुक्तो भवेन्नर ।

वैश्यस्तु पञ्चलक्षण वैश्यत्वमपनेष्यति ।।

पुनश्च पञ्चलक्षण मन्त्रक्षत्रिय उच्यते ।

पुनश्च पञ्चलक्षण क्षत्रत्वमपनेष्यति ।।

पुनश्च पञ्चलक्षण मन्त्रब्राह्मण उच्यते ।

शूद्रश्चैव नमोऽन्तेन पञ्चविंशतिलक्षत ।।

मन्त्रविप्रत्वमापद्य पश्चाच्छुद्रो भवेद्द्विज।

नारीवाथ नरो वाथ ब्राह्मणो वान्य एव वा ।।

2-इसके अलावा एक अन्य शैव ग्रन्थ में लिखा है-

गतं शूद्रस्प शूद्रत्वं विप्रस्यापि च विप्रता ।

दीक्षासंस्कारसम्पन्ने जातिभेदो न विद्यते ॥९१॥

(कुलार्णव तंत्र - 14: 91)

अर्थात् –दीक्षा संस्कार के बाद कोई शूद्र , शूद्र नहीं रहता है, न ही कोई विप्र विप्र रहता है। दीक्षा के बाद जाति का कोई अंतर नहीं रहता है।

शरीरस्य न संस्कारों जायते न च कर्मणः।

आत्मन: कारयेदीक्षामनादिकुलकुण्डलीम्॥

(कुलार्णव तंत्र - 14: 81)

अर्थ – शरीर का न तो संस्कार होता है न उसकी कोई जाति होती है न कोई कर्म । आत्मा की ही दीक्षा होती है जो की अनादि कुलकुंडली है।

एकाक्षरप्रदातारं यो गुरुअ्चावमानयेत् ।

श्वानं योनिशतं गत्वा चण्डालत्वमवाप्नुयात्॥

(कुलार्णव तंत्र - 11 : 74)

अर्थ – यह बिलकुल निर्धरित है की जो अपने गुरु का सही से सम्मान नहीं करता वो चाण्डाल बन जाता है और वो कुते के योनि में जन्म पाता है।

दीक्षया मोक्षदीपेन चण्डालोपि विमुच्यते ।

(कुलार्णव तंत्र - 14 : 80)

अर्थ – दीक्षा से चाण्डाल भी मोक्ष प्राप्त करता है।

अन्य तंत्र ग्रंथों में भी यही मत है -

ब्रह्मनन्दमयं ज्ञानं कथयामि वरानने ।

नः ब्राह्मणो ब्राह्मणस्तु क्षत्रिय: क्षत्रियस्तथा ॥

वैश्यो न वैश्यः शूद्रों न शूद्रत्स्तु परमेश्वरी ।

चाण्डालो नैव चाण्डालः पौल्कसो न च पौल्कसः ॥

सर्वे समं विजानीयात्परमार्मेविनिश्चयात् ।

(ज्ञानार्णव तंत्र 23:28-29)

अर्थ – ब्रहमज्ञान का अधिकारी कौन है ? किसी भी वर्ण के बीच कोई भेद नहीं है, यहां तक कि चांडाल या पौलकसो को भी ब्रहम के साथ एकीकरण प्राप्त होता है तथा सभी एक सामान है।

यदि ज्ञानं भवेद एव सा देवो न तु मनुषः

चाण्डालदिनीचजातौ स्थिरो व ब्राहमणोत्तमः

(रुद्रयामल तंत्र 48:131)

अर्थ –अगर किसी को ज्ञान की प्राप्ति होती है तो वो देव सामान्य है मनुष्य नहीं निम्न जाती के चाण्डाल भी ज्ञान प्राप्ति के बाद ब्राहमण से उत्तम हो जाता है।

【नीति शास्त्र का मत】

विश्वामित्रो वशिष्ठश्च मतङ्गो नारदादय:।

तपोविशेषैः सम्प्राप्ता उत्तमत्वं न जातित:।।

(शुक्रनीतिसार 4:38)

अर्थ – (क्षत्रिय से उत्पन्न हुए) विश्वामित्र, (अप्सरा से उत्पन्न हुए) वशिष्ठ, (साधारण वर्ण में उत्पन्न हुए) मतङ्ग, (दासी पुत्र) नारद आदि विशेष तप के द्वारा उत्तमता को प्राप्त हुए थे, जाति से नहीं।

【राजसिक पुराण का मत】

स्वभावकर्मणा चैव यत्र शुद्रोऽधितिष्ठति।। २२३.५५ ।।

विशुद्धः स द्विजातिभ्यो विज्ञेय इति मे मतिः।

न योनिर्नापि संस्कारो न श्रुतिर्न च संतति।। २२३.५६ ।।

कारणानि द्विजत्वस्य वृत्तमेव तु कारणम्।

सर्वोऽयं ब्राह्मणो लोके वृत्तेन तु विधीयते।। २२३.५७ ।।

वृत्ते स्थितश्च शुद्रोऽपि ब्राह्मणत्वं च गच्छति।

ब्रह्मस्वभावः सुश्रोणि समः सर्वत्र मे मतः।। २२३.५८ ।।

(ब्रह्मा पुराण 22:55-58)

अर्थ – शिवजी ने पार्वती से कहा-

जो शूद्र अपने स्वभाव और कर्म के अनुसार जीवन बिताता है, उसे द्विजातियों से भी अधिक शुद्ध जानना चाहिये-ऐसा मेरा विश्वास है। जन्म, संस्कार, वेदाध्ययन और संतति-ये सब द्विजत्व के कारण नहीं हैं; द्विजत्व का मुख्य कारण तो सदाचार ही है। संसारमें ये सब लोग आचरण से ही ब्राह्मण माने जाते हैं। उत्तम आचरण में स्थित होने पर शूद्र भी

ब्राह्मणत्व को प्राप्त हो सकता है। हे पार्वती! ब्रह्मस्वभाव सर्वत्र सम है- यह मेरी मान्यता है।

आहिताग्निरधीयानो ब्रह्मभूयाय कल्पते।

ब्राह्मण्यं देवि संप्राप्य रक्षितव्यं यतात्मना।। २२३.६४ ।।

योनिप्रतिग्रहादानैः कर्मभिश्च शुचिस्मिते।

एतत्ते गुह्यमाख्यातं यथा शुद्रो भवेद्द्विजः।।

ब्राह्मणो वा च्युतो धर्माद्यथा शुद्रत्वमाप्नुयात्।। २२३.६५ ।।

(ब्रह्मा पुराण 223:64-65)

अर्थ – देवि! ब्राह्मणत्व को प्राप्त करके उसकी यत्नपवूक रक्षा करनी चाहिये। यह मैंने तुम्हें बड़ी गोपनीय बात बतलायी है। शूद्र धर्माचरण से ब्राह्मण होता है और ब्राह्मण धर्मभ्रष्ट होने पर शूद्रत्व को प्राप्त होता है।

【प्राचीन टीकाकार , आचार्य , गोस्वामियों का मत】

एवञ्च सत्यादिकं यदि शूद्रेऽप्यस्ति तर्हि सोऽपि ब्राह्मण एव स्यात् शूद्रलक्ष्मकामादिकं न ब्राह्मणेऽस्ति नापि ब्राह्मणलक्ष्मशमादिकं शूद्रेऽस्ति । शूद्रोऽपि शमाद्युपेतो ब्राह्मण एव, ब्राह्मणोऽपि कामाद्युपेतः शूद्र एव ॥

(महाभारत - वनपर्व 180:23-26 श्लोक की नीलकण्ठ टीका)

अर्थ – इस प्रकार के सत्य आदि लक्षण यदि शूद्र में रहते हैं, तो उनकी भी निश्चय ही ब्राह्मणों में गणना होगी। कामादि शूद्रों के लक्षण ब्राह्मणों में नहीं रह सकते और शमादि

ब्राह्मण-लक्षण शूद्रों में नहीं रहते । शूद्र कुलमें उत्पन्न व्यक्ति यदि शमादि गुणों द्वारा भूषित हैं तो वह निश्चय ही 'ब्राह्मण' है और ब्राह्मण कुल में उत्पन्न व्यक्ति यदि कामादि गुणों से युक्त हैं तो वह निश्चय ही 'शूद्र' है, इस विषय में तनिक भी सन्देह नहीं है ।

शमादिभिरेव - ब्राह्मणादि-व्यवहारो मुख्यः न जातिमात्रात् । यद् यद अन्यत्र वर्णान्तरेऽपि दृश्येत, तद्ववर्णान्तरं तेनैव लक्षणनिमित्तेनैव वर्णेन विनिर्द्दिशेत्, न तु जाति निमित्तेनेत्यर्थः ।।

(श्रीमद्भागवत 7:11:35 पर भावार्थ दीपिका)

अर्थ – शम आदि गुणों के द्वारा ब्राह्मणादि वर्ण स्थिर करना प्रधान कर्त्तव्य है। साधारणतः जाति के द्वारा जो ब्राह्मणत्व निरूपित होता है, केवल यही नियम नहीं है। इसका प्रतिपादन करने के लिए "यस्य यल्लक्षणम्" श्लोक को उद्धृत करते हैं। यदि शौक़ ब्राह्मण के बिना अशौक्र - ब्राह्मण में अर्थात् जिसकी ब्राह्मण-संज्ञा नहीं है, ऐसे व्यक्ति में शमादि गुण दृष्टिगत हों तो उसको जातीय व्यक्ति न मानकर, लक्षणीय गुणों द्वारा उसका 'वर्ण निरूपण करना चाहिए। अन्यथा विरुद्ध आचरण होगा ।

आर्ज्जवं ब्राह्मणे साक्षात् शूद्रोऽनार्ज्जवलक्षणः ।

गौतमस्त्विति विज्ञाय सत्यकाममुपानयत् ॥

(छान्दोग्य मध्वाचार्य भाष्यधृत साम-संहिता वाक्य)

अर्थ – ब्राह्मण में साक्षात् सरलता एवं शूद्र में कुटिलता विद्यमान होती है। हारिद्रुमत गौतम ने गुणों पर ऐसा मत प्रकट करते हुए सत्यकाम जाबाल को उपनयन अथवा सावित्र्य संस्कार प्रदान किया ।

ब्राह्मणकुमाराणां शौक्रे जन्मनि दुर्जातित्वाभावेऽपि सवनयोग्यत्वाय पुण्यविशेषमय - सावित्र - जन्मसापेक्षत्वात् । ततश्च अदीक्षितस्य श्वादस्य सवन - योग्यत्वप्रतिकूलदुर्जात्यारम्भकं प्रारब्धमपि गतमेव, किन्तु शिष्टाचाराभावात् अदीक्षितस्य श्वादस्य दीक्षां विना सावित्र्यं जन्म नास्तीति ब्राह्मणकुमाराणां सवनयोग्यत्वाभावावच्छेदकपुण्यविशेषमय -सावित्रजन्मापेक्षावदस्य अदीक्षितस्य श्वादस्य सावित्र्य - जन्मान्तरापेक्षा वर्त्तत इति भावः ॥

(दुर्गमसङ्गमनी - पूर्व-विलास 1:13)

अर्थ – ब्राह्मण कुमारों का शौक्र जन्म में निम्न जातित्व का अभाव होने पर भी जिस प्रकार अग्नि यज्ञ में योग्यता प्राप्त करने के लिए पुण्यविशेषमय ब्राह्मण-जन्मकी अपेक्षा करते हैं, अर्थात् शौक ब्राह्मण कुल में जन्म होने पर भी उपनयन न होने तक द्विज को जिस प्रकार अग्नि यज्ञ में अधिकार नहीं होता, उसी प्रकार चाण्डाल कुल में उत्पन्न अदीक्षित व्यक्ति की अग्नि यज्ञ में योग्यता प्राप्ति के प्रतिकूल निम्न जाति आदिका मूल प्रारब्ध पाप दूर होने पर भी दीक्षा के बिना उसको ब्राह्मण जन्म प्राप्त नहीं होता, इसलिए अदीक्षित व्यक्ति का ब्राह्मण संस्कार ग्रहण करना शिष्टाचार के विरुद्ध है। ब्राह्मण कुल में उत्पन्न व्यक्ति को जिस प्रकार यज्ञ की योग्यता के लिए विशेष पुण्यमय ब्राह्मण जन्म की अपेक्षा रहती है। उसी प्रकार चाण्डाल कुल में उत्पन्न अदीक्षित व्यक्ति का ब्राह्मणत्व अथवा यज्ञ की योग्यता पा लेने पर भी सावित्र्य - जन्मकी अपेक्षा है अतः सभी के लिए सावित्री दीक्षा अति आवश्यक है ।

【 नवीनतम उदाहरण 】

बहुत से ऐसे महान पुरुष हुवे है जो आज भी हमारे बीच लोकप्रिय है जिन्होने अपने ज्ञान कर्म से ब्रह्मतत्व को प्राप्त किया जैसे -

1- स्वामी विवेकानंद का जन्म एक कायस्थ परिवार में हुआ लेकिन उन्होंने अपने गुरु से दीक्षा लेकर ब्राह्मणत्व की प्राप्ति की ,

2- स्वामी रामदेव जी ने एक यादव परिवार में जन्म लेकर ब्राह्मणत्व की प्राप्ति की ,

3- दलित परिवार में पैदा हुए जूना अखाड़े के महामंडलेश्वर कन्हैया प्रभु जिन्होंने जगद्गुरु पंचानंद गिरी से दीक्षा लिया कन्हैया प्रभुनंद गिरी नया नाम मिला और सन्यासी बन गए और उन्होंने ब्राह्मणत्व की प्राप्ति की ,

---

आज भी ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र में समान गोत्र मिलते हैं । इस से पता चलता है कि यह सब एक ही पूर्वज, एक ही कुल की संतान हैं । लेकिन कालांतर में वर्ण व्यवस्था गड़बड़ा गई और यह लोग अनेक जातियों में बंट गए ।

अत: अपनी श्रेष्टता साबित करने के लिए कुल का नाम आगे धरना मनु के अनुसार अत्यंत मूर्खतापूर्ण कृत्य है । अपने कुल का नाम आगे रखने की बजाए व्यक्ति यह दिखा दे कि वह कितना शिक्षित है तो बेहतर होगा ।

राम ने शूद्र संम्भूक को क्यों मारा ?

【 सम्भुक हत्या का खंडन 】

◙ सम्भुक का वर्णन वाल्मीकि रामायण के सातवें कांड में हुवा है लेकिन महर्षि वाल्मीकि ने रामायण लिखते वक़्त ही अपने दिव्यज्ञान से बता दिया था की इसमें कितने कांड सर्ग और श्लोक है ताकि भविष्य में कोई मिलावट न कर सके -

चतुर्विंशत्सहस्त्राणि श्लोकानामुक्तवानृषिः ।
तथा सर्गशतान् पञ्च षट् काण्डानि तथोत्तरम।
(वालमीकि रामायण 1- 4-2)

अर्थात् - रामायण में 24,000 श्लोक 500 सर्ग और 6 काण्ड हैँ ।

लेकिन आज की रामायण में 25000 श्लोक 658 सर्ग और 7 काण्ड हैं इससे ये साबित होता है किस तरह से सातवा कांड रामायण में मिलाया गया और रामायण के कुछ अन्य सर्गो में मिलावट की गयी है ताकि वो मर्यदापुर्षोत्तम राम को बदनाम कर सके। एक बात जो बहुत महत्वपूर्ण है कि उत्तर कांड के 94वें सर्ग के 27वें श्लोक में कहा गया है –

आदिप्रभृति वै राजन् पञ्चसर्ग शतानि च।
काण्डानि षट्कृतानीह सोत्तराणि महात्मना ।। ।

अर्थात् - उन महात्मा ने आदि से लेकर अंत तक पाँच सौ सर्ग और छः काण्डों का निर्माण किया है ।इनके सिवा इन्होंने उत्तरकांड की भी रचना की है ।

उपर्युक्त श्लोकार्थ में उत्तर कांड जिस प्रकार बाहर से साटा हुआ लगता है , उसका निर्णय विद्वान स्वयं कर सकते हैं की उसे बाद में जोड़ा गया है।

◙ उत्तरकांड के सर्ग 111 के प्रथम श्लोक मे कहा है

एतावदेतदाख्यानं सोत्तरं ब्रह्मपूजितम्।
रामायणमिति ख्यातं मुख्यं वाल्मीकिना कृतम्।।
(वाल्मीकि रामायण 7 :111:1)

पुन: वही इसी सर्ग के 11 श्लोक में कहा है -

एतदाख्यानमायुष्यं सभविष्यं सहोत्तरम्।
कृतवान प्रचेतसः पुत्रस्तद् ब्रह्माप्यन्वमन्यत।।
(वाल्मीकि रामायण 7: 111:11)

प्रश्न यह है कि बार-बार उत्तरकांड को अलग करके याद क्यों करवाया जा रहा है क्या वाल्मीकि को 6 से आगे की गिनती नहीं आती थी ? वह सीधे-सीधे 7 कांड ना कहकर 6 कांड +1कांड क्यों कह रहे हैं? क्या वाल्मीकि जैसे उत्कृष्ट विद्वान द्वारा पद पूर्ति अथवा छंद की मात्राओं या अक्षरों की पूर्ति के लिए ऐसा करना और बार-बार करना उचित प्रतीत होता है । निश्चय ही दाल में कुछ काला है समूची रचना में वह कांड अलग से मिलाया गया प्रतीत होता है।

◙ महाभारत के वनपर्व के अंतर्गत अध्याय 274 से 291 तक रामोपाख्यान के नाम से रामचरित्र का वर्णन हुआ है वहां भी रामायण रावण वध के पश्चात अयोध्या लौटने पर राम के राज्याभिषेक के साथ समाप्त हो जाती है इससे पता चलता है कि महाभारत की रचना होने तक रामायण में उत्तर कांड का प्रक्षेप नहीं हुआ था।

◙ श्री राम का पुष्पक विमान लेकर शम्बूक को खोजना एक और असत्य कथन हैं क्यूंकि पुष्पक विमान तो श्री राम जी ने अयोध्या वापिस आते ही उसके असली स्वामी कुबेर को लौटा दिया था-सन्दर्भ- युद्ध कांड 127:59

अब्रवीच्च तदा रामस्तद्विमानमनुत्तमम् ||

वह वैश्रवणं देवमनुजानामि गम्यताम् ।

(वाल्मीकि रामायण 6 : 127 : 59)

अर्थात् -तब श्री राम ने पुष्पक विमान को आदेश किया कि कुबेर को ले जाओ मैं कुबेर को जाने की अनुमति देता हूँ।

◙ युद्धकाण्ड के अंतिम सर्ग में महर्षि वाल्मीकि जी ने रामायण पूरी होने की बात भी लिखी है " वाल्मीकिना कृतम् " लिखकर ये बताया है कि अब ये रामायण यही तक समाप्त हो चुकी हैं -

शृणोति य इत्दं काव्यं पुरा वाल्मीकिना कृतम् ।

श्रद्दधानो जितक्रोधो दुर्गाण्यतितरत्यसौ ।।

अर्थात् - जो वाल्मीकि द्वारा रचित इस काव्य रचना को पढ़ेगा वो क्रोध और कठिनाईयों पर विजय पायेगा।

सनातन धर्म में जब कोई ऋषि महर्षि कोई ग्रन्थ लिखता था तो वो ग्रन्थ के पूर्ण होने पर अन्त में अपना नाम जरूर अंकित कर देता था जैसे चाणक्य अपने ग्रन्थों के अंत में " इति कौटिल्य' अर्थात् कौटिल्य का मत है लिखा है " लिखते थे।

◙ युद्धकाण्ड के अन्त में 'फलश्रुति' दी हुई है जो किसी ग्रन्थ की समाप्ति की सूचक होती है-

रामायणमिदं कृत्स्नं शृण्वतः पठतः सदा ।

प्रीयते सततं रामःस हि विष्णुः सनातनः।।

(वाल्मीकि रामायण 6:128 :119)

अर्थात् - जो इस संपूर्ण रामायण का पाठ करता है, उस पर सनातन विष्णु स्वरूप भगवान् श्री राम सदा प्रसन्न रहते हैं ।

पुनः आगे कहते हैं –

एवमेतत् पुरावृत्तमाख्यानं भद्रमस्तु वः।

(वाल्मीकि रामायण 6:128:121)

अर्थात् -लव कुश कहते हैं -श्रोताओ!आपलोगों का कल्याण हो ।यह पूर्वघटित आख्यान ही इस प्रकार रामायण काव्य के रूप में वर्णित हुआ है।

युद्ध कांड में रामायण की संपूर्णता का इससे और बड़ा प्रमाण क्या हो सकता है ।

【 अन्य प्रमाण 】

भारत में वाल्मीकि रामायण को आधार बना कर कई प्रादेशिक भाषाओं में रामायण लिखी गई है। अब हम क्रम से इन पर विचार करते हैं-

[1]- कम्ब रामायण – इसका रचना काल लगभग बारहवी शताब्दी है। संस्कृत से भिन्न उपलब्ध भाषाओ में यह सबसे पुरानी रामायण है। इसके लेखक महाकवि कम्बन है। इसकी मूल भाषा तमिल है। अब तक इसके हिन्दी में (पहला अनुवाद 1962में बिहार राजभाषा परिषद्) कई अनुवाद हो चुके है। इसमें भी बालकाण्ड से लेकर युद्धकाण्ड तक 6 ही काण्ड है। यह भी भगवान् श्रीराम जी के राज्य अभिषेक व् श्री राम जी द्वारा दरबार में सभी के लिए प्रशंसा वचन के साथ पूरी होती है। यह बहुत अधिक वाल्मीकि रामायण से मिलती है। यदि महाकवि कम्बन जी के सामने वाल्मीकि रामायण में उत्तर काण्ड होता तो वह इसका वर्णन जरुर करते। परन्तु उनके सामने जो वाल्मीकि रामायण उपलब्ध थी उसमे 6 काण्ड ही थे।

[2] रंगनाथ रामायण – इसका रचना काल लगभग 1380 इस्वी है. इसकी भाषा तेलुगु है परन्तु अब इसका हिंदी में अनुवाद (1961 में बिहार राजभाषा परिषद द्वारा) चुका है। यह रामायण श्रीराम जी के राज्य अभिषेक व् दरबार के दृश्य के साथ पूरी हो जाती है । इसमें बालकाण्ड से लेकर युद्ध काण्ड तक 6 काण्ड है। यदि इसके रचियता के सामने उपलब्ध वाल्मीकि रामायण में उत्तर काण्ड होता तो वह अवश्य ही उसका उल्लेख करते परन्तु उनके सामने जो वाल्मीकि रामायण उपलब्ध थी उसमे 6 काण्ड ही थे।

[3] - तोरवे रामायण – इसका रचना काल लगभग 1500 इस्वी है. इसकी मूल भाषा कन्नड़ है परन्तु अब इसका हिंदी में अनुवाद चुका है। इसके लेखक तोरवे नरहरी जी है। यह रामायण श्रीराम जी के राज्य अभिषेक, सुग्रीव आदि को विदा करना, रामराज्य में सुख शान्ति, दरबार के दृश्य तथा रामायण पढने के लाभ के वर्णन के साथ पूरी हो जाती है । इसमें बालकाण्ड से लेकर युद्ध काण्ड तक 6 काण्ड है. यदि इसके रचियता के सामने उपलब्ध वाल्मीकि रामायण में उत्तर काण्ड होता तो वह अवश्य ही उसका उल्लेख करते परन्तु उनके सामने जो वाल्मीकि रामायण उपलब्ध थी उसमे 6 काण्ड ही थे।

[4] 'चम्पू-रामायण' जो महाराज भोज के समय में लिखा गया था, में स्पष्ट लिखा है कि यह वाल्मीकीय रामायण का सार है। इस चम्पू-रामायण में युद्धकाण्ड तक का ही विषय है अत: उत्तरकाण्ड प्रक्षिप्त है।

【 श्री रामचन्द्र जी महाराज का चरित्र 】

वाल्मीकि रामायण में श्री राम चन्द्र जी महाराज द्वारा वनवास काल में निषाद राज द्वारा लाये गए भोजन को ग्रहण करना (बाल कांड 1:37-40) शबर (कोल/भील) जाति की शबरी से बेर खाना (अरण्यक कांड 74:7) यह सिद्ध करता हैं की शूद्र वर्ण से उस काल में कोई भेद भाव नहीं करता था।

श्री रामचंद्र जी महाराज वन में शबरी से मिलने गए। शबरी के विषय में वाल्मीकि मुनि लिखते हैं की वह शबरी सिद्ध जनों से सम्मानित तपस्वनी थी।(अरण्यक कांड 74:10) इससे यह सिद्ध होता हैं की शूद्र को रामायण काल में तपस्या करने पर किसी भी प्रकार की कोई रोक नहीं थी। नारद मुनि वाल्मीकि रामायण (बाल कांड 1:16) में लिखते हैं राम श्रेष्ठ, सबके साथ समान व्यवहार करने वाले और सदा प्रिय दृष्टी वाले हैं।

अयोध्या कांड अध्याय 63 श्लोक 50-51 तथा अध्याय 64 श्लोक 32-33 में रामायण को श्रवण करने का वैश्यों और शूद्रों दोनों के समान अधिकार का वर्णन हैं।

【रामायण चारो वर्णों के लिए】

पठन् द्विजो वाक् ऋषभत्वम् ईयात् |
स्यात् क्षत्रियो भूमि पतित्वम् ईयात् ||
वणिक् जनः पण्य फलत्वम् ईयात् |
जनः च शूद्रो अपि महत्त्वम् ईयात् ||
(वाल्मीकि रामायण 1 :1 :100)

अर्थात् - इस रामायण को पढ़ने वाला अगर व्यक्ति ब्राह्मण होगा तो वो अच्छा वक्ता बनेगा , वह अपने भाषण में श्रेष्ठता प्राप्त करता है, और यदि वह क्षत्रिय व्यक्ति हो, उसे भूमि-अधिकार प्राप्त हो, और अगर वह व्यापार से वैश्य व्यक्ति हो तो वह वह धन-लाभ अर्जित करता है, और यदि वह मजदूर वर्ग (नौकरी करने वाला) से शूद्र व्यक्ति होता है, तो वह व्यक्तिगत महानता को प्राप्त करता है " इस प्रकार नारद ऋषि ने वाल्मीकि ऋषि-को रामायण का सार दिया।

【यज्ञ में सभी वर्णों का पूर्ण सम्मान सत्कार】

सर्वे वर्णा यथा पूजां प्राप्नुवन्ति सुसत्कृता:।
न चावज्ञा प्रयोक्तव्या कामक्रोधवशादपि।।
(वालमीकि रामायण 1:13:13)

अर्थात् -सभी वर्णों के लोगों के साथ सम्मानपूर्वक व्यवहार किया जाना चाहिए। अपमान नहीं होना चाहिए क्रोध पर लोभ पर वासना के द्वारा किसी को भी।

ब्राह्मणान् क्षत्रियान् वैश्यान् शूद्रांश्चैव सहस्रशः।
समानयस्व सत्कृत्य सर्वदेशेषु मानवान्॥

(वालमीकि रामायण 1: 13:19)

अर्थात् -महर्षि वसिष्ठ आदेश देते है-'हजारों की संख्या में ब्राह्मणों, क्षत्रियों, वैश्यों और शूद्रों को सभी प्रदेशों से सत्कारपूर्वक बुलाओ। उनको श्रद्धा-सत्कारपूर्वक भोजन कराओ ।

सनातन धर्म के प्राचीन सम्प्रदायों में मौजूद वर्णव्यवस्था का स्वरूप

1. ब्रह्म संप्रदाय

ब्रह्म सम्प्रदाय के संस्थापक माधवाचार्य थे।माधवाचार्य के अनुसार, पुरुष सूक्त में वर्णित वर्ण की अवधारणा को जन्म से नहीं, बल्कि आत्मा के स्वभाव से परिभाषित किया गया है। ब्राह्मण प्रकृति की आत्मा शूद्र के रूप में पैदा हो सकती थी लेकिन ब्राह्मण बन सकती थी।

◙ माधवाचार्य ने " तत्पर्य निर्णय " में इसी विषय को आगे प्रतिपादित किया है -

अधिकाश्चेद् गुणा: शूद्रे ब्रह्मणादि: स उच्छ्यते ब्रह्मणोऽप्यल्पगुणक:द्र एवेति कीर्तित:

अर्थात् - यदि शूद्र में श्रेष्ठ भाव हैं तो उसे ब्राह्मण कहा जाता है और निम्न गुणों वाले ब्राह्मण को शूद्र के रूप में जाना जाता है।

माधवाचार्य ने उल्लेख किया है -

(विष्णुभक्तिश्चनुगता सर्ववर्णेषु विश्पतिम्)

अर्थात् - विष्णु के "शुद्ध सात्विक भक्त" चार वर्णों के विभाजन से ऊपर है।

वर्ण और जाति भिन्न हैं। वर्ण आंतरिक जीव स्वरूप है । शूद्र वैष्णव और गुरु बन सकता है। हम श्री व्यासराज के शिष्य, माधवाचार्य परंपरा के महान "कनकदास" को कैसे भूल सकते हैं। मैं सभी से अनुरोध करता हूं कि वे जाकर पढ़ें उनकी अद्भुत कहानी कि कैसे उन्होंने पाखण्डियों द्वारा जातिगत भेदभाव का सामना किया उडुपी मंदिर में और क्या हुआ ?

2. गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय

गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय की आधारशिला चैतन्य महाप्रभु के द्वारा रखी गई इनके ही द्वारा इस संप्रदाय की 16वीं शती में स्थापना की गयी। उनके द्वारा प्रारंभ किए गए महामंत्र नाम संकीर्तन का अत्यंत व्यापक व सकारात्मक प्रभाव आज पश्चिमी जगत तक में है। श्रीमद् अभयचरणारविन्द भक्तिवेदांत स्वामी प्रभुपाद को गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय के पश्चिमी जगत के आज तक के सर्वश्रेष्ठ प्रचारक माने जाते हैं।

◙ एक वैष्णव ब्राह्मण का चयन उसके जन्म के आधार पर नहीं अपितु उसके गुणों पर आधारित होता है इसलिए चैतन्य महाप्रभु का मानना था की -

किब विप्र, किब न्यासी, शूद्र केने नय ।

येई कृष्ण-तत्त्व-वेत्ता, सेई गुरु हय ॥

(चैतन्य-चरितामृत, मध्य 8:128)

अर्थात् -"चाहे कोई ब्राह्मण हो, सन्यासी हो या शूद्र - चाहे वह कुछ भी हो - अगर वह कृष्णतत्त्ववेत्ता है तो वह यथार्थ प्रामाणिक गुरु बन सकता है ।"

यही परम प्रभु की ओर से संकेत है।

◙ श्री सनातन गोस्वामी जी ने हरिभक्ति-विलास में लिखा है की-

तत्वसागरे च--

यथा काश्चनतां याति कांस्य रसविधानत:।

तथा दीक्षाविधानेन द्विजत्वं जायते नृणाम् ॥१२॥

(हरिभक्ति विलास 2:12)

अर्थात् - "तत्वसागर में उक्त है - जिस प्रकार बेल धातु जैसी आधार धातु को रासायनिक प्रक्रिया द्वारा सोने में बदला जा सकता है, उसी तरह किसी भी व्यक्ति को दीक्षा-विधान, दीक्षा प्रक्रिया द्वारा द्विज में बदला जा सकता है"

◙ एक बहुत ही प्रसिद्ध बंगाली वैष्णव कविता है -

मुचि हया सूचि यदि कृष्णा भजे

सूचि हया मुचि यदि कृष्णा त्यजे

अर्थात् - मोची भी ब्राह्मण हो जाता है यदि वो कृष्णा को भजता है ब्राह्मण मोची हो जाता है यदि वो ईश्वर का त्याग करता है ।

वैष्णव और वैष्णव गुरु कोई भी बन सकता है। आज की तरह कई जातिवादी पाखंडियो ने कई बार चैतन्य महाप्रभु की आलोचना की, यहां तक कि उनके खिलाफ कई षड्यंत्र भी किए। सभी रिकॉर्ड और बहुत अच्छी तरह से प्रलेखित है, महाप्रभु ने ऐसे सभी प्राणियों को वाद-विवाद में हराया।

भक्तिसिद्धांत सरस्वती ने सार्वजनिक बहसों में जातिवादी नकली दृष्टिकोण के खिलाफ तर्क दिया (जिसके लिए बाद में उनकी जान को खतरा था) उन्होंने औपचारिक पवित्र जनेऊ और जाति की परवाह किए बिना किसी को भी ब्राह्मण पुजारी बनने का अवसर प्रदान किया।

3. श्री वैष्णव संप्रदाय

श्री वैष्णव अति प्राचीन नाम है लेकिन अब इस संप्रदाय को इसके प्रमुख आचार्य के नाम से जाना जाता है। श्री वैष्णव के विभिन्न संप्रदाय मानते हैं कि "प्रपत्ति" भाव सभी के लिए खुला है और शूद्र गुरु और वैष्णव बन सकते हैं। रामानुजाचार्य स्वयं इसके समर्थक थे। श्री रामानुजाचार्य के जीवन प्रसंग को कोई भी पढ़ सकता है।स्वामी रामानुजाचार्य जो सबसे प्रमुख श्री वैष्णव आचार्य हैं, उनके कई शिष्य (अनुयायी) थे जो ब्राहमण नहीं थे। इसलिए श्री वैष्णव संप्रदाय में, जाति का मुद्दा मोक्ष के लिए नहीं उठता है। प्रभु के लिए प्रेम, दीक्षा और मोक्ष सभी के लिए है।

कांचीपूर्णा (तिरुक्कच्चि नम्बि) नाम से एक शूद्र कांचीपुरम के मंदिर में सेवा कर रहा था। यद्यपि एक शूद्र कांचीपूर्णा इतना पवित्र और अच्छा था कि वहां के लोग उसके लिए बहुत सम्मान और श्रद्धा रखते थे।इससे प्रभावित होकर एक बार रामानुजाचार्य शूद्र कांचीपूर्णा 'को नमन किया और उन्हें दीक्षा देने के लिए कहा और उन्हें अपने गुरु के रूप में प्रतिष्ठित किया। जिस पर कांचीपूर्णा ने रामानुज को उत्तर दिया -

"तुम एक ब्राहमण हो, एक शूद्र हूँ मैं तुम्हें कैसे दीक्षा दे सकता हूँ?"

इस पर श्री रामानुज ने उत्तर दिया "एक व्यक्ति की जाति क्या है जो भगवान नारायण के साथ दिन-रात संवाद करता है" इसके बाद संत काँचीपुर्ण ने उन्हें दीक्षा दी और श्री रामानुजाचार्य के गुरु बने।

वर्तमान में कांचीपुरम में एक मंदिर है जहां कांचीपूर्णा की छवि स्थापित की गई है और जहां उन्हें एक वैष्णव संत के रूप में पूजा जाता है।

4. रामानंदी संप्रदाय

◙ रामानंदी संप्रदाय के संस्थापक श्री रामानंद थे। जगतगुरु श्री रामानंदाचार्य ने नारा दिया था की-

जात पात पूछे नही कोय,

जो हरि को भजे सो हरि का होय

अर्थात् -"कोई आपकी जाति नहीं पूछता। जो कोई हरि की पूजा करता है, वह हरि का हो जाता है"

◙ प्रपति मोक्ष का कारण है इस पर जिज्ञासा होती है कि इस प्रपत्ति का अधिकारी कौन है ? इसके उत्तर में आचार्य रामानंदाचार्य जी अपने ग्रन्थ श्री वैष्णवमताब्जभास्कर में कहते हैं -

सर्वे प्रपत्तेरधिकारिण: सदा शक्ता अशक्ता पदयोर्जगत्प्रभो: ।

अपेक्ष्यते तत्र कुलं बलं च नो न चापि कालो न च शुद्धतापि वै ।।

(श्रीवैष्णवमताब्जभास्कर:मुक्तिसाधनप्रकरण -चतुर्थप्रश्नोत्तरे श्लोक110)

अर्थात् - जगत्प्रभु सर्वेधर की शरणागति में सबको अधिकार है । चाहे वह बलवान् हो, बलहीन हो, उच्च कुल में उत्पन्न हो या नीच हो क्योंकि भगवान् परमकृपालु हैं अतः वे स्वप्रपत्ति में कुल तथा जाति आदि की अपेक्षा नहीं रखते हैं । इसलिये जीवमात्र प्रपत्ति का अधिकारी है ।

उन्होंने अपने वैष्णव मातबजीभास्कर में इस बात पर जोर दिया कि किसी की उम्र, लिंग, जाति, सामाजिक स्थिति, काया आदि कुछ भी हो। हर कोई भगवान राम के चरण कमलों की शरण लेने के लिए पात्र है।

यह वह संप्रदाय है जिसके तहत महान तुलसीदास जुड़े थे। इस प्रकार वे अपनी शिक्षाओं के अनुसार सभी जातियों के वैष्णव शिष्य बनाते हैं। संत रविदास और संत कबीरदास इनके सबसे प्रसिद्धः शिष्यों में से एक है। हिंदुओं को धर्म परिवर्तन से बचाने के लिए रविदास जी और कबीरदास जी ने वाद विवाद में मुस्लिम काजियों को हरा दिया था।

5. रुद्र संप्रदाय

विष्णुस्वामी प्राचीन भारत के एक दार्शनिक थे जिन्होंने शुद्धाद्वैत वैष्णव रुद्र सम्प्रदाय की स्थापना की।रुद्र सम्प्रदाय के प्रवर्तक आचार्य बल्लभ थे। वल्लभाचार्य को महान सुधारक के रूप में भी जाना जाता है। उन्होंने भक्ति की तलवार से कठोर जाति व्यवस्था की रस्सियों को भी काट दिया। विष्णुस्वामी ने भी जाति की विचार को त्यागकर सभी योग्य मनुष्यों के लिए द्विजता का दरवाजा खोला।

वल्लभाचार्य ने निम्न जाति के कई लोगों को वैष्णव पुष्टिमार्ग में दीक्षित किया। "84 वैष्णवों की वार्ता " वर्णन करती है कि प्रपत्ति भाव सभी के लिए है और कोई भी वैष्णव बन सकता है, जाति के बावजूद, इन 84 वैष्णवों में से कई निम्न जाति के हैं।

6. नाथ संप्रदाय

नाथ सम्प्रदाय भारत का एक हिंदू धार्मिक पन्थ है। शिव इस सम्प्रदाय के प्रथम गुरु एवं आराध्य हैं। इसके अलावा इस सम्प्रदाय में अनेक गुरु हुए जिनमें गुरु मत्स्येन्द्रनाथ तथा गुरु गोरखनाथ सर्वाधिक प्रसिद्ध हैं। नाथ सम्प्रदाय समस्त देश में बिखरा हुआ था। गुरु गोरखनाथ ने 10वीं शताब्दी में इस सम्प्रदाय के बिखराव और इस सम्प्रदाय की योग विद्याओं का एकत्रीकरण किया, अतः इसके संस्थापक गोरखनाथ माने जाते हैं।

यह अच्छी तरह से स्थापित है कि नाथ योगी विशेष रूप से गोरखनाथ ने योगी बनने और मोक्ष प्राप्त करने के लिए जन्म आधारित योग्यता को अस्वीकार कर दिया था। शूद्र योगी तथा गुरु बन सकते थे और यह बहुत आश्चर्य की बात है कि गोरखनाथ ने कई मुसलमानों को सनातन धर्म में दीछित करके योगी बना दिया।

गोरख सिद्धांत में सूत संहिता का हवाला देते हुए नाथ गुरु की स्थिति को सबसे ऊपर (वर्णाश्रम) कहा गया है। नाथ मत की श्रेष्ठता अद्वैत, द्वैत, द्वैताद्वैत पर स्थापित है और योग मत सभी लोगों के लिए स्थापित और अच्छी तरह से खुला है ।नर और मादा के बीच न तो भेदभाव। शिवतुल्य की सूची में भी 84 महासिद्ध 15 निम्न जाति के हैं, यहाँ तक कि सफाई करने वाले भी।

7. कौल सिद्ध परम्परा

कुलार्णव तन्त्र, कौलाचार से सम्बन्धित प्रसिद्ध तांत्रिक ग्रन्थ है। इसकी रचना 11 वीं से 15 वीं शती में हुई थी।इस संप्रदाय में भी कोई जातिभेद नहीं है -

गतं शूद्रस्प शूद्रत्वं विप्रस्यापि च विप्रता ।

दीक्षासंस्कारसम्पन्ने जातिभेदो न विद्यते॥

(कुलार्णव तंत्र - 14: 91)

अर्थ – दीक्षा संस्कार के बाद कोई शूद्र , शूद्र नहीं रहता है, न ही कोई विप्र विप्र रहता है। दीक्षा के बाद जाति का कोई अंतर नहीं रहता है।

शरीरस्य न संस्कारों जायते न च कर्मणः।

आत्मन: कारयेदीक्षामनादिकुलकुण्डलीम्॥

(कुलार्णव तंत्र - 14: 81)

अर्थ – शरीर का न तो संस्कार होता है न उसकी कोई जाति होती है न कोई कर्म । आत्मा की ही दीक्षा होती है जो की अनादि कुलकुंडली है।

एकाक्षरप्रदातारं यो गुरुअ्चावमानयेत् ।

श्वानं योनिशतं गत्वा चण्डालत्वमवाप्नुयात्॥

(कुलार्णव तंत्र - 11 : 74)

अर्थ – यह बिलकुल निर्धरित है की जो अपने गुरु का सही से सम्मान नहीं करता वो चाण्डाल बन जाता है और वो कुत्ते के योनि में जन्म पाता है।

दीक्षया मोक्षदीपेन चण्डालोपि विमुच्यते ।

(कुलार्णव तंत्र - 14 : 80)

अर्थ – दीक्षा से चाण्डाल भी मोक्ष प्राप्त करता है।

ब्रह्मनन्दमयं ज्ञानं कथयामि वरानने ।

नः ब्राह्मणो ब्राह्मणस्तु क्षत्रिय: क्षत्रियस्तथा ॥

वैश्यो न वैश्यः शूद्रों न शूद्रत्स्तु परमेश्वरी ।

चाण्डालो नैव चाण्डालः पौल्कसो न च पौल्कसः ॥

सर्वे समं विजानीयात्परमार्मेविनिश्चयात् ।

(ज्ञानार्णव तंत्र 23:28-29)

अर्थ – ब्रह्मज्ञान का अधिकारी कौन है ? किसी भी वर्ण के बीच कोई भेद नहीं है, यहां तक कि चांडाल या पौलकसो को भी ब्रह्म के साथ एकीकरण प्राप्त होता है तथा सभी एक सामान है।

यदि ज्ञानं भवेद एव सा देवो न तु मनुषः

चाण्डालदिनीचजातौ स्थिरो व ब्राह्मणोत्तमः

(रुद्रयामल तंत्र 48:131)

अर्थ –अगर किसी को ज्ञान की प्राप्ति होती है तो वो देव सामान्य है मनुष्य नहीं निम्न जाती के चाण्डाल भी ज्ञान प्राप्ति के बाद ब्राह्मण से उत्तम हो जाता है।

8 . कापालिका और कालमुख परम्परा

इन खोये हुवे सम्प्रदायों में भी कोई जातिभेद नहीं था कपालिका शूद्र , चांडाली तक बनती थी इनके गुरु नाथयोग गुरुवों के समान थे ।

9 .लिंगायत संप्रदाय

इस सम्प्रदाय की स्थापना 12वीं शताब्दी में महात्मा बसवण्णां ने की थी।बसवण्णा को शैव संप्रदाय के उपसंप्रदाय वीरशैव या लिंगायत का जनक माना जाता है। बसवण्णां जातिवाद के प्रबल विरोधी थे इन्होने जो संप्रदाय बनाया उसमें सभी एक सामान थे कोई ऊँच नीच नहीं था । इस संप्रदाय के अनुयायी सर्वाधिक आदिवासी बने । इन्होने कहा था " कोई भी जन्म

से उच्च या नीच न होकर जन्म से सभी समान होकर नैतिक ज्योति की प्राप्ति से श्रेष्ठ बनता है।"लिंगायत सम्प्रदाय में मूर्ति पूजा नहीं होती बल्कि अपने ही शरीर पर ईष्टलिंग को धारण करते हैं न ही ये वेदों को मानते है तथा इस संप्रदाय की स्थापना महात्मा बसवण्णां ने जाति प्रथा को खत्म करने के लिए किया था।

10.आलवार परम्परा

आलवार वैष्णव तमिल सन्त थे। इनका काल 6 ठी से 9वीं शताब्दी के बीच रहा।ये श्री वैष्णव संप्रदाय से सम्बंधित है। इनके पदों का संग्रह "दिव्य प्रबन्ध" कहलाता है ।आलवार सन्त भक्ति आन्दोलन के जन्मदाता माने जाते हैं।ये जो प्राचीन वर्ण व्यवस्था मानते थे उसमे जाति का कोई भेद नहीं था । नारायण की उपासना करनेवाले भक्त 'आलवार' कहलाते हैं। इनकी संख्या 12 हैं।

◙ उनके नाम इस प्रकार है -

(1) पोय्गै आलवार

(2) भूतत्तालवार

(3) पेयालवार

(4) तिरुमालिसै आलवार

(5) नम्मालवार

(6) मधुरकवि आलवार

(7) कुलशेखरालवार

(8) पेरियालवार

(9) आण्डाल

(10) तोण्डरडिप्पोड़ियालवार

(11) तिरुप्पाणालवार

(12) तिरुमंगैयालवार।

◙ ये आलवार संत भिन्न-भिन्न जातियों में पैदा हुए थे, परंतु संत होने के कारण उन सबका समान रूप से आदर है :-

1 - संत मुनिवाहन योगी (तिरुप्पाणालवार) एक दलित (हरिजन, तथाकथित अछूत) परिवार में जन्म लिया और भारत में तमिल वैष्णव हिंदू मंदिरों में आज भी उनकी पूजा की जाती है।

2-संत परकाल(तिरुमंगैयालवार) एक शूद्र परिवार में परिवार में जन्म लिया और भारत में तमिल वैष्णव हिंदू मंदिरों में आज भी उनकी पूजा की जाती है।

3- नम्मालवार वैष्णव संतों में सबसे प्रमुख थे, ये शूद्र माता पिता की संतान थे। इनका जन्म अलवारथिरुनागिरि (कुरुगुर) 3059 ईसा पूर्व में हुवा था । नलयिर दिव्य प्रबंध में 4000 श्लोकों में से उनका योगदान 1352 श्लोकों में है । इन्हे "वेदम तमिल सेय्द मारन" नाम से भी सम्बोधित किया जाता हैं , इसका अर्थ हैं की संस्कृत वेदों का सारार्थ तमिल प्रभंधा में अनुग्रह करने वाले मारन ।

4- संत कुलशेखर (कुलशेखरालवार) एक क्षत्रिय परिवार में जन्म लिया और भारत में तमिल वैष्णव हिंदू मंदिरों में आज भी उनकी पूजा की जाती है।

ब्राह्मण कौन है ?

【 वर्ण शब्द की परिभाषा 】

यास्क ने निरुक्त में कहा है कि “वर्णो वृणोतेः’ ’ (निरुक्त 2 : 3)
अर्थात् - वर्ण उसे कहते हैं जो वरण अर्थात् चुना जाये .

वर्ण शब्द के अर्थ से ही स्पष्ट है कि यहाँ व्यक्ति को स्वतन्त्रता थी कि वह किस वर्ण को चुनना चाहता है।

【 ब्राह्मण शब्द का अर्थ 】

◙ यस्क मुनि की निरुक्त के अनुसार -
ब्रह्म जानाति ब्राह्मण:
अर्थात् - ब्राह्मण वह है जो ब्रह्म (ईश्वर) को जानता है।

इसलिए महृषि याज्ञवल्क्य ने गार्गि से कहा था-
एतदक्षरं गार्गि विदित्वास्माल्लोकात् प्रैति स ब्राह्मणः ॥
(बृहदारण्यकोपनिषद् 3 : 9 :10)
अर्थात् -हे गार्गि ! जो इस अक्षर ब्रह्म को जानकर इस लोक से मरकर जाता है, वह ब्राह्मण है।

【 ब्राह्मण कौन है 】

◙ वेदों के अनुसार -

ब्रा॒ह्म॒णास॑: सो॒मिनो॒ वाच॑मक्रत॒ ब्रह्म॑ कृ॒ण्वन्त॑: परिवत्स॒रीण॑म् ।
अ॒ध्व॒र्यवो॑ घ॒र्मिण॑: सिष्विदा॒ना आ॒विर्भ॑वन्ति॒ गुह्या॒ न के चि॑त् ॥
(ऋग्वेद » मण्डल:7» सूक्त:103» मन्त्र:8)

अर्थात् - ब्राह्मण सौम्य चित्तवाले ब्रह्म के यश को प्रकाशित करते हुए वेदवाणी का उच्चारण करते हैं, कोई एकान्त स्थल में बैठे व्रत करते हुए ब्राह्मण उष्णता से सिक्त शरीर होकर भी बहिर्भूत नहीं होते ॥

◙ बुद्ध के अनुसार -

न जटाहि न गोत्तेहि न जच्चा होति ब्राह्मणो।
यम्हि सच्चं च धम्मो च सो सुची सो च ब्राह्मणो॥ -
(धम्मपद - ब्राह्मण वग्ग : 11)

अर्थात् - न जटा से, न गोत्र से, न जन्म से ब्राह्मण होता है जिसमे सत्य और धर्म है वही पवित्र है और वही ब्राह्मण है ।

◙ महावीर के अनुसार -

तसपाणे वियाणेत्ता संगहेण य थावरे।
जो न हिंसइ तिविहेण तं वयं बूम माहणं॥

अर्थात् : महावीर स्वामी कहते हैं कि जो इस बात को जानता है कि कौन प्राणी त्रस है, कौन स्थावर है। और मन, वचन और काया से किसी भी जीव की हिंसा नहीं करता, उसी को हम ब्राह्मण कहते हैं।

◙ जैन आदिपुराण के अनुसार -

मनुष्यजातिरेकैव जातिनामोदयोद्भवा ।

वृत्तिभेवाहिता वाच्चातुर्विध्यमिहाश्नुते॥ 45

ब्राह्मणा व्रतसंस्कारात् क्षत्रियाः शस्त्रधारणात् ।

वणिजोऽर्थार्जनान्याय्याच्छूद्रान्यग्वृत्तिसंश्रयात् ॥46

(आदिपुराण - पर्व 38)

अर्थात् - जातिनामक कर्म अथवा पंचेन्द्रिय जाति का अवान्तर भेद मनुष्य जाति नामकर्म के उदय से उत्पन्न होने वाली मनुष्य जाति एक ही है। सिर्फ आजीविका के भेद से वह चार प्रकार की हो जाती है / व्रत-संस्कार से ब्राह्मण, शस्त्रधारण से क्षत्रिय, न्यायपूर्ण धनार्जन से वैश्य और सेवावृत्ति से शूद्र कहलाते हैं।

【 ब्राह्मण कैसे बनते है 】

स्वाध्यायेन व्रतैर्होमैस्त्रैविद्येनेज्यया सुतैः।

महायज्ञैश्च यज्ञैश्च ब्राह्मीयं क्रियते तनुः॥

(मनुस्मृति 2 : 28)

अर्थात् -वेदों के पढ़ने से, ब्रह्मचर्य, विहित अवसरों पर अग्निहोत्र करने से, पक्षेष्टि आदि अनुष्ठान करने से, धर्मानुसार सुसन्तानोत्पत्ति से, पांच महायज्ञों के प्रतिदिन करने से, अग्निष्टोम आदि यज्ञ-विशेष करने से मनुष्य का शरीर ब्राह्मण का बनता है।'

ब्राह्मण वर्ण का चयन करने वाले स्त्रियों और पुरुषों के लिए निर्धारित कर्म-

अध्यापनमध्ययनं यजनं याजन तथा।

दानं प्रतिग्रहं चैव ब्राह्मणानामकल्पयत्॥

(मनुस्मृति 1: 88)

अर्थात् -ब्राह्मण वर्ण में दीक्षा लेने के इच्छुक स्त्री-पुरुषों के लिए ये कर्तव्य और आजीविका के कर्म निर्धारित किये हैं-'विधिवत् पढ़ना और पढ़ाना, यज्ञ करना और कराना तथा दान प्राप्त करना और सुपात्रों को दान देना।'

इन कर्मों के बिना कोई ब्राह्मण-ब्राह्मणी नहीं हो सकता।

【 क्या ब्राह्मण जाति है? 】

तर्हि जाति ब्राह्मण इति चेत् तन्न । तत्र
जात्यन्तरजन्तुष्वनेकजातिसम्भवात् महर्षयो बहवः सन्ति ।
ऋष्यशृङ्गो मृग्याः, कौशिकः कुशात्, जाम्बूको जाम्बूकात्, वाल्मीको
वाल्मीकात्, व्यासः कैवर्तकन्यकायाम्, शशपृष्ठात् गौतमः,
वसिष्ठ उर्वश्याम्, अगस्त्यः कलशे जात इति शृतत्वात् । एतेषां
जात्या विनाप्यग्रे ज्ञानप्रतिपादिता ऋषयो बहवः सन्ति । तस्मात्
न जाति ब्राह्मण इति ॥
(वज्रसूचि उपनिषद् -श्लोक-6)

अर्थात् - ब्राह्मण कोई जाति है ? नहीं, यह भी नहीं हो सकता; क्योंकि विभिन्न जातियों एवं प्रजातियों में भी बहुत से ऋषियों की उत्पत्ति वर्णित है ! जैसे – मृगी से श्रृंगी ऋषि की, कुश से कौशिक की, जम्बुक से जाम्बूक की, वाल्मिक से वाल्मीकि की, मल्लाह कन्या (मत्स्यगंधा) से वेदव्यास की, शशक से गौतम की, उर्वशी से वसिष्ठ की, कुम्भ से अगस्त्य ऋषि की उत्पत्ति वर्णित है ! इस प्रकार पूर्व में ही कई ऋषि बिना ब्राह्मण घर में में जन्म लिए प्रकांड विद्वान् हुए हैं, इसलिए केवल कोई जाति विशेष भी ब्राह्मण नहीं हो सकती है !

इस आधार पर हम कह सकते है की कोई जन्म से ब्राह्मण नहीं होता जैसा की आज सनातन परंपरा विरोधी कार्य होता है ब्राह्मण का सन्तान ब्राह्मण बन जाता है वो वैदिक शास्त्र विरोधी है , अगर उनको ब्राह्मण बनना है तो वेद पढ़ना आवश्यक है !

【 क्या ब्राह्मण का वर्णपतन संभव है ? 】

जब कोई वेदाध्ययन से ब्राह्मण बनता है लेकिन बाद में अपने निर्धारित कर्म को त्याग देता है तो उसका वर्ण परिवर्तन हो जाता है-

'हिन्सानृतप्रिया: लुब्धा: सर्वकर्मोपजीबिन:।
कृष्णा: शौचपरिभ्रष्टास्ते द्विजा: शुद्रतां गता:॥
(महाभारत शांतिपर्व 188 : 3)

अर्थात् -जो शौच (शरीर और मन शुद्ध रखना) और सदाचार से भ्रष्ट होकर हिंसा और असत्य के प्रेमी हो गये। लोभवश सभी तरह के निम्न कर्म करके जीविका चलाने लगे और इसलिए जिनके शरीर का रंग काला पड़ गया, वे ब्राह्मण, शूद्रत्व को प्राप्त हो गये।

इत्यतै: कर्मभिर्व्यस्ता द्विजा वर्णान्तरं गता:।
धर्मों यज्ञ क्रिया तेषां नित्य न प्रतिषिध्यते॥
(महाभारत शांतिपर्व 188 : 4)

अर्थात् -इन्हीं कर्मों के कारण ब्राह्मणत्व से अलग होकर ब्राह्मण दूसरे-दूसरे वर्ण के हो गये। किन्तु किसी भी वर्ण के लिए नित्य धर्मानुष्ठान और यज्ञ कर्म का भी निषेध नहीं किया गया है।

◙ महर्षि मनु के अनुसार -

योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम् ।
स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ॥
(मनुस्मृति 2.168)

अर्थात्- जो ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य वेदादिशास्त्रों का पठन-पाठन छोड़ अन्यत्र परिश्रम करता है वह शूद्रता को प्राप्त हो जाता है।

ब्राह्मण कहलाने योग्य कौन है

यःस्याद् दान्तः सोमपश्चायशीलः।
सानुक्रोशः सर्वसहो निराशीः ॥
ऋजुमृदुरनृशंसः क्षमावान।
स वै विप्रो नेतरः पापकर्मा ॥
(महाभारत शांति पर्व -63 :8)

अर्थात् - जो मन और इन्द्रियों कों संयम में रखनेवाला। सोमयाग करके सोमरस पीनेवाला , सदाचारी , दयालु, सब कुछ सहन करनेवाला , निष्काम ,सरल , क्रूरतारहित और क्षमाशील हो वही ब्राह्मण कहलाने योग्य है | उससे अलग जो पापाचारी है, उसे ब्राह्मण नहीं समझना चाहिये ॥ ८ ॥

【 किन लक्षणों से मनुष्य ब्राह्मण होता है 】

यज्ञ: श्रुतमपैशुन्यमर्हिंसातिथि पूजनम्।
दम: सत्य तपो दानमेतद् ब्राह्मणलक्षणम्॥
(महाभारत- शान्तिपर्व - 76 : 5)

अर्थात् - यज्ञ, वेदों का अध्ययन, किसी की चुगली न करना , हिंसा न करना, अतिथि पूजन करना, इन्द्रियों को संयम में रखना, सच बोलना, तप करना और दान देना यह सब ब्राह्मण का लक्षण है।

◙ महाभारत के वनपर्व में जब युधिष्ठिर से पूछा गया अगर किसी शूद्र में ब्राह्मण के लक्षण हुवे तो वो क्या होगा इसपर युधिष्ठिर ने कहा-

शूद्रे तु यद् भवेल्लक्ष्म द्विजे तच्च न विद्दते,
न वै शूद्रो भवेच्छूद्रो ब्रह्मणो न च ब्रह्मणः ।
(महाभारत - वनपर्व 180:25)

अर्थात् - यदि शूद्र में सत्य आदि उपयुक्त लक्षण हैं तो वो ब्राह्मण है और अगर किसी ब्राह्मण में सत्य आदि लक्षण का आभाव है तो वो ब्राह्मण शूद्र है .

【 ब्राह्मण और दंडविधान 】

अष्टापाद्यं तु शूद्रस्य स्तेये भवति किल्विषम्
षोडशैव तु वैश्यस्य द्वात्रिंशत् क्षत्रियस्य च॥

(मनुस्मृति 8.337)

ब्राह्मणस्य चतुःषष्टिः पूर्णं वाऽपि शतं भवेत्।
द्विगुणा वा चतुःषष्टिः, तद्दोषगुणविद्धि सः॥
(मनुस्मृति 8.338)

अर्थात् - अपराध में शूद्र को आठ गुणा दण्ड दिया जाता है तो वैश्य को सोलहगुणा, क्षत्रिय को बत्तीसगुणा, ब्राह्मण को चौंसठगुणा, अपितु उसे सौगुणा अथवा एक सौ अट्ठाईसगुणा दण्ड देना चाहिए, क्योंकि उत्तरोत्तर वर्ण के व्यक्ति अपराध के गुण-दोषों और उनके परिणामों, प्रभावों आदि को भली-भांति समझने वाले हैं।

आप यहाँ समझ सकते है की शूद्र के लिए किसी भी अपराध के लिए सबसे कम दंड का विधान है क्यूंकि वो शिक्षित नहीं है.अतः ब्राह्मण को दण्डरहित छोड़ने का जहां भी कथन है, वह इस मनुव्यवस्था के विरुद्ध होने से प्रक्षिप्त (मिलावट) है।

◙ शूद्रों के मदिरा पीने पर कोई दंड का विधान नहीं है , ब्राह्मणों के मदिरापान करने पर मृत्यु दंड का विधान है यह इसलिए क्योंकि ब्राह्मण वही है जो ब्रह्म को जानता है और शूद्र को इसमें छूट इसलिए दी गई है क्योंकि वह अज्ञानी अनपढ़ होता है -

सुरापस्य ब्राह्मणस्योष्णामासिञ्चेयुः सुरामास्येमृतः शुध्येत्
(गौतम धर्मसूत्र 23:1)

अर्थात्- जिस ब्राह्मण ने शराब पी है, उसके मुंह में गर्म तीखी मदिरा डालो जिससे वह मृत्यु के बाद शुद्ध हो जाएगा ।

ब्राह्मण शब्द की वेदों में बहुत महत्ता है। मगर इसकी महत्ता का मुख्य कारण जन्मना ब्राह्मण होना नहीं अपितु कर्मणा ब्राह्मण होना है। मध्यकाल में हमारी वैदिक वर्ण व्यवस्था बदल कर जाति व्यवस्था में परिवर्तित हो गई।जातिवाद से हिन्दू समाज की एकता समाप्त हो गई। इसी कारण से हम कमजोर हुए तो विदेशी विधर्मियों के गुलाम बने।

हिन्दुओं के 1200 वर्षों के दमन का अगर कोई मुख्य कारण है तो वह जातिवाद है। वही हमारा सबसे बड़ा शत्रु है।

शूद्र कौन है ?

[शूद्र शब्द की परिभाषा]

'शुच्-शोके' धातु से भी 'रक्' प्रत्यय के योग से 'शूद्र' शद बनता है। इसकी व्युत्पत्ति होती है-'शोच्यां स्थितिमापन्नः, शोचतीति वा' =जो निनस्तर की जीवनस्थिति में है और उससे चिन्तायुक्त रहता है। आज भी अल्पशिक्षित या अशिक्षित व्यक्ति को श्रमकार्य की नौकरी मिलती है। वह अपने जीवन निर्वाह की स्थिति को सोचकर प्रायः चिन्तित रहता है। उसे इस बात का पश्चात्ताप होता रहता है कि उच्चशिक्षित होता तो मुझे भी अच्छी नौकरी मिलती। इसी प्रकार प्राचीन वर्णव्यवस्था में जो अल्पशिक्षित या अशिक्षित रहता था उसे भी श्रमकार्य मिलता था। उसी श्रेणी को शूद्रवर्ण कहते थे।

[शूद्र शब्द की उत्पत्ति]

' 'असतो वा एषः सभूतः यच्छूद्रः' ' (तैत्तिरीय ब्राह्मण -3. 2 . 3 .9)

अर्थात्-''यह जो शूद्र है, यह असत्=अशिक्षा (अज्ञान) से उत्पन्न हुआ है।' '

विधिवत् शिक्षा प्राप्त करके ज्ञानी व शिक्षित नहीं बना, इस कारण शूद्र रह गया।यहाँ शिक्षा ग्रहण करने का तात्पर्य वेदाध्ययन से है इसलिए हमारे धर्म के अनुसार शूद्र वही है जो अनपढ़ हो और अगर कोई वेद पढ़ा हुवा है तो और वो शूद्र बोलो तो वो मुर्खता है .

【 जन्म से सभी शूद्र होते है 】

◙ मनुस्मृति के प्रक्षिप्तसिद्ध एक श्लोक में कहा है-

शूद्रेण हि समस्तावद् यावत् वेदे न जायते।

(मनुस्मृति 2.172)

अर्थात्-'जब तक कोई वेदाध्ययन नहीं करता तब तक वह शूद्र के समान है, चाहे किसी भी कुल में उत्पन्न हुआ हो।'

जब भी किसी का जन्म होता है तो वो गुणहीन और अशिक्षित होता है इसलिए हर एक मनुष्य जन्म से शूद्र ही होता है

【 शूद्र का कर्तव्य 】

एकमेव तु शुद्रस्य प्रभुः कर्म समादिशत् ।

एतेषामेव वर्णानां शुश्रूषामनसूयया ।।

(मनुस्मृति 1:91)

अर्थात् - परमेश्वर ने(शूद्रस्य) जो विद्धाहीन – जिसको जिसको पढ़ने से विद्या न आ सके , शरीर से पुष्ट सेवा मै कुशल हो, उस उस शूद्र के लिए इन ब्राह्मण ; क्षत्रिय, वैश्य तीनो वर्णो की निन्दा से रहित प्रीती से नौकरी करना , यही कर्म करने की आज्ञा है दी गई है ।।

शूद्रवर्णस्थ व्यक्ति अशिक्षित होने के कारण ब्राह्मणों सहित सभी द्विजवर्णों के घरों में सेवा या श्रम कार्य करते थे। घर में रहने वाला कभी अछूत नहीं होता। मनु ने कहा है-

विप्राणां वेदविदुषां गृहस्थानां यशस्विनाम्

शुश्रूषैव तु शूद्रस्य धर्मो नैःश्रेयसः परः॥

(मनुस्मृति 9 : 334)

अर्थात् -वेदों के विद्वान् द्विजों, तीनों वर्णों के प्रतिष्ठित गृहस्थों के यहां सेवाकार्य (नौकरी) करना ही शूद्र का हितकारी(लाभदायक) कर्त्तव्य है।

जिसको विद्या से भी विद्धा न आई भला वह अपनी जीविका किस प्रकार चलावेगा बिना ज्ञान के वह कौन सा कार्य करेगा ?? इसलिए उसके लिए ठीक है कि वह किसी घर पर भोजन बनावे या उसका सेवक बनकर उससे अपनी जीविका चलावे । आज भी आप देखोगे तो जो अशिक्षित लोग ही सेवक बने रहते है जैसे – गाडी चलाना , भोजन बनाना , चाय पानी आदि पिलाना आदि आदि ।।

【 जो द्विज नहीं बन पाया वो शूद्र 】

वैदिक शास्त्रों के अनुसार सभी मनुष्यों को शिक्षा ग्रहण करना अर्थात् द्विज बनने का अधिकार है ,जो अशिक्षित रह जाता है उस वर्ण या व्यक्ति को 'शूद्र' कहा जाता है। शेष तीन वर्ण-ब्राह्मण, क्षत्रिय और वैश्य 'द्विज' कहे जाते हैं; क्योंकि वे विधिवत् शिक्षा ग्रहण करते हुए अभीष्ट वर्ण का प्रशिक्षण प्राप्त करके उस वर्ण को धारण करते हैं। वह उनका दूसरा जन्म ''ब्रह्मजन्म' ' = 'विद्याध्ययन जन्म' कहाता है। पहला जन्म उनका माता-

पिता से हुआ, दूसरा विद्याध्ययन से, अतः वे ‘द्विज’ और ‘द्विजाति’ कहे गये। इस नाम में भी किसी प्रकार की हीनता का भाव नहीं है।

◙ मनु का श्लोक है-

ब्राह्मणः क्षत्रियो वैश्यः त्रयो वर्णाः द्विजातयः।

चतुर्थः एकजातिस्तु शूद्रः नास्ति तु पंचमः॥

(मनुस्मृति 10.4)

अर्थात्-‘वर्णव्यवस्था में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य ये तीन वर्ण ‘द्विज’ या ‘द्विजाति’ कहलाते हैं; क्योंकि माता-पिता से जन्म के अतिरिक्त विद्याध्ययन रूप दूसरा जन्म होने से इन वर्णों के दो जन्म होते हैं। चौथा वर्ण ‘एकजाति’ है; क्योंकि उसका केवल माता-पिता से एक ही जन्म होता है, वह विद्याध्ययन रूप दूसरा जन्म नहीं प्राप्त करता। उसी को शूद्र कहते हैं। वर्णव्यवस्था में पांचवां कोई वर्ण नहीं है।’

【 वर्ण परिवर्तन और वर्णपतन 】

शूद्रो ब्राह्मणतामेति ब्राह्मणश्चैति शूद्रताम्।

क्षत्रियाज्जातमेवं तु विद्याद्वैश्यात्तथैव च।

(मनुस्मृति 10:65)

अर्थात्- ब्राह्मण शूद्रत्व को,शूद्र ब्राह्मणत्व को और ऐसे ही क्षत्रिय और वैश्य से उत्पन्न संतान भी अन्य वर्णों को प्राप्त हो जाती हैं।

योऽनधीत्य द्विजो वेदमन्यत्र कुरुते श्रमम् ।

स जीवन्नेव शूद्रत्वमाशु गच्छति सान्वयः ॥

(मनुस्मृति 2:168)

अर्थात्- जो ब्राह्मण, क्षत्रिय या वैश्य वेदादिशास्त्रों का पठन-पाठन छोड़ अन्यत्र परिश्रम करता है वह शूद्रता को प्राप्त हो जाता है।

◙ बुद्ध के वक्त भी ऐसी व्यवस्था चलन में थी -

न जच्चा वसलो होति न जच्चा होति ब्राह्मणो ।

कम्मुना वसलो होति, कम्मुना होति ब्राह्मणो॥ ||

(तिपिटक:सुत्तनिपातपाली 7:वसलसुत्तं)

अर्थात् - जन्म से कोई चाण्डाल नहीं होता और जन्म से कोई ब्राह्मण भी नहीं होता | कर्म से ही चाण्डाल और कर्म से ही ब्राह्मण होता है ।

【 शूद्र अन्य वर्णों को पालता है जिनको शुद्रो से नफरत है वो ये शूद्र धरती छोड़ दे - 】

स नैव व्यभवत्स शौद्रं वर्णममृजत पूषणमियं

वै पूषेयं हीदं सर्वं पुष्यति यदिदं किञ्च ॥ १३ ॥

(बृहदारण्यक उपनिषद् 1:4:13)

व्याख्या - यह शूद्र वर्ण पूषण (पालनेवाला) अर्थात् पोषण करने वाला हैं और साक्षात् इस पृथ्वी के समान हैं क्यूंकि जैसे यह पृथ्वी सबका भरण -पोषण करती हैँ वैसे शूद्र भी सबका भरण-पोषण करता हैं। इसलिए पृथिवी को शूद्रदेव कहा गया हैं क्योंकि हमें अन्न देती है आश्रय देती है और हमारा पोषण करती है ।

'सः शौद्रं वर्णमसृजत्, पूषणमियं वै पूषा इयं हीदं सर्वं पुष्यति यदिदं किञ्च।' '

(शतपथ ब्राह्मण -14.4.2.25)

अर्थात्-उस ब्रह्म-पुरुष ने शूद्रसबन्धी वर्ण को उत्पन्न किया। देवों में पूषा देव को शूद्र के रूप में उत्पन्न किया, क्योंकि वह सबको पालन-पोषण करके पुष्ट करता है।

क्या यहां कहीं हीनभावना या अपमानजनक भावना दिखाई पड़ती है? गुणों में समानता यह है कि पृथ्वी का पोषक रूप=पूषा देव सब पदार्थों को पुष्ट करता है और शूद्र भी अपने श्रम-सेवा से सबको पुष्ट करता है, अतः गुण-कर्म-साय से दोनों शूद्र वर्णस्थ हैं।

【शूद्रहत्या के लिए प्रायश्चित】

एतदेव व्रतं कृत्स्नं षण्मासाञ् शूद्रहा चरेत् ।

वृषभैकादशा वापि दद्याद्विप्राय गाः सिताः ।।

(मनुस्मृति-11/130)

अर्थात् - शूद्र के वध करने में छः मास पर्यन्त शूद्र हत्या के प्रायश्चित को करे और बैल और दस गऊ ब्राह्मण को देवे। यह भी अज्ञानता से वध करने में जानना। इन सब व्रतों के करने में कपाल ध्वजा को त्याग देना चाहिये।

अतः शूद्रहत्या में ब्राह्मण हत्या जैसा प्रायश्चित होता है। कहिये, शूद्रहत्या का प्रायश्चित करके शूद्र का दर्जा बढ़ाया गया या नहीं?

वर्ण संकरता और वर्ण व्यवस्था

【 वर्ण संकर का अर्थ 】

अलग अलग वर्ण के स्त्री और पुरुष के मिलन से उत्पन्न होने वाली सन्तान को वर्ण संकर कहा जाता है|

【पुराणों के अनुसार】

बाद में लिखे गए कुछ स्मृति तथा धर्मसूत्र इस विषय पर बहुत निंदाजनक वचन बोलते है | वेदों में वर्ण संकरता जैसा कोई विचार नहीं है इसलिए पुराणों से ही हम कलयुग में संकरता वर्ण को समझेंगे तथा अंत में निष्कर्ष निकालेंगे |

◙ नृसिहं पुराण के अध्याय 54 के श्लोक 18और 23 इस संबंध मे दृष्टव्य हैं ,जो इस प्रकार हैं :-

शूद्रतुल्या भविष्यन्ति परस्पर वधेप्सव:|
उत्तमां नीचतां यान्ति नीचाश्चोत्मता तथा|(१८)
न कश्चिदकविर्नाम सुरापा ब्रम्हवादिन:|
किंकराश्च भविष्यन्ति शूद्राणां द्विजातय:|(२३)

अर्थात् - सारे वर्णो के लोग शूद्रो जैसे हो जायेंगे ,उत्तम वर्ण वाले नीचे गिरेंगें और नीचे वर्ण वाले उत्तम हो जायेंगे |ऐसा कोई नही होगा जो अपने को कवि न मानता हो|मदिरा पीने वाले ब्रम्हग्यान का उपदेश करेंगे |ब्राम्हण,क्षत्रिय और वैश्य शूद्रो के सेवक हो जायेंगे|

◙ विष्णु पुराण मे क्या कहा गया है|विष्णु पुराण के षष्ठ अंश के अध्याय २ इस संबंध मे पठनीय है,मै उसका संगत अंश आपके सामने रख रहा हूँ |इस अध्याय मे कलियुग मे शूद्र व स्त्रियो के महत्व का वर्णन किया गया है और उनकी कलियुग मे श्रेष्ठता बताई गयी है|जो इस प्रकार है:-

श्री पराशर उवाच

मग्नोऽथ जान्हवीतोयादुत्थायाह सुतो मम|
शूद्रस्साधु: कलिस्साधुरित्येवं श्रृणवतां वच|(६)
तेषां मुनीनां भूयश्च ममज्ज स नदी जले|
साधु साध्विति चोत्थाय शूद्र धन्योसि चाब्रवीत(७)
निमग्नश्च समुत्थाय पुन: प्राह महामुनि:|
योषित: साधु धन्यातास्ताभ्यो धन्यतरोऽस्ति क:|(८)
व्रतचर्यापरैर्ग्राह्या वेदा: पूर्वं द्विजातिभि:|
ततस्स्वधर्मसम्प्राप्तैर्यष्टव्यं विधिवद्धनै |(१९)
वृथा कथा वृथा भोज्यंवृथेज्या च द्विजन्मनाम|
पतनाय ततो भाव्यं तैस्तु संयमिभिस्स्दा|(२०)
असम्यक्करणे दोषस्तेषां सर्वेषु वस्तुषु|
भोज्यपेयादिकं चैषां नेच्छाप्राप्तिकरं द्विजा:|(२१)
पारतन्त्रयं समस्तेषु तेषां कार्येषु वै यत:|
जयन्ति ते निज़ाँल्लोकान्क्लेशेन महता द्विजा:|(२२)
द्विजश्रुषयैवैष पाकयज्ञाधिकारवान|
निजान्जयति वै लोकान्च्छूद्रो धन्यतरस्तत:|(२३)

अर्थात् - उस समय गंगाजी मे डुबकी लगाए हुए मेरे पुत्र व्यास ने जल से उठकर उन मुनि जन के सुनते हुए ,यह वचन कहा कि कलियुग ही श्रेष्ठ है,शूद्र ही श्रेष्ठ है|ऐसा कहकर फिर उन्होने गोता लगाया और फिर उठकर कहा "शूद्र तुम ही श्रेष्ठ हो,तुम ही धन्य हो,यह कह

कर वे महामुनि फिर जलमे मग्न हो गये और फिर खडे होकर कहा कि "स्त्रियाँ ही साधु हैं,वे ही धन्य हैं ,उनसे अधिक धन्य कौन है?"|

फिर इसका कारण भी बताया,कि द्विजातियो को पहले ब्रम्हचर्य व्रत का पालन करते हुए वेदाध्ययन करना पड़ता है और फिर स्वधर्माचरण से उपार्जित धन के द्वारा विधिपूर्वक यज्ञ करने पड़ते हैं ,इसमे भी व्यर्थ वार्तालाप,व्यर्थ भोजन और व्यर्थ यज्ञ उनके पतन के कारण होते हैं,इसलिए उन्हे सदा संयमी रहना पड़ता है,सभी कामो मे अनुचित(विधि विपरीत) करने से उन्हे दोष लगता है|यहाँ तक वे भोजन पानादि भी अपनी इच्छा से भोग नही सकते क्योंकि उन्हे सम्पूर्ण कार्यो मै परतन्त्रता रहतीहै|द्विज लोग बडे क्लेश से निज लोको को प्राप्त करते है|किन्तु जिसे द्विज सेवार्थ पाक यज्ञ का अधिकार है,वह पुण्य लोको की आसानी से प्राप्ति कर लेता है,"इस लिए वह अन्य वर्णो से धन्यतर है|मुनिजन शूद्र को भक्ष्याभक्ष्य का अथवा पेयापेय का कोई नियम नही होता है,इसलिए मैने उसे साधु अर्थात् श्रेष्ठ कहा है|

देखा आपने कलियुग मे वर्ण व्यवस्था का एक और पहलू हम आज कल भी ब्राम्हण को श्रेष्ठ वर्ण बताते है और इसका प्रचार भी करते है|जबकि धर्मशास्त्रो के अनुसार श्रेष्ठ वर्ण शूद्र भी है |

◙ श्रीमद् भागवत पुराण के स्कंध 12 अध्याय 2 के श्लोक 8,12 व 14 ग्रहणीय हैं,जो कलियुग के संबंध में हैं जो इस प्रकार हैं :-

ब्राम्हणविटक्षत्रशूद्राणाम् यो बली भविता नृपः|
प्रजा हि लुब्धै राजन्यैनिर्धृणैर्दस्युधर्मभिः|(८)
क्षीणमायेषु देहेषु देहिनाम् कलिदोषतः|
वर्णाश्रमवताम् धर्मे नष्टे वेद पथे नृणाम् |(१२)
शूद्रप्रायेषु वर्णेषुच्छागप्रायासु धेनुषु |
गृहप्रायेष्वाश्रमेषु यौनप्रायेषु बंधुषु |(१४)

अर्थात् -कलियुग मे राजा होने का कोई नियम नही होगा ब्राम्हण,क्षत्रिय,वैश्य अथवा शूद्र मे जो बली होगा वही राजा होगा|उस समय के राजा निर्दयी होंगे | लोभी इतने होंगे कि उनमें और लुटेरो मे कोई अन्तर नही रह जायेगा| कलि के दोष के कारण प्राणियो के शरीर छोटे व रोगग्रस्त हो जायेंगें |वर्ण और आश्रम बतलाने वाला धर्म नष्ट हो जायेगा| चारो वर्णो के लोग शूद्रो के समान हो जायेगें| गायें बकरी के समान छोटी-छोटी और कम दूध देने वाली होंगी|चारो आश्रम वाले (ब्रम्हचर्य,गृहस्थ,वानप्रस्थ और सन्यास) गृहस्थों जैसे होंगे | वैवाहिक संबंध वाले ही अपने बन्धु अर्थात् सगे संबंधी होंगे|

◙ मत्स्य पुराण के अध्याय 165 के श्लोक 14 से 17 का उल्लेख कर रहा हू|जो निम्नवत हैं :-

तथा वर्षसहत्रं तु वर्षाणाम् द्वे शते अपि|
संध्यया सह संख्यातं क्रूरं कलियुगं स्मृतम्|(१४)
यन्नाधर्मश्चतुष्पाद: स्याद्धर्म: पादविग्रह:|
कामिनस्त पसा हीना जायन्ते तत्र मानवा:|(१५)
नैवातिसात्विक: कश्चिन्न साधुर्न सत्यवाक |
नास्तिका ब्रम्हभक्ता वा जायन्ते तत्रमानवा|(१६)
अहंकारगृहीताश्च प्रक्षीणस्नेहबन्धना:|
विप्रा: शूद्रसमाचारा: सन्ति सर्वे कलौ युगे|(१७)

अर्थात् - तदुपरान्त एक सहस्त्र तथा दो सौ वर्ष अर्थात् १२०० वर्षो तक क्रूर कलियुग की अवधि मानी गयी है|जिसमे अधर्म चार चरणो से विद्यमान रहता है उस कलियुग मे उतपन्न होने वाले मनुष्य,कामी,तथा तपस्या से रहित होते है वे अहंकार से ग्रस्त तथा स्नेह से रहित होते है|न तो कोई अत्यन्त सात्विक होता है और न ही कोई साधु अथवा सत्यवादी होता है|प्राय: परलोक न मानने वाले लोग होते है और ब्रम्ह की उपासना करते है|कलियुग मे सभी ब्राम्हण शूद्रो का सा आचरण करने वाले होते है और सभी शूद्र सामान होंगे |

◙ नृसिहं पुराण के अध्याय 54 के श्लोक मे इस संबंध मे दृष्टव्य हैं ,जो इस प्रकार हैं :-

राजोवाच

कलिं विस्तरतो ब्रूहि त्वं हि सर्वविदां वर:|

ब्राम्हणा:क्षत्रिया वैश्या:शूद्राश्च मुनिसत्तम||(८)

किमाहारा: किमाचारा भविष्यन्ति कलौयुगे|

सूतोवाच

श्रुणुध्वमृषय: सर्वे भरद्वाजेन संयुता:(९)

अर्थात् - राजा बोले कि मुनिसत्तम कलि का विस्तार पूर्वक वर्णन कीजिए| क्योंकि आप सर्वज्ञ महात्माओ मे सर्वश्रेष्ठ हैं|कृपया बताइये कि कलियुग मे ब्राम्हण,क्षत्रिय,वैश्य और शूद्र कैसे आचरण व आहार वाले होंगे |

सूत जी बोले:-भरद्वाज सहित आप सभी ऋषिगण सुनें:-

वद्धवैरा भविष्यन्ति परस्परवधेप्सव:|

ब्राम्हणा: क्षत्रिया वैश्या सर्वे धर्मपराङ् मुखा:(१७)

शूद्रतुल्या भविष्यन्ति तप: सत्य विवर्जिता:(१८)१

ब्राम्हणा:क्षत्रिया वैश्या भविष्यन्ति कलौ युगे|

गीतवाद्यरता विप्रा वेदवादपराङ् मुखा|(३६)

भविष्यन्ति कलौ प्राप्ते शूद्रमार्गप्रवर्तिन:|

अल्पद्रव्या वृथालिङ्न्गा वृथाहंकारदूषिता:|(३७)

शूद्रवृत्यैव जीवन्ति द्विजा नरक भोगिन:|

अनावृष्टिभय प्राया गगनासक्त दृष्टय:|(४६)

अर्थात् - कलियुग मे ब्राम्हण,क्षत्रिय,वैश्य आपस मे वैर बाधंकर एक दूसरे का वध करने की इच्छा वाले होंगे|वे सभी अपने-अपने धर्म से विमुख होंगे| तप और सत्य भाषण आदि से रहित होकर शूद्रो के समान हो जायेंगे| कलियुग मे पाखण्डी ब्राम्हण,क्षत्रिय,वैश्य होंगे |

कलियुग मे विप्र गाने बजाने मे मन लगायेँगे और शूद्रो के मार्ग का अनुसरण करेंगे|नरक भोगी द्विज(ब्राम्हण,क्षत्रिय,वैश्य)शूद्रवृत्ति से अपनी आजीविका चलायेंगे|वे अनावृष्टि का भय होगा वे आकाश की ओर वर्षा के लिए दृष्टि लगायेंगे|

◙ अग्नि पुराण में सोलहवें अध्याय के पांचवे श्लोक में कलियुग में सबके वर्णसंकर हो जाने की घोषणा की गयी है|श्लोक इस प्रकार है:-

सर्वे कलियुगान्ते भविष्यन्ति च संकरा:(५)

अर्थात् - कलियुग में पाखण्डी लोग ऐसे कर्म करते है,जो नर्क में ले जाने वाले होते है|कलियुग के अन्त में सभी वर्ण संकर हो जाते है|

◙ नारद पुराण के पूर्व भाग प्रथम पाद मे कलियुग का वर्णन करते हुए कहा गया है कि:-

"मनुष्यो के द्वारा बार बार अधर्मपूर्ण व्यवहार होता है|

उस समय समस्त पाप परायण प्रजा अवस्था क्रम के विपरीत मरने लगेगी| ब्राम्हण आदि सभी वर्णो मे परस्पर संकरता आ जायेगी| मूढ़ मनुष्य काम और क्रोध के वशीभूत हो व्यर्थ के संताप से पीड़ित होगे|

" कलियुग मे सभी वर्ण शूद्रो के समान हो जायेंगे|"

◙ निष्कर्ष-हिंदुओं को छोड़कर बाकी इस्लाम और ईसाइयत में काफी एकता देखी जाती है इसका एक सबसे बड़ा कारण है कि वह लोग अंतरजाति विवाह करते हैं जिससे जरूरत पड़ने पर वह लोग एक हो जाते हैं इसीलिए हम हिंदुओं को भी एक होना होगा आपसी द्वेष और कुंठा बुलाकर सभी वर्णों में वैवाहिक संबंध स्थापित करने होंगे ! और वैसे भी पुराणों के अनुसार कलयुग में सभी वर्णसंकर है क्योंकि अब आश्रम व्यवस्था खत्म हो चुकी है !

【ज्योतिष शास्त्र के अनुसार】

ज्योतिष ग्रन्थो के अनुसार 27 नक्षत्र होते है,उनके आधार पर हमारी जन्म राशि का निर्धारण होता है | राशिय़ाँ 12 है जैसे कि मेष,बृष,मिथुन,कर्क,सिहं,कन्या,तुला,वृश्चिक,धनु,मकर,कुम्भ और मीन | प्रयेक राशि का एक वर्ण होता है|इन बारह राशियों का चार वर्णो में विभाजन किया गया है|

◙ जो निम्न प्रकार से है:-

मेष, सिहं ,धनु	=	क्षत्रिय
बृष,कन्या,मकर	=	वैश्य
मिथुन,तूला,कुम्भ	=	शूद्र
कर्क,वृश्चिक,मीन	=	ब्राम्हण

यदि आपका परिवार छोटा है तो कम से कम दो या तीन वर्णो के लोग आपके परिवार मे होंगे और यदि परिवार बडा है तो चारो वर्णो के लोग आपके परिवार मे होंगे| जहाँ तक आपके कुल या वंश की बात है,चारो वर्णो के लोग उसमे अवश्य मिलेगें | सिद्ध हुआ ना कि हम सब वर्ण संकर हैं |

झष: कर्कटो वृश्चिको भूमिदेवा धनुर्मेषसिंहास्तथा क्षत्रियाश्च।
वृष: कन्यका नक्रराशिर्विराश्च नृयुग्मं तुला कुम्भराशिश्च शूद्रा:।।
(मुहूर्तसंग्रहदर्पणम् 2:24)

अर्थात् - कर्क, वृश्चिक, मीन राशि ब्राह्मण; मेष, सिंह, धनु राशि क्षत्रिय; वृष, कन्या, मकर राशि वैश्य तथा मिथुन, तुला, कुम्भ राशि शूद्र हैं।

【भिन्न वर्णों के विवाह सम्बन्ध के प्राचीन उदाहरण 】

1- महर्षि शुक्राचार्य ब्राह्मण ने राजा प्रियवृत क्षत्रिय की पुत्री उर्जस्वती से विवाह किया था।

2- महर्षि श्रृंगी ब्राह्मण ने राजा लोमपाद की पुत्री (और राजा दशरथ की गोद ली हुई पुत्री) शांता (भगवान रामचन्द्रजी की सौतेली बहन) से विवाह किया था। इन्हीं के पुत्रेष्टि यज्ञ की खीर से दशरथ जी के चार बेटों का जन्म हुआ था।

3- महर्षि जमदग्नि ब्राह्मण ने राजा गाधि की कन्या रेणुका से विवाह किया था। इन्हीं की महावीर संतान भगवान परशुराम जी थे, जिन्होंने 21 बार पृथ्वी को क्षत्रिय विहिन कर दिया था।

4- महर्षि ऋचीक ब्राह्मण ने राजा गाधि क्षत्रिय की कन्या सत्यवती से विवाह किया था।

5- महर्षि पिप्पलाद ब्राह्मण ने क्षत्रिय पद्ध्य से विवाह किया था! (शिव - पुराण, उत्तरार्ध, अध्याय -30)

6- महर्षि अगस्त्य ब्राह्मण ने क्षत्रिय कन्या लोपामुद्रा से विवाह किया था।

7- महर्षि रैक्व ब्राह्मण (उपनिषद् में प्रसिद्ध ऋषि) ने राजा जानश्रुत क्षत्रिय की कन्या से विवाह (या दान में प्राप्त) किया था।

8- सौभरि ब्राह्मण ने राजा मान्धाता (जो राम जी के पूर्वज थे) क्षत्रिय की कन्या से विवाह किया था।

9- भगवान रामचन्द्र जी के गुरु महर्षि विश्वामित्र जी ने देवलोक की अप्सरा मेनका से बिना विवाह किये शकुन्तला उत्पन्न की थी। जिसका प्रेम राजा दुष्यन्त से हुआ था, जिसकी सन्तान भरत थे। जिनके नाम से कहा जाता है कि हमारे देश का नाम भारत पड़ा है।

10- महाभारत के भीम ने आदिवासी हिडम्बा से विवाह कर महावीर घटोत्कच को जन्म दिया था।

11- भगवान कृष्ण ने जामवती नामक एक आदिवासी कन्या से विवाह किया था, उनके पुत्र साम्ब ने मायावती नामक असुर कन्या से प्रेम विवाह किया था!

12- राजा प्रियवृत क्षत्रिय ने विश्वकर्मा ब्राह्मण की बेटी बर्हिष्मती से विवाह किया था।

वायु पुराण के अनुसार इनका एक विवाह महर्षि कर्दम ब्राह्मण की पुत्री काम्या या कन्या से हुवा था।

13- राजा नीप क्षत्रिय ने राक्षसों के गुरु महर्षि शुक्राचार्य ब्राह्मण की पुत्री कृत्वी से विवाह कर ब्रह्मदत्त को जन्म दिया! (भागवत पुराण स्कन्ध 9/21) इसी कुल में मुदगल ऋषि उत्पन्न हुए थे, जिनके नाम पर ब्राह्मणों में मौद्गल्य गौत्र चला है।

14- राजा ययाति क्षत्रिय ने महर्षि शुक्राचार्य ब्राह्मण की एक पुत्री देवयानी से विवाह किया था ,शुक्राचार्य की अनुमति से यह ब्याह हुआ।

15- प्रमत्ता ब्राह्मणी का विवाह एक नाई के साथ हुआ! इनके पुत्र मतंग महामुनि थे (महाभारत, अनुशासन पर्व, अध्याय -22,)

16- आपको यह जानकर घोर आश्चर्य होगा कि भगवान रामचन्द्र जी के गुरु महर्षि वसिष्ठ गणिका के गर्भ से पैदा हुए थे।

(गणिकागर्भ सम्भूतो वासिष्ठाश्च महामुनि:। तपसा ब्राह्मणों जात: संस्कारस्तत्र कारणम्।।

भविष्य पुराण 1:42:49)

17- महर्षि कर्दम ब्राह्मण की कन्या अरुंधती और वैश्या पुत्र महर्षि वसिष्ठ का विवाह हुआ था, उनके पुत्र शक्ति का विवाह चांडाल (भंगी) कन्या अदृश्यवती से हुआ था, इनके पुत्र महर्षि

पराशर हुए! जिनके नाम से ब्राह्मणों में पराशर गोत्र प्रचलित है! (शिव पुराण, पूर्वार्ध खंड 1 अध्याय 13)

18- महर्षि पराशर ने नाव में सत्यवती (मत्स्यगंधा अर्थात् जिसके शरीर से मछली की गन्ध आती हो) नामक केवट या भोई या निषाद कन्या से प्रेम होने पर महर्षि वेद व्यास को उत्पन्न किया था, जो हम हिंदुओं के सबसे बड़े गुरु हैं, जिनके नाम से व्यास पूर्णिमा या गुरुपूर्णिमा हम सारे देश में घूमधाम से मनाते हैं। जिन्हें 18 पुराण, महाभारत, गीता के लेखक और चारों वेदों के संकलन कर्ता माना जाता है।

19 - महर्षि वेद व्यास ने नियोग द्वारा धृतराष्ट्र और पांडु को पैदा किया था! और पाँच पाण्डव युधिष्ठिर, भीम, अर्जुन नकुल सहदेव पाँचों वर्ण संकर संतान थे।

20 - गीता में अर्जुन वर्ण संकरता का विरोध करता है जबकि वह स्वयं उसके दादा परदादा और उसकी स्वयं की सन्तान वर्ण संकर थी क्योंकि उसने स्वयं ने चित्रांगदा और उलूपी नामक आदिवासी या विदेशी लड़कियों से विवाह किया था।

21 - व्यास जी की माता जी सत्यवती केवट का विवाह इस शर्त पर राजा शान्तनु से हुआ था कि सत्यवती की कोख से जन्मा बालक ही दिल्ली (हस्तिनापुर) की गद्दी पर बैठेगा! इस कारण शान्तनु के बेटे देवदत्त को आजीवन ब्रह्मचर्य की प्रतिज्ञा कर भीष्म बनना पड़ा था।

22- दशरथ जी का विवाह अफ़ग़ानिस्तान या कैकयी देश की राजकुमारी कैकयी से हुआ था, भगवान रामचन्द्र जी का विवाह अज्ञात कुल की कन्या माता सीता जी से हुवा था।

23- महान सम्राट चन्द्रगुप्त मौर्य ने शूद्र स्त्री से प्रेम विवाह तथा यूनानी सम्राट सेल्यूकस की पुत्री हेलना से आचार्य चाणक्य की आज्ञा अनुसार विवाह किया , सम्राट चन्द्रगुप्त के बेटे बिन्दुसार ने चंपा की ब्राह्मण स्त्री सुभद्रांगी से विवाह किया जिससे सुप्रसिद्ध सम्राट अशोक का जन्म हुवा। सम्राट अशोक ने विदिशा के एक वैश्य की कन्या श्रीदेवी से प्रेम विवाह किया था।

24 -प्रसिद्ध पितृ मातृ भक्त श्रवण कुमार के पिता वैश्य और माता शूद्र थी ।

25- हम सबके लोक देवता प्रातः स्मार्णीय हनुमान जी की माता अंजलि जी ब्राह्मण कन्या व उनके पिता केसरी जी वानर जाति के थे।

26-भृगु मुनि एक ब्राह्मण थे; उनका पुत्र सौनिक उसकी शादी हुयी क्षत्रिय राजा ययाति की कन्या सुकन्नी के साथ।

27- मुनि सलारकर ने नागलोक की कन्या सलार्कारै से शादी की ; यह नागलोक और भूलोक के अंतरजातीय विवाह था।

28-शांतनु महाजा और सत्यवती (परिमाल्गंधी)का विवाह ।वशु क्षत्रिय और उनकी पत्नी देव-कन्य थी; देव-कन्या किसी शाप से मच्छ कन्या के रूप में पैदा हुयी ; उस कन्या के पालित पिता ने वर पाया कि उनकी बेटी राजकुमारी होनी चाहिए. इसी कारण शांतनु और देवयानी की शादी हुयी।

29-रूद्रसेन ॥ तथा प्रभावती गुप्ता का विवाह, रविकीर्ति नामक ब्राह्मण का वैश्य कन्या भानुगुप्ता से विवाह।

अंतरजातीय शादियाँ किसी प्रकार के विरोध के बिना महाभारत में हुयी हैं. अतः अंतरजातीय विवाह नया नहीं हैं. केवल कलियुग की बात नहीं हैं ; भारतीय परंपरा में हुआ है; इसको कलियुग का बलि मानना गलत है । कौन कहता है कि वर्णसंकर संतान नालायक, अयोग्य, विकलांग, अधार्मिक, पापी या कुल को डुबोने वाली होती है? इतिहास और विज्ञान ने साबित कर दिया है कि वर्णसंकर संतान हमेशा बुद्धिमान, खूबसूरत, शक्तिशाली और रोग प्रतिरोधक क्षमता से लेश रहते हैं।

इन सब उदाहरणों से साबित होता है कि हमारे पूर्वज रोटी- बेटी व्यवहार में कितने उदार थे, उन्होंने अवैध संतानों तक को भी ऋषि- महर्षि, देवी- देवता और भगवान या अवतारी पुरुषों

तक का दर्जा दिया था। न जाने हम कैसे उनकी नालायक संतान निकले की रोटी- बेटी बंदी को ही धर्म समझकर एक दूसरे के खून के प्यासे बन गए।

30-लक्ष्मण की माता सुमित्रा वर्ण संकरी थी । जिन्हें इस विषय में किसी प्रकार की शंका हो वे कृपा कर भट्टि काव्य, प्रथम सर्ग श्लोक 13 तथा उसकी जयमंगला टीका पढ़ें-

निष्ठांगते दत्रिमसभ्यतोषे, विहित्रिभे कर्म्मणि राजपत्न्यः ।
प्राशुहुनोच्छिष्ट मुदारवंश्या - स्तिस्रः प्रसोतुं चतुरः सुपुत्रान् ॥

अर्थात् - जब राजा दशरथ का पुत्रेष्ठि यज्ञ विधिपूर्वक समाप्त हुआ और उन्होंने सब लोगों को दान दक्षिणा देकर सन्तुष्ट किया तो उनकी तीनों स्त्रियों ने, जो उच्चकुल में उत्पन्न हुई थीं, चार सुन्दर पुत्रों को उत्पन्न करने के लिए यज्ञ के बचे हुए चरु का भक्षण किया ।

इस श्लोक में 'उदार वेश्या:' शब्द की व्याख्या करते हुए भट्टि काव्य के सुप्रसिद्ध टीकाकार श्री जयमङ्गल जी अपनी जयमङ्गला टीका में लिखते हैं-

"उदारवंश्या महावंशोद्भवा । शेषेयत् । कौसल्या कैकेयी च क्षत्रिये । सुमित्रा तुवर्ण संकरजा ।

अर्थात् - उदार वंश्या का अर्थ है उच्चकुल में उत्पन्न । यहाँ पर शैषिक यत् प्रत्यय किया गया है। कौशल्या और कैकेयी क्षत्रिय कुमारियाँ थीं। किन्तु सुमित्रा वर्णसंकरी थी।

महाकाव्य रघुवंश, दशम सर्ग, श्लोक 55 पढ़िए -
अचिता तस्य कौशल्या प्रिया केकय वंशजा ।
अतः संभावितां ताभ्यां सुमित्रा मैश्वरः

अथ - कौशल्या राजा दशरथ की पूजिता थी अर्थात् वे उन्हें सम्मान की दृष्टि से देखा करते थे और कैकेयी उनकी प्रियतमा थी इसलिए उनकी यह इच्छा हुई ये ही दोनों सुमित्रा को सम्मानित करें। अभिप्राय यह कि राजा दशरथ को साहस न हुआ कि पिंड-विभाग करते समय वे सुमित्रा के लिए भी एक भाग स्वयं कर दें; अतः उन्होंने उस पर कृपा करने का भार उक्त दोनों रानियों पर ही छोड़ा किन्तु रानियों ने कोई भेदभाव नहीं किया ।

अतः इन प्रमाणों से स्पष्ट है कि लक्ष्मण की माता सुमित्रा क्षत्रिया न होकर वर्णसंकरी थी, जिसपर भी लक्ष्मण का विवाह क्षत्रिश्रेष्ठ मिथिलेश के परिवार में ही हुआ।

【अन्य तथ्य 】

गंधर्व या प्रेम विवाह को सनातन धर्म में कानूनी या धार्मिक मान्यता है। हमारे बहुत से महापुरुषों ने गंधर्व विवाह किया था और गंधर्व विवाह में ज्यादातर स्त्री और पुरुष अलग अलग वर्ण के होते थे । प्रेम विवाह को सनातन धर्म में धार्मिक मान्यता ही इस रूढ़िवादी विचार का ख़तम कर देती है।

◙ वात्स्यायन ऋषि इस प्रकार के विवाह के प्रबल समर्थक हैं, उनकी दृष्टि में भी अनुरागात्मकता के कारण इसका बहुत महत्व है । बौधायन तथा नारद ने भी इसे हेय नहीं माना है।

【वर्ण संकरता का फायदा 】

वैज्ञानिक आधार से अगर कहे तो अलग अलग वर्ण के लोगो में वैवाहिक सम्बन्ध बनने से कई आनुवांशिक बीमारियां खत्म हो जाती है जो पीढी दर पीढी चली आ रही तथा पैदा होने संतान अधिक गुणवान होती है ।

【अन्तर्जातीय विवाह पर प्रतिबन्ध के कारण】

◙ अन्तर्जातीय विवाह पर प्रतिबन्ध के सम्बन्ध में विचार करते हुए डा. घुर्ये ने तीन कारण बताएं हैं -

1- रक्त की परिपक्वता को बनाए रखने की इच्छा.

2- वैदिक संस्कृति को किसी बाहिरी से (मलेच्छ)अक्षुण्य बनाये रखने का प्रयास.

3- ब्राह्मणों की श्रेष्ठता को स्थिर रखने तथा कर्माधारित वर्ण व्यवस्था को जन्म आधारित बनने की अभिलाषा.

◙ डॉ 0 घुर्ये जैसे समाजशास्त्रियों ने अन्तर्जातीय विवाह के औचित्य का समर्थन करते हुए लिखा है कि- 'अन्तर्जातीय विवाह के द्वारा एक जाति का दूसरी जाति में रक्त का सम्मिश्रण होना, सम्बन्धों को दृढ़ बनाने तथा राष्ट्रीयता का पोषण करने में सबसे प्रभावशाली साधन सिद्ध हुआ है ।

(सन्दर्भ -Ghurye ,Caste Class and Occupation , page -147 ,75)

◙ डा 0 राजबली पाण्डेय ने अपनी किताब (हिन्दू संस्कार : पेज 227) पर विभिन्न उदाहरणों द्वारा दिखाया है कि वैदिक कालीन समाज में प्रतिलोम विवाह व्यवहृत था । इसका कारण वर्ण बन्धन में जटिलता का अभी तक विकास न हो पाना था।

【कलयुग में वर्णव्यवस्था का स्वरूप 】

◙ शुरू में सभी एक वर्ण के थे-

न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राह्ममिदं जगत्।
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम्॥
(महाभारत- शान्तिपर्व -188:10)

अर्थात्-सारा मनुष्य-जगत् एक ब्रह्म की सन्तान है। वर्णों में कोई भेद नहीं है। ब्रह्मा के द्वारा रचा गया यह सारा संसार पहले सम्पूर्णतः ब्राह्मण ही था। मनुष्यों के कर्मों द्वारा यह वर्णों में विभक्त हुआ।

◙ एक वर्ण से 4 वर्ण बने-

इत्येतैःकर्मभिर्व्यस्ताः द्विजा वर्णान्तरं गताः।

धर्मो यज्ञक्रिया तेषाँ नित्यंच प्रतिषिध्यते ॥

(महाभारत- शान्तिपर्व -188:14)

अर्थात्-कार्य भेद के कारण ब्राह्मण ही पृथक-पृथक वर्णों के हो गये। इसलिए धर्म-कर्म और यज्ञ क्रिया उनके लिए भी विहित है-और कभी निषेध नहीं किया गया है ॥ १४ ॥

◙ फिर कलयुग में वर्णव्यवस्था का पतन होता है-

ब्राम्हणा: सर्वभक्षाश्च भविष्यन्ति कलौयुगे|
अजपा ब्राम्हणास्तात शूद्रा जप परायणा|३३
मृषानुशासिन: पाप : मृषावाद परायणा:|
आन्ध्रा:शका: पुलिन्दाश्च यवनाश्च नराधिपा:३५
काम्बोजा वन्हिवका: शूरास्तथा भीरा नरौत्तम|
न तदा ब्राम्हण: कश्चित स्वधर्मुपजीवित:|३६
क्षत्रियाश्चापि वैश्याश्च विकर्मस्था नराधिप|
अल्पायुष: स्वल्पबला: स्वल्पवीर्य्पराक्रमा: |३७

(महाभारत-वनपर्व-188:33-36)

अर्थात् - कलियुग मे ब्राम्हण भक्ष्याभक्ष्य का विचार छोडकर सब कुछ खाने पीने लगेंगे,वे जप से दूर भाग जायेंगे और शूद्र लोग वैदिक मन्त्रो से जप करने लगेंगे| उस समय छल से शासन करने वाले,पापी और असत्यवादी आन्ध्र,शक,पुलिन्द,यवन,कम्बोज,बान्हिक तथा शोर्य सम्पन्न आभीर इस देश के राजा होंगे |उस समय ब्राम्हण क्षत्रिय और वैश्यअपने धर्मानुसार अपनी जीविका नही चलायेगा | सबकी आयु कम होगी |

◙ इसलिए कलयुग में 4 वर्ण फिर से 1 वर्ण का हो जायेगा-

ब्राह्मणाः क्षत्रिया वैश्या नशिष्यन्ति जनाधिप।
एकवर्णस्तदा लोको भविष्यति युगक्षये ।।

(महाभारत-वनपर्व-190:42)

अर्थात् - ब्राम्हण,क्षत्रिय और वैश्य का नाम भी नही रह जायेगा,युगान्त काल मे सारा विश्व एकवर्ण हो जायेगा जैसे शुरू में था |

इसलिए अब समय आ गया है हम सब अपने निजी द्वेष कुण्ठा भुला कर सभी सनातनियो को जोड़े और अपने धर्म के अंतर्गत अलग अलग वर्ण के लोग विवाह करे तभी हिंदुओं में एकता आएगी और विधर्मियो से सनातन धर्म की सुरक्षा संभव है |

【क्या गीता वर्ण संकरता का विरोधी है】

◙ अर्जुन कहते है :

अधर्माभिभवात्, कृष्ण, प्रदुष्यन्ति, कुलस्त्रियः,
स्त्रीषु, दुष्टासु, वार्ष्णेय, जायते, वर्णसंकरः।।
संकरः, नरकाय, एव, कुलघ्नानाम्, कुलस्य, च,
पतन्ति, पितरः, हि, एषाम्, लुप्तपिण्डोदकक्रियाः।।
(गीता -1:41 ,42)

अर्थात् - हे कृष्ण! पाप के अधिक बढ़ जाने से कुल की स्त्रियाँ अत्यन्त दूषित हो जाती हैं और हे वार्ष्णेय! स्त्रियों के दूषित चरित्र वाली हो जाने पर वर्णशंकर संतान उत्पन्न होती है, वर्णसंकर कुलघातियों को और कुलको नरक में ले जाने के लिये ही होता है। गुप्त शारीरिक विलास जो नर-मादा के बीज और रज रूप जल की क्रिया से इनके वंश भी अधोगति को प्राप्त होते हैं।

=>स्वामी चिन्मयानदं जी भगवद गीता के टीका में पहले अध्याय में अर्जुन के वर्ण संकर विषय पर बोले वचन पर टिप्पणी लिखते है की -

" जिस प्रकार कोई कथावाचक हर बार पुरानी कथा सुनाते हुए कुछ नई बातें उसमें जोड़ता जाता है इसी प्रकार अर्जुन की सर्जक बुद्धि अपनी गलत धारणा को पुष्ट करने के लिए नएनए तर्क निकाल रही है। वह जैसे ही एक तर्क समाप्त करता है वैसे ही उसको एक और

नया तर्क सूझता है जिसकी आड़ में वह अपनी दुर्बलता को छिपाना चाहता है। अब उसका तर्क यह है कि युद्ध में अनेक परिवारों के नष्ट हो जाने पर सब प्रकार की सामाजिक एवं धार्मिक परम्परायें समाप्त हो जायेंगी और शीघ्र ही सब ओर अधर्म फैल जायेगा।"

गीता के प्रथम अध्याय में जो अर्जुन ने जो दुःख और निराशा में बोला था उसका जवाब देता हुवे कृष्ण ने दूसरे अध्याय में कहा है कि -

क्लैब्यं माँ स्म गमः पर्थ नैत्वत त्वय्युपपद्यते
क्षुद्रं हृदय-दौर्बल्यं त्यक्त्वोत्तिष्ठ परन्तप"
(गीता -2:3)

"हे पार्थ, इस अपौरुष को मान लेना आपको शोभा नही देता है हे परंतप ! हृदय के इस प्रकार के तुच्छ दोष का त्याग करें और इससे ऊपर निकलें."

सिर्फ इसी श्लोक को कृष्ण का जवाब माना जा सकता है ।अतः जब अर्जुन को सारे सवालों के जवाब मिल जाते है तो वो बोलता है -

अर्जुन उवाच
नष्टो मोहः स्मृतिर्लब्धा त्वत्प्रसादान्मयाच्युत।
स्थितोऽस्मि गतसन्देहः करिष्ये वचनं तव।।
(गीता -18:73)

अर्थात् - अर्जुन बोले -- हे अच्युत ! आपकी कृपा से मेरा मोह नष्ट हो गया है और ज्ञान प्राप्त हो गयी है। मैं सन्देह रहित होकर स्थित हूँ। अब मैं आपकी आज्ञा का पालन करूँगा।

श्री कृष्ण ने गीता में ये भी कहा है कि उन्होंने चार वर्ण इंसान के कर्म के हिसाब से बनाए हैं और न की उसके जन्म के हिसाब से...

वर्णों के लिए गीता का श्लोक..

चातुर्वर्ण्यं मया सृष्टं गुणकर्मविभागशः।
तस्य कर्तारमपि मां विद्ध्यकर्तारमव्ययम्।।

(गीता -4:13)

अर्थात् - (चातुर्वण्र्यम्) ब्राहमण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र इन चारों वर्णों का समूह गुण और कर्मों के विभाग पूर्वक मेरे द्वारा रचा गया है। इस प्रकार उस कर्म का कर्ता भी मुझ काल को ही जान तथा वह अविनाशी परमेश्वर अकर्ता है।

"अतः , भगवद्गीता में भगवान् कृष्ण ने साफ़ तौर पर अंतर्जातीय विवाह का समर्थन किया है."

जाति भेदभाव इंसानों द्वारा प्रथा में लायी गई है और जो लोग इसका अनुकरण करते है , उन्हें भगवान् द्वारा गीता में "कायर" करार दिया गया है. अतः, अगर आप हिन्दू है और आप यह सोचते है की अंतर्जातीय विवाह का समर्थन नहीं कर के अपने धर्म और वंश परम्परा में पद्दोन्नति कर रहे है , तो आप गलत है !

महभारत में हुवे भेदभाव का खंडन

【कर्ण के विषय पर मिथक का खंडन】

कुछ समय से टीवी सीरियल के माध्यम से ऐसा भ्रम फैलाया जा रहा है कि कर्ण के साथ जातिगत भेदभाव हुवा जबकि ये सत्य नहीं उस वक्त कर्माधारित व्यवस्था थी । कर्ण ने द्रोणाचार्य से शिक्षा भी ग्रहण की थी जो आप महाभारत में पढ़ सकते है -

राजपुत्रास्तथा चान्ये समेत्य भरतर्षभ।
अभिजग्मुस्ततो द्रोणमस्त्रार्थे द्विजसत्तमम्।।
वृष्णयश्चान्धकाश्चैव नानादेश्याश्च पार्थिवाः।
सूतपुत्रश्च राधेयो गुरुं द्रोणमियात्तदा।।
स्पर्धमानस्तु पार्थेन सूतपुत्रोऽत्यमर्षणः ।
दुर्योधनमुपाश्रित्य पाण्डवानत्यमन्यत ।।

–Gita Press - (महाभारत आदिपर्व 131 : 10-12)

- Bori - (महाभारत आदिपर्व 122 : 46-47)

अर्थात् -राजकुमार लोग और अन्य सभी युवा भी अस्त्र शिक्षा लेने द्रोण के पास आये, वृष्णिवंशी, अंधकवंशी, बहुत से देशों के राजकुमार और राधा के पुत्र कर्ण भी द्रोण के पास शिक्षा लेने के लिए आये।कर्ण बार बार अर्जुन का विरोध करता रहता था। दुर्योधन के साथ रहके वह पांडवो को उपेक्षा करता था।

विद्याधिकमथालक्ष्य धनुर्वेदे धनञ्जयम्।
द्रोणं रहस्युपागम्य कर्णो वचनमब्रवीत्।।
ब्रह्मास्त्रं वेत्तुमिच्छामि सरहस्यनिवर्तनम्।
अर्जुनेन समो युद्धे भवेयमिति मे मतिः।।

समः पुत्रेषु च स्नेहः शिष्येषु च तव ध्रुवम्।
त्वत्प्रसादान्न मा ब्रूयुरकृतास्त्रं विचक्षणाः।।
द्रोणस्तथोक्तः कर्णेन सापेक्षः फल्गुनं प्रति।
दौरात्म्यं चैव कर्णस्य विदित्वा तमुवाच ह।।
ब्रह्मास्त्रं ब्राह्मणो विद्याद्यथावच्चरितव्रतः।
क्षत्रियो वा तपस्वी यो नान्यो विद्यात्कथंचन।।
इत्युक्तोऽङ्गिरसां श्रेष्ठमामन्त्र्य प्रतिपूज्य च।
जगाम सहसा राजन्महेन्द्रं पर्वतं प्रति।।

Gita Press – (महाभारत शान्तिपर्व 2:9-14)

Bori – (महाभारत शान्तिपर्व 2:9-14)

अर्थात् - एक दिन अर्जुन को धनुर्वेद में अधिक सक्षम देखकर कर्ण ने एकांत में जाकर द्रोण से कहा- मैं ब्रह्मास्त्र को छोड़ने और लौटाने के रहस्य को जानना चाहता हूं,मेरी इच्छा है कि मैं अर्जुन के साथ युद्ध करूँ, आप तो हम सभी शिष्यों और पुत्रों को समान रूप से मानते हैं, अतः कोई ये ना कहे कि आपका शिष्य सभी अस्त्रों को नहीं जानता। तो द्रोणाचार्य ने उसके अंदर छुपे हुए क्रूर ईर्ष्या भाव को पहचान लिया और कहा कि इसे ब्रह्मचर्य का पालन करने वाला ही सीख सकता है, तो द्रोण ने ब्रह्मचर्य की शर्त रखी, जिससे क्षुब्ध होकर कर्ण स्वयं सहसा महेंद्र पर्वत पर परशुराम जी के पास चला गया।

अर्जुन से लढने के लिए कर्ण ने द्रोण को ब्रह्मास्त्र ही मांग लिया था। लेकिन द्रोण कर्ण के दुष्ट भावनाओं के बारे में जान कर यह बिद्या देने से इंकार कर दिया। उसके पश्चात कर्ण द्रोण के गुरुकुल से निकले और परशुराम के पास दिव्यास्त्र सिखने की इच्छा से पहुँच गए।

【एकलव्य के विषय पर मिथक का खंडन】

एकलव्य “हस्तिनापुर” के प्रबल शत्रु राज्य “मगध” के भावी सेना-नायक था इसलिए द्रोणाचार्य हस्तिनापुर के गुरु होने के नाते उसे धनुर्वेद की शिक्षा देने से मना किया था, यही कारण हरिवंश पुराण और महाभारत में भी लिखा है ।

“शिष्यं धनुषि धर्मज्ञस्तेषामेवान्ववेक्षया” ।

“धर्मज्ञ: तेषाम् एव अन्ववेक्षया।”

आचार्य ने उसे “धनुर्विद्या” का शिष्य बनाने से मना किया, “शिष्य” बनाने से नहीं। “धनुर्वेद” किसी भी स्थिति में किसी भी जाति के मनुष्य को “शस्त्र” का निषेध नहीं करता है।

क्षत्रियों और परशुराम पर भयंकर प्रक्षेप का खंडन

【क्षत्रियों के विषय में प्रक्षेप (मिलावट)】

त्रिः सप्तकृत्वः पृथिवीं कृत्वा निःक्षत्रियां पुरा।
जामदग्न्यस्तपस्तेपे महेन्द्रे पर्वतोत्तमे ॥ ४ ॥
तदा निःक्षत्रिये लोके भार्गवेण कृते सति ।
ब्राह्मणान्क्षत्रिया राजन्सुतार्थिन्योऽभिचक्रमुः॥ ५ ॥
ताभिः सह समापेतुर्ब्राह्मणाः संशितव्रताः ।
ऋतावृतौ नरव्याघ्र न कामान्ननृतौ तथा ॥ ६ ॥
तेभ्यश्च लेभिरे गर्भं क्षत्रियास्ताः सहस्त्रशः ।
ततः सुषुविरे राजन्क्षत्रियान्वीर्यवत्तरान्॥७॥
(महाभारत : आदिपर्व 64 अध्याय: श्लोक 4-7)

अर्थात् - पूर्वकाल में जमदग्निनन्दन परशुराम ने इक्कीस बार पृथ्वी को क्षत्रिय रहित करके उत्तम पर्वत महेन्द्र पर तपस्या की थी। उस समय जब भृगुनन्दन ने इस लोक को क्षत्रिय शून्य कर दिया था, क्षत्रिय-नारियों पुत्र की अभिलाषा से ब्राह्मणों की शरण ग्रहण की थी। नररत्न ! वे कठोर व्रतधारी ब्राह्मण केवल ऋतुकाल में ही उनके साथ मिलते थे ! राजन ! उन सहस्रों क्षत्राणियों ने ब्राह्मणों के द्वार गर्भ धारण किया और पुनः क्षत्रिय कुल वृद्धि के लिये अत्यन्त बलशाली क्षत्रियकुमारों और कुमारियों को जन्म दिया।

◙ ध्यान दे - यहां पर लिखे गए विवरण के अनुसार ब्राह्मण पुरुष और क्षत्रिय स्त्री से उत्पन्न बालक छत्रिय ही उत्पन्न हुआ जिससे छत्रिय वंश दोबारा चला किंतु अनुशासन पर्व में एक अन्य जगह यह कहा गया है कि ब्राह्मण पुरुष और क्षत्रिय स्त्री से उत्पन्न पुत्र ब्राह्मण होता है , यह दोनों एक दूसरे के परस्पर विरोधी बातें हैं इसलिए यह अप्रमाणित बातें हैं , बाद में मिलाई गई ।

भार्याश्चतश्रो विप्रस्य द्वयोरात्मा प्रजायते ।

आनुपूर्व्याद् द्वेयोर्हीनौ मातृजात्यौ प्रसूयतः ।।४।।

(महाभारत अनुशासन पर्व 48 :4)

अर्थात् - ब्राह्मण की चार पत्नीयाँ हो सकती हैं उनमें से दो पत्नीयाँ ब्राह्मणी और क्षत्राणी के गर्भ से सन्तान केवल ब्राह्मण ही उत्पन्न होगी ! और शेष दो वैश्याणी और शूद्राणी पत्नीयों के गर्भ से जो सन्तान होंगी वे; ब्राह्मणत्व से रहित माता की जाति की ही समझी जाएगी।

◙ निष्कर्ष - महाभारत के उपर्युक्त अनुशासन पर्व के अनुसार ब्राह्मण पुरुष और क्षत्राणी की संतान ब्राह्मण ही होती है और आदिपर्व के अनुसार जब क्षत्रियों का नाश हो गया तो क्षत्राणीयों और बाह्मणों के संयोग से उत्पन्न पुत्र - पुत्री क्षत्रिय किस विधान से उत्पन्न हुई । दोनों तथ्य परस्पर विरोधी होने से क्षत्रिय उत्पत्ति का प्रसंग काल्पनिक व मनगड़न्त ही है ।

वास्तव में वैदिक व्यवस्था को धीरे-धीरे करके जन्म आधारित बना दिया गया तभी ऐसी चीजें मिलाई गई जोकि श्रुति विरुद्ध है इसलिए यह मान्य नहीं ।

【राजपूत उत्पत्ति को लेकर शास्त्रों में हुई मिलावट 】

जाति भास्कर ग्रन्थ के पृष्ठ १६७ में राजपूत जाति की उत्पत्ति निम्नलिखित प्रकार से लिखी है। मूलश्लोक तथा उसका हिन्दी अर्थ वहीं से उद्धत करता हूँ। यह श्लोक ब्रह्मवैवर्त्त पुराण का है -

"क्षत्रात्करणकन्यायां राजपुत्रो बभूव ह ।।

राजपुत्र्यां तु करणादागरीति प्रकीर्तितः ।।

~(ब्रह्मवैवर्तपुराण: ब्रह्मखण्डः अध्यायः 10 श्लोक 110)

अर्थात् - क्षत्रिय पुरुष से करण कन्या में जो पुत्र पैदा होवे उसे राजपूत कहते हैं।

"शय्या विभूषा सुरतं भोगाष्टकमुदाहृतम्।
शूद्रायां क्षत्रियादुग्रः क्रूरकर्मा प्रजायते ।। ४७ ।।
"शस्त्रविद्यासु कुशलः संग्रामकुशलो भवेत्।
तया वृत्या स जीवेद्यो शूद्रधर्मा प्रजायते ।।४८।।
राजपूत इति ख्यातो युद्धकर्मविशारदः।
वैश्य धर्मेण शूद्रायां ज्ञात वैतालिकाभिधः ।४९
(स्कन्दपुराण- सह्याद्रि खण्ड :अध्याय 26 :श्लोक 47,48,49)

अर्थात् - क्षत्रिय से शूद्र जाति की स्त्री में राजपूत उत्पन्न होता है यह भयानक, निर्दय, शस्त्रविद्या और रण में चतुर तथा शूद्र धर्म वाला होता है; और शस्त्र वृत्ति से ही अपनी जीविका चलाता है ।

शब्दकल्पद्रुम व वाचस्पत्य में भी एक अन्य स्थान पर भी राजपुत्र शब्द जातिसूचक शब्द के रूप में आया है; जो कि इस प्रकार है -

वर्णसङ्करभेदे राजपुत्र "वैश्यादम्बष्ठकन्यायां राजपुत्रस्य सम्भवः" इति पराशरःसंहिता ।

अर्थात् - वैश्य पुरुष के द्वारा अम्बष्ठ कन्या में राजपूत उतपन्न होता है।

◙ निष्कर्ष - राजपूत शब्द मूल संस्कृत राजपूत्र शब्द से आया है, जिसका अर्थ राजा का पुत्र होना होना है और वैदिक वर्ण व्यवस्था में राजा क्षत्रिय होता था और इसलिए उसके पुत्र की रूचि छत्रिय निर्धारित कर्म करने में ज्यादा होती थी जिससे वैदिक संस्कारों के द्वारा ज्यादातर छत्रिय ही होते थे । लेकिन जैसा कि हम जानते हैं जब जन्म आधारित वर्ण व्यवस्था प्रचलन में आयी तब कई शब्दों के अर्थ भी धीरे-धीरे बदल गए , पुराणों में राजपूत को क्षत्रिय पुरुष तथा शूद्र कन्या की संतान बताया गया और वही शब्दकल्पद्रुम व वाचस्पत्य और पराशर संहिता में राजपूत को वैश्य पुरुष और अम्बष्ठ कन्या की संतान बताया गया । यह दोनों बातें परस्पर एक दूसरे के विरोधी हैं और दोनों की दोनों अप्रमाणित और प्रक्षेप हैं जो बाद में मिलाए गए हैं ।

【भगवन परशुराम पर घृणित प्रछेप (मिलावट)】

महाभारत शान्ति पर्व में परशुराम क्षत्रिय स्त्रियों के गर्भस्थ शिशुओं की हत्या करते हैं -

"मिथ्याप्रतिज्ञो राम त्वं कत्थसे जनसंसदि।
भयात्क्षत्रियवीराणां पर्वतं समुपाश्रितः।12-48-59
"सा पुनः क्षत्रियशतैः पृथिवी सर्वतः स्तृता।
परावसोर्वचः श्रुत्वा शस्त्रं जग्राह भार्गवः।12-48-60
"ततो ये क्षत्रिया राजञ्शतशस्तेन वर्जिताः।
ते विवृद्धा महावीर्याः पृथिवीपतयोऽभवन्।12-48-61
"स पुनस्ताञ्जघानाशु बालानपि नराधिप।
गर्भस्थैस्तु मही व्याप्ता पुनरेवाभवत्तदा।12-48-62
"जातंजातं स गर्भं तु पुनरेव जघान ह।
अरक्षंश्च सुतान्कांश्चित्तदा क्षत्रिययोषितः।12-48-63
"त्रिःसप्तकृत्वः पृथिवीं कृत्वा निःक्षत्रियां प्रभुः।
दक्षिणामश्वमेधान्ते कश्यपायाददत्ततः।12-48-64
(महाभारत शान्तिपर्व अध्याय 48:59-64)

अर्थात् - मैं तो समझता हूँ कि तुमने क्षत्रिय वीरों के भय से ही पर्वत की शरण ली है। इस समय पृथ्वी पर सब और पुनः सैकडों क्षत्रिय भर गये है। राजन् ! परावसु की बात सुनकर भृगुवंशी परशुराम ने पुनः शस्त्र उठा लिया। पहले उन्होंने जिन सैकडों क्षत्रियों को छोड़ दिया था, वे ही बढ़कर महापराक्रमी भूपाल बन बैठे थे। नरेश्वर ! उन्होंने पुनः उन सबके छोटे छोटे बच्चों तक को शीघ्र ही मार डाला। जो बच्चे गर्भ में रह गये थे, उन्हीं से पुनः यह सारी पृथ्वी व्याप्त हो गयी। परशुराम एक एक गर्भ के उत्पन्न होने पर पुनः उसका वध कर डालते थे। उस समय क्षत्राणियाँ कुछ ही पुत्रों को बचा सकीं थी। राजन् ! तदनन्तर कुछ क्षत्रियों को बचाये रखने की इच्छा से कश्यपजी ने स्रुक् (स्रुवा) लकड़ी की बनी हुई एक प्रकार की छोटी करछी जिससे हवनादि में घी की आहुति देते हैं। उसको लिये हुए हाथ से

संकेत करते हुए यह बात कही- मुने ! अब तुम दक्षिण समुद्र के तट पर चले जाओ। अब कभी मेरे राज्य में निवास न करना।

ब्रह्मवैवर्त पुराण में भी वर्णन है कि भगवान परशुराम ने पृथ्वी से क्षत्रिय को नष्ट कर दिया और उन क्षत्रियों की पत्नीयों के गर्भस्थ शिशुओं की हत्या कर दी-

"एवं त्रिस्सप्तकृत्वश्च क्रमेण च वसुन्धराम् ।।

रामश्चकार निर्भूपां लीलया च शिवं स्मरन् ।। ७३ ।।

"गर्भस्थं मातुरङ्कस्थं शिशुं वृद्धं च मध्यमम् ।।

जघान क्षत्रियं रामः प्रतिज्ञापालनाय वै ।। ७४

(ब्रह्मवैवर्त पुराण : गणपति खण्ड : अध्याय 40)

◙ निष्कर्ष - वास्तव में परशुराम भगवान नारायण के अवतार है इसलिए वह नवजात शिशुओं की हत्या नहीं कर सकते हैं , यह सभी प्रक्षेप स्मार्त आचार्यों द्वारा क्षत्रियों को नीचा दिखाने के लिए मिलाए गए हैं । स्मार्त संप्रदाय ने ही जन्म आधारित वर्ण व्यवस्था को सुचारू ढंग से समाज में लागू किया था । इससे पहले वैदिक व्यवस्था थी जो गुण , कर्म और स्वभाव आधारित थी , यही कारण है कि शास्त्रों में ऐसे एक दूसरे के परस्पर विरोधी बातें मिलती रहती हैं जो कि बाद में स्मार्तो द्वारा प्रक्षेप की गई हैं ।

[वर्णसंकरता पर बने नियम पाखंड]

समय के साथ जन्म आधारित व्यवस्था को और कट्टरता से लागू किया गया और वर्णसंकर विवाह पर नए नए नियम बनाए गए लेकिन अलग-अलग ग्रंथों में यह सभी नियम एक दूसरे के विरोधी हैं इसीलिए यह सभी बाद में किए गए मिलावट है । जो नियम बनाए गए उनके अनुसार अगर एक वर्ण का मनुष्य दूसरे वर्ण के मनुष्य से विवाह करता है तो उत्पन्न संतान की जाति अलग होती है , यह बिल्कुल जन्म आधारित व्यवस्था है जो कि श्रुतियों के विरुद्ध है ।

नृपायां विप्रतश्चीर्यात्संजातो योभिषक्स्मृत: ।
अभिषिक्तनृपस्याज्ञा परिणाल्पेत्तु ।।
(औशनसी स्मृतिः26)

अर्थात्- क्षत्रिय की कन्या में से जो ब्राह्मण से उत्पन्न होता है, वह भिषक् कहाता है, वह राजा की आज्ञा से वैद्यक करता है ॥२६॥

विप्रस्य त्रिषु वर्णेषु नृपतेर्वर्णयोर्द्वयोः ।
वैश्यस्य वर्णे चैकस्मिन्षडेतेऽपसदाः स्मृताः ।।
(मनुस्मृति 10:10)

अर्थात्- ब्राह्मण ने क्षत्राणी आदि तीन वर्ण की स्त्री में, और क्षत्रिय से वैश्य आदि दो वर्ण की स्त्री में जो संतान उत्पन्न होती है वह षड् (छह) अपसद अर्थात् निकृष्ट कहलाती है।

यहां मनुस्मृति के इस प्रछिप्त श्लोक के अनुसार ब्राह्मण से अलग वर्ण की संतान जो उत्पन्न होती है वह निकृष्ट होती है और एक अन्य स्थान पर क्षत्रिय कन्या ब्राह्मण पुरुष से उत्पन्न संतान भिषक् कहा जाता है । महाभारत में जैसा भी हमने पर पढ़ा था की उत्पन्न संतान ब्राह्मण होती है और एक स्थान पर यह पढ़ा था कि उत्पन्न संतान क्षत्रिय होती है। यह सारी बातें एक दूसरे के परस्पर विरोधी हैं तथा अमान्य है । बहुत से महापुरुषों ने अंतरवर्णीय विवाह किए हैं ।

मनुस्मृति मे मिलावट

आज समाज के हर कोने में मिलावट की भरमार है। भारतीय सभ्यता व् संस्कृति को दूषित करने के लिए सनातन ग्रंथो में तो समय के साथ साथ हर युग में आक्रांताओं के द्वारा भर भर के मिलावट की गई है।

‘प्रक्षेप’ अथवा 'प्रक्षिप्त' एक ऐसा शब्द है जिसका अर्थ सामान्य भाषा में कहा जाये तो मिलावट से है। इसको विस्तृत रूप में इस प्रकार समझा जा सकता है। किसी के ग्रन्थ में किसी दूसरे व्यक्ति द्वारा उसकी सहमति या स्वीकृति के बिना उसमे छेड़छाड़ या उसके मूल स्वरुप को बदल दिया जाये तो ऐसे विचारों को 'प्रक्षेप 'कहा जाता है ।

जैसा की हम सभी जानते है मनुस्मृति की रचना महर्षि मनु महाराज ने की थी। हर समाज के सम्यक संचालन के लिए कुछ नियम आवश्यक होते है ,बिना नियम और विधान के समाज का उचित संचालन असंभव है। समाज के संचालन के लिए जो व्यवस्थाएं ,नियम, कर्तव्य ,दायित्व मनु महाराज ने बताया है ,उन सबका संग्रह मनुस्मृति में है। अर्थात् मनुस्मृति मानव समाज का प्रथम संविधान है,न्याय व्यवस्था का शास्त्र है। वेदों में निहित कानून व्यवस्था अथवा न्याय व्यवस्था को कर्तव्य व्यवस्था भी कहा गया है। उसी के आधार पर मनु ने सरल भाषा में मनुस्मृति की रचना की ।

प्राचीन काल में मनुस्मृति को ‘मानव शास्त्र’ के नाम से भी जाना जाता था। वर्तमान में उपलब्ध मनुस्मृति महर्षि मनु द्वारा रचित मानव शास्त्र से सर्वथा भिन्न है। वर्तमान की मनुस्मृति में प्रक्षेपकों की भरमार है ,इतना ही नहीं इसके कई श्लोक को इतना परिवर्तित किया है जिससे उसका मूल अर्थ ही बदल गया है।

◙ मनुस्मृति में (प्रक्षेप) मिलावट के कई प्रमाण है जिनके बारे में आज की मनुस्मृति का मूल से तुलनात्मक अध्ययन करके पता चलता है-

1) चीन में प्राप्त पुरातात्विक प्रमाण - वर्ष 1932 में जापान ने बम विस्फोट द्वारा जब चीन की ऐतिहासिक दीवार को तोड़ा तो उसमें लोहे का एक ट्रक मिला जिसमें चीनी पुस्तकों की प्राचीन पाण्डुलिपियाँ भरी थीं । किसी तरह वे हस्तलेख प्रसिद्ध लेखक इतिहासकार सर ऑगुत्स फ्रित्स जॉर्ज को मिल गये । वह उन्हें लंदन ले गया और उनको ब्रिटिश म्यूजियम में रख दिया ।

उन हस्तलेखों को प्रो . एन्थनी ग्रेमे (Prof . Anthony Graeme) ने चीनी भाषा के विद्वानों से पढ़वाया । चीनी भाषा में लिखे गये उन हस्तलेखों में एक में यह लिखा है - 'मनु का धर्मशास्त्र भारत में सर्वाधिक मान्य है जो वैदिक संस्कृत में लिखा है और दस हजार वर्ष से अधिक पुराना है ।' इन चीनी ग्रंथ के अनुसार मनुस्मृति में 680 श्लोक थे परन्तु वर्तमान मनुस्मृति में 2685 श्लोक हैं जिससे यह सिद्ध होता है कि वर्तमान मनुस्मृति में पाए जाने वाले बहुत से श्लोक मिलावटी हैं।

2) मनुस्मृति के प्रथम पाश्चात्य समीक्षक न्यायाधीश सर विलियम जोन्स उपलब्ध 2685 श्लोकों में से 2005 श्लोकों को प्रक्षिप्त घोषित करते हैं । उनके मतानुसार 680 श्लोक ही मूल मनुस्मृति में थे ।

3) महात्मा गांधी ने अपनी 'वर्णव्यवस्था' नामक पुस्तक में स्वीकार किया है कि वर्तमान मनुस्मृति में पाई जाने वाली आपत्तिजनक बातें बाद में की गयी मिलावटें हैं ।

4) भारत के पूर्व राष्ट्रपति और दार्शनिक विद्वान् डॉ० राधाकृष्णन , श्री रवींद्रनाथ टैगोर आदि भी मनुस्मृति में प्रक्षेपों के अस्तित्व को स्वीकार करते है।

5) मनुस्मृति भाष्यकार मेधातिथि (9 वीं शताब्दी) की तुलना में कुल्लूक भट्ट (12 वीं शताब्दी) के संस्करण में 680 श्लोक अधिक उपलब्ध हैं। वे तब तक मूल पाठ के साथ घुल मिल नहीं पाये थे, अतः उनको बृहत् कोष्ठक में दर्शाया गया है। इसी तरह कई अन्य टीकाओं में भी कुछ कुछ श्लोकों का अंतर है। मेधातिथि के भाष्य के अन्त में एक श्लोक मिलता है , जिससे यह जानकारी मिलती है कि मनुस्मृति और उसका मेधातिथि भाष्य लुप्तप्राय: था । उसको विभिन्न संस्करणों की सहायता से सहारण राजा के पुत्र राजा मदन ने पुन: संकलित कराया । ऐसी स्थिति में नए श्लोक जोड़ दिए जाना और मिलावट होना सामान्य बात थी

मान्या कापि मनुस्मृतिस्तदुचिता व्याख्यापि मेधातिथे: ।

सा लुप्तैव विधेर्वशात् क्वचिदपि प्राप्यं न तत्पुस्तकम् ।

क्षोणीन्द्रो मदनः सहारणासुतो देशान्तरादाहृतै : ,

जीर्णोद्धारमचाकरत्तत इतस्तत्पुस्तकै: लोखितै: ।

(उपोद्घघात , मेधातिथि भाष्य , गंगानाथ झा , खण्ड . 3 , पृ० 1)

अर्थात् — 'समाज में मान्य कोई मनुस्मृति थी , उस पर मेधातिथि का भाष्य भी था किन्तु वह दुर्भाग्य से लुप्त हो गयी । वह कहीं उपलब्ध नहीं थी । सहारण के पुत्र राजा मदन ने विभिन्न प्रदेशों से उसके संस्करण मंगाकर उसका जीर्णाद्धार कराया और विभिन्न पुस्तकों से मिलाकर यह भाष्य तैयार कराया ।'

मनुस्मृति के नाम से प्रचलित इसकी मौजूदा प्रतियां भारुचि, मेधातिथि, गोविंदराज एवं कूल्लूक भट्ट इत्यादि द्वारा अलग-अलग समय पर (7वीं से 13वीं सदी के बीच) किए गए संकलनों और भाष्यों पर आधारित हैं। इन साक्ष्यों के आधार पर ये स्पष्ट है कि महर्षि मनु के 680 श्लोक में कोई कमी नहीं है और जितने भी विरोधाभाषी श्लोक है वो अलग-अलग समय पर मिलाये गए है ।

शूद्रों को यज्ञ एवं अन्य धार्मिक अनुष्ठान का अधिकार

वैदिक ग्रन्थ शुद्रो को यज्ञ , पूजा -पाठ एवं अन्य धार्मिक अनुष्ठान करने का पूरा अधिकार देते है आज जो भी जातिवाद है ये मुग़ल काल की देन है जब हिन्दू ग्रंथो में मिलावट हुई जातिवाद बढ़ाया गया इसलिए हमें वैदिक ग्रंथों को पढ़ने की ज़रूरत है जो महर्षि मनु की व्यवस्था के अनुसार सबको पूर्ण अधिकार देते है-

1-महाभारत कहता है कि निम्न वर्ण को ग्रहण करने वालों के लिए यज्ञ, धर्मपालन, वेदाध्ययन का निषेध नहीं है और वेद पढ़ने का अधिकार चारो वर्ण का है –

धर्मो यज्ञक्रिया तेषां नित्यं न प्रतिषिध्यते।
इत्येते चतुरो वर्णाः येषां ब्राह्मी सरस्वती॥
(महाभारत -शान्तिपर्व 188 : 15)

अर्थात्- वर्णान्तर प्राप्त जनों के लिए यज्ञक्रिया और धर्मानुष्ठान का निषेध कदापि नहीं है। वेदवाणी चारों वर्ण वालों के लिए है।

2- महाभारत में तो इससे भी आगे बढ़कर दस्युओं के लिए भी इन कर्मों का विधान किया है-

भूमिपानां च शुश्रूषा कर्तव्या सर्वदस्युभिः।
वेदधर्मक्रियाश्चैव तेषां धर्मो विधीयते।।
(महाभारत -शान्तिपर्व 65 :18)

अर्थात्- दस्युओं को राजाओं की सेवा पक्ष में युद्ध करके करनी चाहिए। वेदाध्ययन, यज्ञ आदि धर्मानुष्ठानों का पालन करना उनका भी विहित धर्म है।

नोट - दस्यु वो होता है जो वेदों का नहीं मानता था.

3- महाभारत में ही एक अन्य स्थान पर यज्ञ में चारों वर्णों की भागीदारी को स्वीकार किया गया है-

''चत्वारो वर्णाः यज्ञमिमं वहन्ति''

(महाभारत-वनपर्व 134:11)

अर्थात् - इस यज्ञ का सपादन चारों वर्ण कर रहे हैं।

4- भविष्यपुराण शूद्रों को मन्त्र-अध्यापन का आदेश देता है-

“ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः शूद्राः, तेषां मन्त्राः प्रदेयाः।”

(भविष्यपुराण- उ0 पर्व 13 : 62)

5 - शतपथ ब्राह्मण में यज्ञ में सोमपान के प्रसंग में शूद्र के लिए भी विधान है-

“चत्वारो वै वर्णाः ब्राह्मणो राजन्यो वैश्यः शूद्रः,

न ह एतेषां एकश्चन भवति यः सोमं वमति।

स यद् ह एतेषां एकश्चित् स्यात् ह एव प्रायश्चितिः।”

(शतपथ ब्राह्मण-5.5.4.9)

अर्थात्- वर्ण चार हैं-ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र। इनमें कोई भी यज्ञ में सोम का त्याग नहीं करेगा। यदि एक भी कोई करेगा तो उसको प्रायश्चित्त करना पड़ेगा।

6- विष्णु पुराण के अनुसार वैदिक काल में भारत के चारो वर्ण के लोग मिलकर यज्ञ करते थे-

ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः मध्ये शूद्राश्च भागशः॥ 9॥

पुरुषैर्यज्ञपुरुषो जबू द्वीपे सदेज्यते॥ 21॥

(विष्णुपुराण-2.3.9, 21)

अर्थात्- जबू द्वीप) भारतवर्ष (में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र साथ-साथ निवास करते हैं। उन चारों वर्णों के पुरुषों द्वारा परमात्मा का सदा यज्ञ के द्वारा यजन किया जाता है।

7- शूद्र द्वारा यज्ञ का करना-

शूद्रः पैजवनो नाम सहस्राणां शतं ददौ ।

ऐन्द्राग्नेन विधानेन दक्षिणामिति नः श्रुतम् ॥ ३८ ॥

(महाभारत-शान्तिपर्व 60:38)

अर्थात्- पैजवन नामक शूद्र ने ऐन्द्राग्नेय विधान से यज्ञ करके एक लाख दक्षिणा दी थी, ऐसा हमने सुना है।

वर्ण शब्द की परिभाषा

वर्णव्यस्था का सार समझाना है तो हमें वर्ण शब्द का भावार्थ जानना अति आवयश्क है तभी हम चतुर्वर्णव्यवस्था को समझ सकते है ।

◙ महर्षि यास्क ने अपने ग्रंथ निरुक्त के अध्याय 2 खंड 3 में वर्ण शब्द पर चर्चा की है जो इस प्रकार है–

निरुक्त 2:3

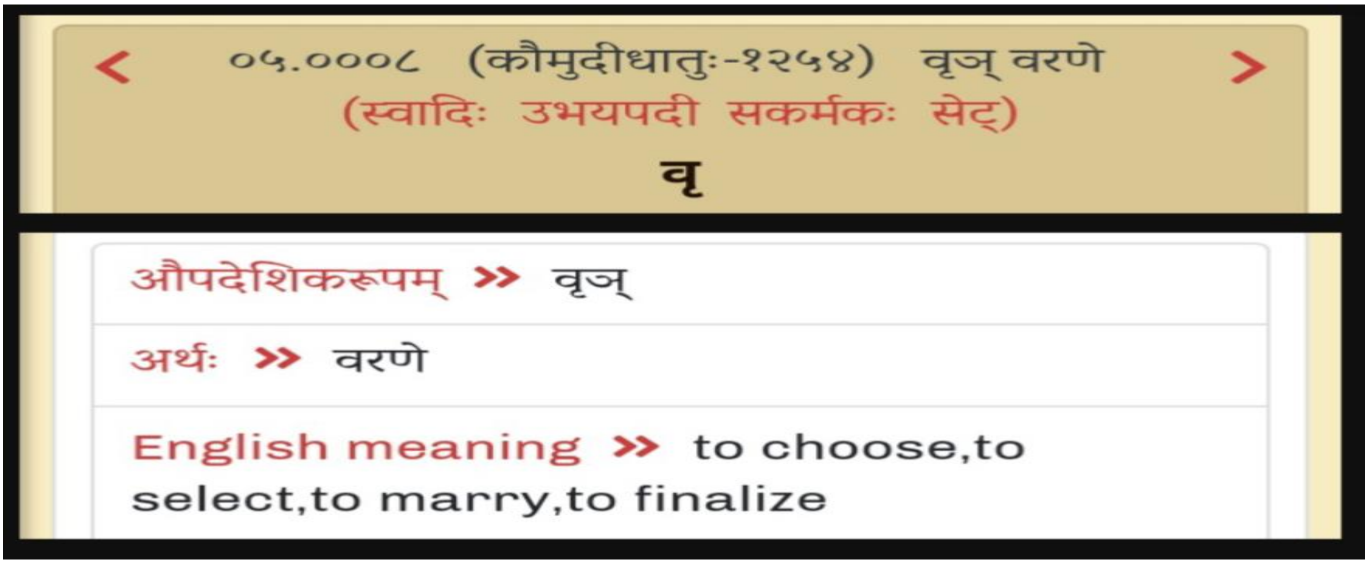
राज्ञः पुरुषो राजपुरुषः । राजा राजतेः । पुरुषः पुरिषादः पुरिशयः पूरयतेर्वा पूरयत्यन्तरित्यन्तरपुरुषमभिप्रेत्य ।

यस्मात् परं नापरमस्ति किंचिद्यस्मान्नाणीयो न ज्यायोऽस्ति कश्चित् ।वृक्ष इव स्तब्धो दिवि तिष्ठत्येकस्तेनेदं पूर्णं पुरुषेण सर्वम् ॥

'विश्वकद्राकर्षः' वीति चकद्र इति श्वगतौ भाष्यते । द्रातीति गतिकुत्सना । कद्रातीति द्रातिकुत्सना । चकद्राति कद्रातीति सतोऽनर्थकोऽभ्यासः । तदस्मिन्नस्तीति विश्वकद्रः ।

कल्याणवर्णरूपः कल्याणवर्णस्येवास्य रूपम् । कल्याणं कमनीयं भवति । वर्णो वृणोतेः ।

रूपं रोचतेः एवं तद्धितसमासान्निब्रूयात् । नैकपदानि निब्रूयात् । नावैयाकरणाय नानुपसन्नाय अनिदंविदे वा । नित्यं ह्यविज्ञातुर्विज्ञानेऽसूया । उपसन्नाय तु निब्रूयाद्यो वा अलं विज्ञातुं स्यान्मेधाविने तपस्विने वा ॥ २.३ ॥



०५.०००८ (कौमुदीधातुः-१२५४) वृञ् वरणे
(स्वादिः उभयपदी सकर्मकः सेट्)
वृ

औपदेशिकरूपम् >> वृञ्
अर्थः >> वरणे
English meaning >> to choose,to select,to marry,to finalize

'वर्णो वृणोते:' सूत्र के अनुसार 'वर्ण' वह है, जिसका कर्मानुसार वरण किया जाए। वर्ण शब्द" वृञ "धातु से बनता है । मूलतः वर्ण– ‘‘वृञ वरणे’ ’ (धातु, स्वादि (वृ धातु से ‘‘“कृवृञा” ’ ’ (उणादि कोष (3:10इस सूत्र से न प्रत्यय करने पर वर्ण शब्द बनता है।वर्ण का अर्थात् होता है, जिसके माध्यम से किसी का वरण क जाये, चयन किया जाये, छांटा जाये उसको वर्ण कहा जाता है ।उणादि कोष में वर्ण शब्द की व्युत्पत्ति करते हुए लिखा है कि ‘‘वृणोति व्रियते वा स वर्णः’ ’ अर्थात् जिसका वरण किया जाता हो वह वर्ण है। यहाँ व्युत्पत्ति से स्पष्ट है कि वर्ण व्यवस्था में अपने गुण कर्मानुसार वरण अर्थात् चयन किया जाता है।

◙ 'वर्णो वृणोते:' सूत्र की व्याख्या करते हुए ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका में स्वामी दयानन्द सरस्वती लिखते हैं-

वर्णो वृणोतेरिति निरुक्तप्रमाण्याद्वरणीया वरीतुमर्हा, गुणकर्माणि च दृष्ट्वा यथायोग्यं वियन्ते ये ते वर्णाः ॥

(ऋग्वेदादिभाष्यभूमिका– वर्णाश्रमधर्मविषय)

अर्थात् - जिसके जैसे गुणकर्म हों, उसे वैसा ही कार्य देना ‘वर्ण ‘ है। अत :जब कोई मनुष्य अपने गुण, कर्म, रुचि व योग्यतानुसार शिक्षा प्राप्त करता है तथा तदनुसार जीविका चुनता है या वरण करता है, वह उसका 'वर्ण' कहलाता है और इस वर्ण का उसके माता-पिता के वर्ण के साथ सम्बन्ध

होना अनिवार्य नहीं है। मनुष्य अपनी रुचि के अनुसार कोई भी वर्ण चुन सकता है तथा योग्यतानुसार बदल भी सकता है।

◙ पंडित कपिलदेव द्विवेदी जी अपने ग्रन्थ "प्रौढ़ - रचनानुवाद कौमुदी " में इस सूत्र" वर्णों वृणोतेः " का वर्णन करते हुवे लिखते है-

आर्यसंस्कृतौ वर्ण व्यवस्था स्वीक्रियते न तु जातिप्रथा जन्मना जातिरिति, कर्मणा वर्ण इति । वर्णों वृणोतेः । जनो यत्कर्म वृणोति स तस्य वर्णः ।

(प्रौढ़ रचनानुवाद कौमुदी -पृष्ठ 310)

अर्थात् - आर्य संस्कृति वर्ण व्यवस्था को स्वीकार करती है ना की जाति-प्रथा और न जन्मना जाति-रिति को , कर्मानुसार वर्ण हैं । वर्ण वह है, जिसका वरण) चयन (किया जाए। लोगों के जैसे कर्म होते हैं वैसा ही वर्ण उनके कर्मानुसार चयन किया जाता है ।

जन्म से वर्ण जैसे प्रमाणों का खंडन

भगवतानंद के पुस्तक के अध्याय 40 में दिए गए प्रमाण जिसके द्वारा वो वर्णव्यस्था को जन्म आधारित सिद्ध करना चाहते हैं , हम उन सभी प्रमाणों की समीक्षा करेंगे ।

【भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत श्रीमद्भागवत महापुराण के प्रमाण 】

ब्राह्मणो जन्मना श्रेयान् सर्वेषां प्राणिनामिह ।
(श्रीमद्भागवत महापुराण(
जन्म से ही ब्राह्मण सभी प्राणियों में श्रेष्ठ है।

बालयोरनयोर्नृणां जन्मना ब्राह्मणो गुरुः।
(श्रीमद्भागवत महापुराण(
ब्राह्मण जन्म से ही सभी मनुष्यों का गुरु है।

इज्याध्ययनदानानि विहितानि द्विजन्मनाम्।
जन्मकर्मावदातानां क्रियाश्चाश्रमचोदिताः॥
(श्रीमद्भागवत महापुराण(
जन्म और कर्म से शुद्ध द्विजोंके लिये यज्ञ, अध्ययन, दान और ब्रह्मचर्य आदि आश्रमों के विशेष कर्मों का विधान है ।

◙ खंडन◙

भागवत महापुराण में वर्णपरिवर्तन , वर्णपतन तथा कर्म आधारित व्यवस्था का वर्णन है किंतु पुराणों में श्रुति विरुद्ध प्रक्षिप्त श्लोकों को कालांतर में मिलाया गया है द्वारा जिससे उसके मूल सिद्धांत

को हानि पहुंच सके और सामाजिक व्यवस्था बिगड़ सके किंतु अगर हम इसका गहन अध्ययन करते हैं तो हमें इसका मूल वर्ण व्यवस्था का स्वरूप समझ आता है-

कलयुग में लगभग सभी लोगों को शूद्र बोला गया है जो जन्माना वर्ण व्यवस्था में संभव नहीं केवल कर्म आधारित व्यवस्था में ही संभव है-

तस्मिन् लुब्धा दुराचारा निर्दया :शुष्कवैरिण :।
दुर्भगा भूरितर्षाश्च शूद्रदासोत्तरा :प्रजा :॥ २५ ॥
(श्रीमद्भागवत महापुराण 12:3:25)

अर्थात् - कलियुग में लोग लालची, बुरे व्यवहार वाले और निर्दयी होते हैं, और वे बिना किसी कारण के एक दूसरे से लड़ते हैं। दुर्भाग्य से और भौतिक इच्छाओं से ग्रस्त, कलियुग के लोग लगभग सभी शूद्र और बर्बर हैं।

राजाओं को भी वैदिक संस्कारहीन होने के कारण शूद्र तुल्य बोल दिया गया है जो जन्माना व्यवस्था में संभव नहीं केवल कर्म आधारित वर्ण व्यवस्था में ही संभव है-

सौराष्ट्रावन्त्याभीराश्च शूरा अर्बुदमालवा :।
व्रात्या द्विजा भविष्यन्ति शूद्रप्राज्ञा जनाधिपाः ॥ ३८ ॥
(श्रीमद्भागवत महापुराण 12:1:38)

अर्थात् - ज्यों-ज्यों घोर कलियुग आता जाएगा, त्यों-त्यों सौराष्ट्र, अवंती, आभीर, शूर, अर्बुद और मालव देश के ब्राह्मणगण संस्कारशून्य हो जाएँगे तथा राजा लोग भी शूद्रतुल्य हो जाएँगे।

नारद जी ने वर्णपरिवर्तन का समर्थन किया है जो जन्माना व्यवस्था में संभव नहीं केवल कर्म आधारित वर्ण व्यवस्था में ही संभव है-

यस्य यल्लक्षणं प्रोक्तं पुंसो वर्णाभिव्यञ्जकम् ।
यदन्यत्रापि दृश्येत तत्तेनैव विनिर्दिशेत् ॥ ३५ ॥
(श्रीमद्भागवत महापुराण 7:11:35)

अर्थात् – नारद जी ने कहा यदि कोई ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य या शूद्र होने के लक्षण दिखाता है, जैसा कि वर्णित है, भले ही वह एक अलग वर्ग में प्रकट हुआ हो, उसे वर्गीकरण के उन लक्षणों के अनुसार स्वीकार किया जाएगा ।

यहां तक कि मनु के पुत्र का स्वयं वर्ण बदला था और एक पुत्र का दुष्कर्म करने के कारण वर्ण पतन हुआ था तो क्या यह जन्म आधारित वर्ण व्यवस्था में संभव है बिल्कुल नहीं इससे साफ जाहिर है कि प्राचीन काल में कर्म आधारित वर्ण व्यवस्था थी-

धृष्टाद् धार्ष्टमभूत् क्षत्रं ब्रह्मभूयं गतं क्षितौ ।

(श्रीमद भागवतम - 9:2:17)

अर्थात् – मनु के पुत्र धृष्ट से धार्ष्ट नामक एक क्षत्रिय उत्पन्न हुवे, उन्होंने ब्राह्मण का स्थान प्राप्त किया।

पृषध्स्तु मनुपुत्रो गुरुगोवधाच्छूद्रत्वमगमत् ॥ १७॥

(विष्णु पुराण 4:1:17)

अर्थात् – मनु का पृषध्र नामक पुत्र गुरु की गौ का वध करने के कारण क्षत्रिय से शूद्र हो गया ।

भागवत महापुराण गौड़ीय वैष्णव संप्रदाय में वेद तुल्य पवित्र माना गया है इसीलिए इस संप्रदाय का इस विषय पर क्या सोचना है यह जानना आवश्यक होगा-

श्रीमद्भागवत महापुराण 12.3.25 और 7.15.70 पर गौड़ीय वैष्णव आचार्य भक्तिवेदांत स्वामी श्रीला प्रभुपाद टिप्पणी करते हुए वे तात्पर्य में लिखते हैं-

वैदिक संस्कार और शिक्षा की कमी के कारण कलियुग में सभी शूद्र हो जाएंगे क्योंकि कलियुग में वैदिक धर्म का पतन शुरू हो जाएगा। जिस प्रकार सृष्टि के निर्माण के समय सभी ब्राह्मण थे उसी प्रकार कलियुग में हर कोई शूद्र होगा जो कि जन्म आधारित वर्ण व्यवस्था में संभव नहीं है। क्योंकि कलि के इस युग में सांस्कृतिक शिक्षा नहीं है, हर कोई आध्यात्मिक रूप से अप्रशिक्षित है और इसलिए लगभग सभी को शूद्र माना जाना चाहिए।

【भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत महाभारत के प्रमाण】

जन्मनैव महाभागो ब्राह्मणो नाम जायते ।

नमस्य :सर्वभूतानामतिथि :प्रसृताग्रभुक्॥

(महाभारत(

ब्राह्मण जन्म से ही महान् है और सभी प्राणियों के द्वारा पूजनीय है।

विदुर जी कहते हैं

शूद्रयोनावहं जातो नातोऽन्यद् वक्तुमुत्सहे ।

कुमारस्य तु या बुद्धिर्वेद तां शाश्वतीमहम् ॥

(महाभारत(

अर्थात्, मेरा जन्म शूद्रयोनि में हुआ है अतः मैं) ब्रह्मविद्या में अधिकार नहीं होने से (इसके अतिरिक्त और कोई उपदेश देने का मैं साहस नहीं कर सकता, किन्तु कुमार सनत्सुजात की बुद्धि सनातन है, मैं उन्हें जानता हूँ ।

तं च प्राप्य चिरं कालं तत्रैव परिवर्तते।

ततश्चतुःशते काले श्रोत्रियो नाम जायते॥

(महाभारत(

इस प्रकार से जन्मना ब्राह्मण होकर कर्मणा भी जब वह ब्राह्मण बनता है, तो ऐसे स्तर के चार सौ जन्मों के बाद इसे ब्रह्मबोध होता है।

◙ खंडन◙

महाभारत मूल रूप से कर्म आधारित वर्ण व्यवस्था पर ही आधारित है अगर कालांतर कुछ प्रक्षिप्त श्लोक मिलाए गए हैं तो उन्हें प्रमाण ही माना जा सकता है ।

शूद्रे चैतद्भवेल्लक्ष्यं द्विजे तच्च न विद्यते ।

न वै शूद्रो भवेच्छूद्रो ब्राह्मणो न च ब्राह्मणः ॥

(महाभारत - वनपर्व 177:20)

अर्थात् - यदि शूद्र में ब्राह्मणीय लक्षण हैं तो वो ब्राह्मण है और अगर किसी ब्राह्मण में ब्राह्मणीय लक्षण का आभाव है तो वो ब्राह्मण शूद्र है ।

न योनिनोपि संस्कारो न श्रुतंन च संततिः
कारणानि द्विजत्वस्य वृत्तमेव तु कारणम् ॥
सर्वोष्य त्राह्मणो लोके वृत्तेन तु विधीयते।
वृत्ते स्थितस्तु शुद्रो पि ब्राह्मणत्वं नियच्छति॥
(महाभारत -अनुशासन पर्व 143 : 50-51)

अर्थात् - भगवान शिव ने कहा ब्राह्मणत्व की प्राप्ति न तो जन्म से न संस्कार न शास्त्रज्ञान और न सन्तति के कारण है ।ब्राह्मणत्व का प्रधान हेतु तो सदाचार ही है। लोक में यह सारा ब्राह्मण समुदाय सदाचार से ही अपने पदपर बना हुआ है | सदाचार में स्थित रहने वाला शूद्र भी ब्राह्मणत्व को प्राप्त हो सकता है ।

न जात्या पुजीतो राजन्गुणाः कल्याणकारणाः।
चण्डालमपि वृत्तस्थं तं देवा ब्राह्मणं विदुः।।
(महाभारत- आश्वमेधिकपर्व 116:8)

अर्थात् - कुल, जाति से कोई पूजनीया नहीं होता है व्यक्ति के अन्दर का गुण ही कल्याणकारक होता है और , यदि चाण्डाल भी वृत्तस्थ हो तो वह ब्राह्मण होता है।

तावच्छूद्रसमो ह्येष यावद् वेदे न जायते।
तस्मिन्नेवं मतिद्वैधे मनु :स्वायम्भुवोब्रवीत्॥
(महाभारत वनपर्व 180 : 35)

अर्थात् - जब तक बच्चे का संस्कार करके उसे वेद का स्वाध्याय न कराया जाय, तब तक वह शूद्र होता है। यह नियम स्वयंभू मनु द्वारा ही बनाया गया है।

सत्यम दमस्तपो दानमहिंसा धर्मनित्यता।
साधकानि सदा पुंसा जातिर्न कुलं नृप॥
(महाभारत वनपर्व 181 : 43)

अर्थात् - हे राजा !सत्य, आत्म-संयम, अनुशासन, दान, अहिंसा और धार्मिकता - ये ऐसी चीजें हैं जो मनुष्य को समाज में उच्च सम्मान दिलाती हैं, न कि जाति या कुल।

【भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत तंत्र ग्रंथों के प्रमाण】

प्रणवं वैदिकं चैव शूद्रे नोपदिशेच्छिवे।
(परमानन्द तंत्र(

शूद्राणां वेदमंत्रेषु नाधिकार :कदाचन।
स्थाने वैदिकमंत्रस्य मूलमंत्रं विनिर्दिशेत्॥
(योगिनी तंत्र(

◙ खंडन◙

यजुर्वेद में स्पष्ट है की वेद पढ़ने का अधिकार सभी मनुष्य को है इसलिए भगवतानंद के ये प्रमाण श्रुति विरुद्ध होने के कारण अप्रमाण सिद्ध होते हैं । इसके अतिरिक्त कई ऐसे तंत्र ग्रंथ है जिनमें वेद अनुरूप कई वचन है जो भगवतानंद के प्रमाणों का खंडन करते हैं , जैसे-

गते शूद्रस्प शूद्रत्वं विप्रस्यापि च विप्रता ।
दीक्षासंस्कारसम्पन्ने जातिभेदो न विद्यते॥
(कुलार्णव तंत्र - 14: 91)

अर्थात् – दीक्षा संस्कार के बाद कोई शूद्र , शूद्र नहीं रहता है, न ही कोई विप्र विप्र रहता है। दीक्षा के बाद जाति का कोई अंतर नहीं रहता है।

यदि ज्ञानं भवेद एव सा देवो न तु मनुषः
चाण्डालदिनीचजातौ स्थिरो व ब्राह्मणोत्तमः
(रुद्रयामल तंत्र 48:131)

अर्थात् –अगर किसी को ज्ञान की प्राप्ति होती है तो वो देव सामान्य है मनुष्य नहीं , निम्न जाती के चाण्डाल भी ज्ञान प्राप्ति के बाद ब्राह्मण से उत्तम हो जाता है।

ब्रह्मनन्दमयं ज्ञानं कथयामि वरानने ।
नः ब्राह्मणो ब्राह्मणस्तु क्षत्रिय :क्षत्रियस्तथा ॥
वैश्यो न वैश्यः शूद्रों न शूद्रत्स्तु परमेश्वरी ।
चाण्डालो नैव चाण्डालः पौल्कसो न च पौल्कसः ॥
सर्वे सम विजानीयात्परमार्मेविनिश्चयात् ।
(ज्ञानार्णव तंत्र 23:28-29)

अर्थात् - ब्रह्मज्ञान का अधिकारी कौन है ? किसी भी वर्ण के बीच कोई भेद नहीं है, यहां तक कि चांडाल या पौलकसो को भी ब्रह्म के साथ एकीकरण प्राप्त होता है तथा सभी एक सामान है।

【भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत श्रीमद्देवीभागवत महापुराण के प्रमाण 】
जन्मना लब्धजातिस्तु
(श्रीमद्देवीभागवत महापुराण(
जाति की प्राप्ति जन्म से ही है।

क्षत्रियो वाथ वैश्यो वा कल्पकोटिशतेन च ॥
तपसा ब्राह्मणत्वं च न प्राप्नोति श्रुतौ श्रुतम् ।
(श्रीमद्देवीभागवत महापुराण(
क्षत्रिय और वैश्य भी करोड़ों कल्पों तक तपस्या करके भी केवल तपस्या के दम पर ब्राह्मण नहीं बन सकते।

◙ खंडन◙

जाति की प्राप्ति जन्म से होती है इस विषय पर यह प्रमाण सत्य हैं किंतु वर्ण की प्राप्ति जन्म आधारित नहीं है जाति और वर्ण में अंतर होता है कदाचित यह इनको ज्ञात नहीं, इससे इन्होंने मूर्खता का प्रमाण दिया ।

जाति शब्द की व्युत्पत्ति संस्कृत की “जनि” धातु से हुई है।

वर्ण शब्द" वृत्र "धातु से बनता है जिसका मतलब है चयन या वरण करना है ।

यास्क ने निरुक्त में कहा है कि ‘‘वर्णो वृणोतेः’ ’

(निरुक्त 2 : 3)

अर्थात् - वर्ण उसे कहते हैं जो वरण अर्थात् चुना जाये ।

आकृतिर्जातिलिङ्गाख्या- (न्याय दर्शन 2:2:65)

अर्थात् - जिन व्यक्तियों कि आकृति (इन्द्रियादि) एक समान है , उन सबकी एक जाति है।

जातिरिति च न चर्मणो न रक्तस्य न मांसस्य न चास्थिनः।

न जातिरात्मनो जातिर्व्यवहारप्रकल्पिता॥ - नीरालम्बोपनिषद-10

अर्थात् - जाति) शरीर के (चर्म, रक्त, मांस, अस्थियों और आत्मा की नहीं होती। उसकी) मानव, पशु-पक्षी आदि जाति की (प्रकल्पना तो केवल व्यवहार के निमित्त की गई है ।

जाति) अंग्रेज़ी :species, स्पीशीज़ (जीवों के जीव-वैज्ञानिक वर्गीकरण में सबसे बुनियादी और निचली श्रेणी होती है। वैज्ञानिक दृष्टिकोण से ऐसे जीवों के समूह को एक जाति बुलाया जाता है । उदाहरण के लिए एक भेड़िया और शेर आपस में बच्चा पैदा नहीं कर सकते इसलिए वे अलग जातियों के माने जाते हैं।

दूसरे प्रमाण में भगवतानंद ने कहा है कि कोई अन्य वर्ण का कितना भी तपस्या कर ले कभी ब्राह्मण नहीं बन सकता है लेकिन इसका खंडन तो हमारे शास्त्र ही कर देते हैं जैसे-

तस्मिन्नेव तदा तीर्थे सिन्धुद्वीपः प्रतापवान् ।

देवापिंश्व महाराज ब्राह्मण्यं प्रापतुमेहत् ॥ १०॥

तथा च कौशिकस्तात तपोनित्यो जितेन्द्रियः ।.

तंपसा वै सुतप्तेन ब्राह्मणत्वमवाप्तवान ॥ ११॥

(महाभारत- शल्य पर्व 40 : 10-11)

अर्थात् - महाराज ! उन्हीं दिनों उसी तीर्थ में प्रतापी सिन्धुद्दीप तथा देवापि ने वहाँ तप करके महान् ब्राह्मणत्व प्राप्त किया था। कुशिकवंशी विश्वामित्र भी वहीं निरन्तर इन्द्रिय संयमपूर्वक तपस्या करते थे । उस भारी तप के प्रभाव से उन्होंने ब्राह्मणत्व प्राप्त किया और वे ब्राह्मण हो गए ॥

【भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत भविष्य पुराण के प्रमाण】

जन्मना चोत्तमोऽयं च सर्वार्चा ब्राह्मणोऽर्हति॥

(भविष्य पुराण)

ब्राह्मण जन्म से ही उत्तम है, और सबों के द्वारा सम्माननीय है।

◙ खंडन◙

भविष्य पुराण में ऐसे बहुत से प्रमाण है जो जन्म आधारित वर्ण व्यवस्था का खंडन स्वयं करते हैं-

शूद्रोऽपि शीलसम्पन्नो ब्राह्मणादधिको भवेत् ।
ब्राह्मणो विगताचारः शूद्राद्धीनतरो भवेत् ।३१।
(भविष्य पुराण 1:44:31)

अर्थात् - अच्छे शीलवाला शूद्र ब्राह्मण से उत्तम बताया गया है और आचार भ्रष्ट ब्राह्मण शूद्र से भी हीन कहा गया है ।

यद्येकास्फुटमेव जातिरपरा कृत्यात्परं भेदिनी ।
यद्वा व्याहृतिरेकतामधिगता यच्चान्यधर्मं ययौ । ।
एकैकाखिलभावभेदनिधनोत्पत्तिस्थितिव्यापिनी ।
किं नासौ प्रतिपत्तिगोचरपथं यायाद्विभक्त्या नृणाम् ।३३।
(भविष्य पुराण 1:44:33)

अर्थात् - यह स्पष्ट रूप से बताया गया है कि जाति) मानव जाति (एक ही है, किन्तु दूसरी) ब्राह्मण, क्षत्रिय, आदि (के निर्माण केवल भिन्न-भिन्न कर्मों द्वारा किये गये हैं अथवा व्यवहार रूप में वह

)मानव-जाति (एक ही है केवल धर्मों में भिन्नता है, इसलिए निखिल भाव एवं भेद मरण, उत्पत्ति तथा स्थिति में व्याप्त रहने वाली यह मानवी जाति इन्हें दिखाई नहीं दे रही है जो मनुष्यों में ब्राह्मण, क्षत्रिय आदि द्वारा विभाजन करने के लिए तैयार रहते हैं। ३३

विलासिनीभुजंगादिजनवन्मदविह्वलाः ।
व्यामुह्यन्ति सदाचाराद्ब्राह्मणत्वात्पतन्ति च । । १५
संस्कृतोऽपि दुराचारो नरकं याति मानवः ।
निःसंस्कारः सदाचारो भवेद्विप्रोत्तमः सदा । । १६
(भविष्य पुराण 1:42:15-16)

अर्थात् – बिलासी और दुष्ट आदि लोगों की भाँति मदान्ध होकर संस्कारी पुरुष मोह में पड़कर ब्राह्मणत्व से पतन हो जाता है और वो नर्क जाते है किन्तु संस्कार हीन पुरुष, सदाचारी एवं उत्तम हो तो वो ब्राह्मण हो जाते हैं ।

माता का वर्ण भले ही अलग हो किंतु उसका पुत्र तपस्या करके ब्राह्मण बन रहा है यह स्वयं में जन्म आधारित व्यवस्था का खंडन है-

श्वपाकीगर्भ सम्भूतो पिता व्यासस्य पार्थिव:|
तपसा ब्राम्हणो जात :संस्कारस्तत्र कारणम्||
(भविष्य पुराण 1 : 42 :27)

अर्थात् – महर्षि व्यास के पिता महर्षि पराशर चाण्डाली के गर्भ से उत्पन्न हुए और संस्कार होने पर तपस्या करके ब्राह्मणत्व को प्राप्त करके ब्राम्हण बने |

नाविकागर्भ सम्भूतो मंदपालो महामुनि:|
तपसा ब्राम्हणो जात :संस्कारस्तत्र कारणम्||
(भविष्य पुराण 1 : 42 :30)

अर्थात् – महर्षि मंदपाल नाविका के गर्भ से उत्पन्न हुए और संस्कार होने पर तपस्या करके ब्राह्मणत्व को प्राप्त करके ब्राम्हण बने |

गणिकागर्भ सम्भूतो वशिष्ठश्च महामुनि:|

तपसा ब्राम्हणो जात :संस्कारस्तत्र कारणम्||

(भविष्य पुराण 1 : 42 :29)

अर्थात् – महर्षि वशिष्ठ वैश्या के गर्भ से उत्पन्न हुए और संस्कार होने पर तपस्या करके ब्राह्मणत्व को प्राप्त करके ब्राम्हण बने |

【भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत स्मृतियों के प्रमाण】

जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः संस्कारैर्द्विज उच्यते।

विद्यया याति विप्रत्वं त्रिभिः श्रोत्रियलक्षणम्॥

(अत्रि संहिता)

ब्राह्मण :सम्भवेनैव देवानामपि दैवतम् ।

प्रमाणं चैव लोकस्य ब्रह्मात्रेव हि कारणम् ॥

(मनुस्मृति)

अर्थात्, जन्म से ही ब्राह्मण देवताओं का भी देवता होता है और लोक में उसका प्रमाण माना जाता है इसमें वेद ही कारण हैं ।

◙ खंडन◙

स्मृतियों में केवल मनुस्मृति ही प्रमाणित है अन्य स्मृति प्रमाणित नहीं है स्मार्त संप्रदाय में सभी स्मृतियों को आधार माना जाता है किंतु अन्य संप्रदाय में ऐसा नहीं है वैदिक मत को मानने वाले केवल मनुस्मृति को ही प्रमाण मानते हैं । वैष्णव तो स्मृतियों तक को प्रमाण नहीं मानते , वह अपने पंचारात्र पर आधारित शास्त्रों को ही मनुष्य स्मृतियों की जगह प्रमाण मानते हैं ।

भाष्यकार मेधातिथि) 9वीं शताब्दी (की तुलना में कुल्लूक भट्ट) 12वीं शताब्दी (के संस्करण में एक सौ सत्तर श्लोक अधिक उपलब्ध हैं । वे तब तक मूल पाठ के साथ घुल - मिल नहीं पाये थे , अत : उनको कुलल्रूक भट्ट के संस्करण में बृहत् कोष्ठक में दर्शाया गया है ।

मेधातिथि के भाष्य के अन्त में एक श्लोक मिलता है , जिससे यह जानकारी मिलती है कि मनुस्मृति और उसका मेधातिथि भाष्य लुप्तप्राय :था । उसको विभिन्न संस्करणों की सहायता से सहारण राजा के पुत्र राजा मदन ने पुन :संकलित कराया । ऐसी स्थिति में श्लोक में क्रमविरोध , स्वल्पाधिक्य हो जाना सामान्य बात है –

मान्या कापि मनुस्मृतिस्तदुचिता व्याख्यापि मेधातिथे :।
सा लुप्तैव विधेर्वशात् क्वचिदपि प्राप्यं न तत्पुस्तकम् ।
क्षोणीन्द्रो मदनः सहारणासुतो देशान्तरादाहृतै : ,
जीर्णोद्धारमचाकरत्तत इतस्तत्पुस्तकै :लोखितै :।
(उपोद्घघात , मेधातिथि भाष्य , गंगानाथ झा , खण्ड . 3 , पृष्ठ 1)

अर्थात् – 'समाज में मान्य कोई मनुस्मृति थी , उस पर मेधातिथि का भाष्य भी था किन्तु वह दुर्भाग्य से लुप्त हो गयी । वह कहीं उपलब्ध नहीं थी । सहारण के पुत्र राजा मदन ने विभिन्न प्रदेशों से उसके संस्करण मंगाकर उसका जीर्णाद्धार कराया और विभिन्न पुस्तकों से मिलाकर यह भाष्य तैयार कराया ।'

मनुस्मृति के स्वरूप में परिवर्तन का यह बहुत महत्वपूर्ण प्रमाण है।

【भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत उपपुराण के प्रमाण】

जन्मना ब्राह्मणो ज्ञेयः
(पराशर उपपुराण)
जन्म से ब्राह्मण, संस्कार से द्विज, विद्या से विप्र और तीनों से श्रोत्रिय होता है।

स्त्रीशूद्रबीजबंधूनां न वेदश्रवणं स्मृतम्।
तेषामेवहितार्थाय पुराणानि कृतानि वै।
(औशनस उपपुराण)
स्त्री और शूद्र हेतु वेदश्रवण का निषेध ऊपर के वाक्य से और नीचे के भी प्रमाणों से मिलता है।
इसीलिए उनके कल्याण के लिए पुराणों का प्रणयन किया गया।

◙ खंडन◙

भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत यह उपपुराण के प्रमाण श्रुतिओं के विरुद्ध है क्योंकि यहां स्त्रियों और शूद्रों को वेदाध्ययन के अधिकार से वंचित किया गया है।

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।
ब्रह्मराजन्याभ्या शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च।
प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं
मे कामः समृध्यतामुप मादो नमतु ॥२ ॥
(यजुर्वेद 26:2)

अर्थात् - हे मनुष्यो ! मैं (ईश्वर) सबका कल्याण करने वाली वेदरूप वाणी का सब जनों के लिए उपदेश कर रहा हूँ, जैसे मैं इस वाणी का ब्राह्मण , क्षत्रियों, शूद्रों , वैश्यों और अपने स्त्रियों के लिए जैसे मैं इसका उपदेश कर रहा हूँ और जिन्हें तुम अपना आत्मीय समझते हो , उन सबके लिए इसका उपदेश कर रहा हूँ और जिसे पराया समझते हो, उसके लिए भी मैं इसका उपदेश कर रहा हूँ, वैसे ही तुम भी आगे आगे सब लोगों के लिए इस वाणी के उपदेश का क्रम चलते रहो।

वेदों के मन्त्रों पर लगभग 26 महिलाओं के नाम का उल्लेख ऋषिका के रूप में मिलता है , ऋग्वेद की ऋषिकाओं की सूची बृहद् देवता के दूसरे अध्याय में इस प्रकार है–

घोषा गोधा विश्ववारा, अपालोपनिषन्निषत्।
ब्रह्मजाया जुहूर्नाम अगस्त्यस्य स्वसादिति:॥ 84॥
इन्द्राणी चेन्द्रमाता च सरमा रोमशोर्वशी।
लोपामुद्रा च नद्यश्च यमी नारी च शश्वती॥ 85॥
श्रीर्लाक्षा सार्पराज्ञी वाक्श्रद्धा मेधा च दक्षिणा।
रात्री सूर्या च सावित्री ब्रह्मवादिन्य ईरिता:॥ 86॥
(बृहद्देवता 2:84-86)

अर्थात्- घोषा, गोधा, विश्ववारा, अपाला, उपनिषद्, निषद्, ब्रह्मजाया) जुहू(, अगस्त्य की भगिनी, अदिति, इन्द्राणी और इन्द्र की माता, सरमा, रोमशा, उर्वशी, लोपामुद्रा और नदियाँ, यमी, शश्वती, श्री, लाक्षा, सार्पराज्ञी, वाक्, श्रद्धा, मेधा, दक्षिणा, रात्री और सूर्या -सावित्री आदि सभी ब्रह्मवादिनी हैं।

महाभारत में गार्गी सहित एक दर्जन से अधिक विदुषियों का वर्णन आता है। उनमें सुलभा का विशेष महत्त्व है। अन्य विदुषियां थीं शिवा, सिद्धा, श्रुतावली, विदुला आदि (शान्तिपर्व 320.82; उद्योगपर्व 109.18; शल्यपर्व 54.6; उद्योगपर्व 133 आदि)

【भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत बृहदारण्यकोपनिषद् के प्रमाण】

ब्रह्म वा इदमग्रआसीदेकमेव सृजत क्षत्रं यान्येतानि स नैव व्यभवत् स विशमसृजति स नैव व्यभवत्स शौद्रंवर्णमसृजत्।

(बृहदारण्यकोपनिषद्)

अर्थात् सबसे पहले ब्राह्मण वर्ण ही था । उसने क्षत्रिय वर्णका सृजन किया । वह ब्राह्मण क्षत्रिय का सृजन करने के बाद भी अपनी वृद्धिमें सक्षम नही हुआ, तब उसने वैश्य वर्ण का सृजन किया । इसके अनन्तर) अर्थात् क्षत्रिय और वैश्यकी रचनाके बाद(भी वह ब्रह्म प्रवृद्ध न हो सका ,तब उसने शूद्र वर्णकी रचना की।

◙ खंडन◙

भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत प्रमाण 3 मंत्रों (11-13) को एक साथ मिलाकर बनाया गया है किंतु उन्होंने यहां पर मनमाने ढंग से भावार्थ लिखा है जोकि उनकी मूर्खता को सिद्ध करता है । इस मंत्र के भावार्थ तथा व्याख्या को पढ़ें -

'ब्रह्म वा इदमासीदेकमेव, तदेकं सन् न व्यभवत्। तत् श्रेयोरूपमत्यसृजत् क्षत्रम्,.....सः नैव व्यभवत्, स विशमसृजत्, ...सः नैव व्यभवत्, सः शौद्रं वर्णमसृजत्।' '

(बृहदारण्यक उपनिषद्-1: 4 :11-13)

भावार्थ-'ब्राह्मण वर्ण ही आरभ में अकेला था। अकेला होने के कारण उससे समाज की चहुंमुखी समृद्धि नहीं हुई। आवश्यकता पड़ने पर ब्राह्मण वर्ण में से तेजस्वी वर्ण क्षत्रियवर्ण का निर्माण किया गया। उससे भी समाज की चहुंमुखी समृद्धि नहीं हुई। आवश्यक जानकर उस ब्राह्मणवर्ण में से वैश्यवर्ण का निर्माण किया। उससे भी समाज की पूर्ण समृद्धि नहीं हुई। तब उस ब्राह्मणवर्ण में से शूद्रवर्ण का निर्माण किया। इन चार वर्णों से समाज में पूर्ण समृद्धि हुई।'

व्याख्या-जगत् के प्रारम्भ में, मनुष्य के उत्पन्न होने पर सभी मनुष्य एक ही जाति के थे जिन्हें इस कण्डिका में ब्राह्मण कहा गया हैं मनुष्योन्नति के लिए चारों वर्णों की समस्त देश को जरूरत हुआ करती है।

(१) प्रत्येक देश में, अध्यापक, उपदेशक और पुरोहितों (ब्राह्मण वर्ण) की जरूरत हुआ करती है।

(२) देश की रक्षा तथा उसे सुप्रबन्ध में रखने के लिए सिपाही और राजा (क्षत्रिय वर्ण) अपेक्षित होते हैं।

(३) खेती, पशु-पालन और व्यापार करने वालों (वैश्य वर्ण) की आवश्यकता होती है।

(४) शारीरिक परिश्रम करने वाले मजदूर (शूद्र वर्ण) भी प्रत्येक देश में होने चाहिए तब ही देशोन्नति हो सकती है और हुआ करती है।

महाभारत भी इस तथ्य को प्रमाणित करता है-

न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राह्ममिदं जगत्।
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम्॥
(महाभारत -शान्तिपर्व 188:10)

अर्थात्-सारा मनुष्य-जगत् एक ब्रह्म की सन्तान है। वर्णों में कोई भेद नहीं है। ब्रह्मा के द्वारा रचा गया यह सारा संसार पहले सम्पूर्णतः ब्राह्मण ही था। मनुष्यों के कर्मों द्वारा यह वर्णों में विभक्त हुआ।

इत्येतैःकर्मभिर्व्यस्ताः द्विजा वर्णान्तरं गताः।
धर्मो यज्ञक्रिया तेषाँ नित्यंच प्रतिषिध्यते ॥

(महाभारत -शान्तिपर्व 188:14)

अर्थात्-कार्य भेद के कारण ब्राह्मण ही पृथक-पृथक वर्णों के हो गये। इसलिए धर्म-कर्म और यज्ञ क्रिया उनके लिए भी विहित है-और कभी निषेध नहीं किया गया है ॥ १४ ॥

इसके अतिरिक्त पुराण भी इसी तथ्य को प्रमाणित करता है-

संसर्ज ब्राह्मणनग्रे सृष्टयादौ स चतुर्मुखः।
सर्वे वर्णाः पृथक् पश्चात् तेषाँ वंशेषु जज्ञिरे॥
(पद्मपुराण उत्कलखंड 38:44)

अर्थात् -ब्रह्म ने सृष्टि के प्रारंभ में जिन मनुष्यों को बनाया वो ब्राह्मण थे फिर वे अलग अलग कर्म से सभी पृथक-पृथक वर्ण के हुए।

【भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत छान्दोग्योपनिषत् और गीता के प्रमाण】

तद्य इह रमणीयचरणाभ्यासो ह यत्ते रमणीयां योनिमापद्येरन् ब्राह्मणयोनिं वा क्षत्रिययोनिं वा वैश्ययोनिं वाथ य इह कपूयचरणाभ्यासो ह यत्ते कपूयां योनिमापद्येरनश्वयोनिं वा शूकर योनिं वा चाण्डालयोनिं वा।
(छान्दोग्योपनिषत्(

अर्थात्, उन में जो अच्छे आचरणवाले होते हैं वे शीघ्र ही उत्तमयोनि को प्राप्त होते हैं । वे ब्राह्मणयोनि, क्षत्रिययोनि अथवा वैश्ययोनि प्राप्त करते हैं तथा अशुभ आचरण वाले होते हैं वे तत्काल अशुभ योनिको प्राप्त होते हैं। वे कुत्ते की योनि, सूकर की योनि अथवा चाण्डालयोनि प्राप्त करते हैं।

कारणं गुणसंगोस्य सदद्योनिजन्मसु ।
(श्रीमद्भगवद्गीता)

गुणोंमें जो आसक्ति है वही इस भोक्ता पुरुष के अच्छी- बुरी योनियों में जन्म लेने का कारण है ।

ये तो सिद्ध ही है सभी वर्ण भगवान् से उत्पन्न हुए अब इन वर्णों का विभाग सुनिए ! इन वर्णोंमें जन्म कैसे होता है इस विषय में भगवान् गीता में कहते हैं –

गुणकर्मविभागशः।

अर्थात्, जन्मांतर में किये गए कर्मों और सञ्चित गुणोंके द्वारा विभाग करके ही भगवान् चारों वर्णोंमें जन्म देते हैं!

◙ खंडन◙

भगवतानंद को कर्म के विषय में विशेष ज्ञान का अभाव है तभी उन्होंने यह तथ्य रखें है जिसका जन्माना वर्ण व्यवस्था से कोई संबंध नहीं है ।

अनेक पूर्व जन्मों से लेकर वर्तमान में किये गए कर्मों के संचय को संचित कर्म कहते हैं यह वह कर्म है जो उन्होंने अपने पिछले जन्म में नहीं चुकाए थे जिसके कारण उन्हें अपने कर्म के अनुसार जन्म मिलता है। संचित कर्म में से, थोड़ा सा अंश मात्र कर्मों का फल जो हमें इस जन्म में भोगना है उसे प्रारब्ध कर्म कहते हैं । हमारे जीवन में जो अच्छा-बुरा घटित होता है, जिन पर हमारा निरंतरण नहीं है वो प्रारब्ध है। ये प्रारब्ध कर्म ही) भाग्य (के रूप में नए होने वाले जन्म की योनि व उसमें मिलने वाले भोग को निर्धारित करते हैं। फिर इस जन्म में किए गए कर्म, जिनको क्रियमाण कहा जाता है, वह भी संचित संस्कारों में जाकर जमा होते रहते हैं। उसी संचित कर्म का अंश प्रारब्ध कर्म) भाग्य (के रूप में हमें मिलता है।

एक व्यक्ति को उसके पिछले जन्म के कर्मों से अच्छे समृद्ध परिवार में जन्म मिलता है, किंतु इससे उसका वर्ण का निर्धारण नहीं हो जाता है , अभी उसको वैदिक संस्कार तथा वर्ण निर्धारण की प्रक्रिया से गुजरना होता है। जैसा कि आपने ऊपर पढ़ा यदि शूद्र परिवार में जन्म लेने वाला व्यक्ति इस जन्म में अपने अच्छे कर्मों से अपने अंदर ब्राह्मणीय गुणों का विकास करके संचित कर्मों का भुगतान करता है तो वह इसी जन्म में ब्राह्मणत्व प्राप्त करता है।गुरूकुल प्रवेश के बाद बच्चे को परखा जाता था। उस के उपरांत ही उस का वर्ण निश्चित करा जाता है।

【भगवतानंद द्वारा प्रस्तुत महाभाष्य के प्रमाण 】

तपः श्रुतं च योनिश्चेत्येतद् ब्राह्मणककारणम् ।

(महाभाष्य)

जो ब्राह्मण से ब्राह्मणी में उत्पन्न और उपनयनपूर्वक वेदाध्ययन ,तप, विद्यादिसे युक्त होता है ,वही मुख्य ब्राह्मण होता है!

तप :श्रुताभ्यां यो हीनो जातिब्राह्मण एव स:

(महाभाष्य)

जो तप और विद्यासे हीन है वह केवल जाति से ब्राह्मण होता है ।

◙ खंडन◙

वैदिक काल में ऐसे अनेक उदाहरण हैं जिसमें माता और पिता दोनों ब्राह्मण नहीं थे किंतु उनकी संतान आगे चल के महान ऋषि बनी इसलिए पहला प्रमाण प्रक्षिप्त सिद्ध होता है । महर्षि पतंजलि भी गुण कर्म आधारित व्यवस्था का समर्थन करते थे इसीलिए उन्होंने लिखा है कि-

सर्व एते शब्दा गुणसमुदायेषु वर्त्तन्ते ब्राह्मण :क्षत्रियो वैश्य :शूद्र:।

(महाभाष्य 5:1:115)

अर्थात् - ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र ये गुणसमुदायविशेष के वाचक हैं, जातिसमुदायविशेष नहीं। पढना-पढाना आदि गुणसमुदाय का नाम ब्राह्मण है। ऐसे ही सभी वर्णों में समझें।

मनुकालीन सात द्वीपों में चारों वर्णों का यज्ञानुष्ठान

शास्त्रों के अनुसार महर्षि मनु ने अपना राज्य अपने बड़े पुत्र प्रियव्रत को सौंपा था। और प्रियव्रत ने उसको अपने सात पुत्रों में सात विभाग करके बांट दिया। मनुकालीन उन सात द्वीपों अर्थात् देशों में मनु द्वारा निर्धारित समाज-व्यवस्था व्यवहार में थी। प्राचीन संस्कृत ग्रन्थों में जो मनुकालीन इतिहास दिया है उसके अनुसार सभी छह देशों में चारों वर्णों को यज्ञानुष्ठान और धर्मपालन का अधिकार था तथा चारों वर्ण यज्ञ करते थे।

प्रमाण सहित उसका वर्णन प्रस्तुत है-

(1) कुशद्वीप में शूद्रों द्वारा यज्ञानुष्ठान-

ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः शूद्राश्चानुक्रमोदिताः॥
तत्र ते तु कुशद्वीपे……..यजन्तः क्षपयन्ति॥
(विष्णु पुराण 2:4:36, 39)

अर्थात्- ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र कुशद्वीप में रहते हुए यजन करते हैं और इस प्रकार अपनी दुर्भावनाओं को नष्ट करते हैं।

---

(2)-शाकद्वीप में शूद्रों द्वारा यज्ञानुष्ठान-

शाकद्वीपे तु तैर्विष्णुः यथोक्तैरिज्यते सयक्॥ 64, 70॥
(विष्णुपुराण 2:4:64,70)

अर्थात्- शाकद्वीप में चारों वर्णों के लोग सर्वव्यापक ईश्वर का यज्ञ के द्वारालीभांति पूजन करते हैं।

---

(3)-प्लक्षद्वीप में शूद्रों द्वारा यज्ञानुष्ठान-

धर्माः पञ्चस्वथैतेषु वर्णाश्रमविभागजाः॥ 15॥

इज्यते तत्र भगवान् तैर्वणैरार्यकादिभिः॥ 19॥

(विष्णुपुराण 2:4:7, 15, 19)

अर्थात्- प्लक्ष द्वीप में वर्ण और आश्रमों के लिए विहित धर्मों का पालन किया जाता है। ब्राह्मण आदि चारों वर्णों द्वारा यज्ञ करके भगवान् की उपासना की जाती है।

---

(4)-क्रौञ्च द्वीप में शूद्रों द्वारा यज्ञानुष्ठान-

ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः शूद्राश्चानुक्रमोदिताः॥ 53॥

यागैः रुद्रस्वरूपश्च इज्यते यज्ञसन्निधौ॥ 56॥

(विष्णुपुराण 2:4:53, 56)

अर्थात्- क्रौञ्च द्वीप में चार वर्ण हैं। वे रुद्रस्वरूप परमात्मा का अनेक यज्ञों के अनुष्ठानपूर्वक, यज्ञ के माध्यम से यजन करते हैं।

---

(5)-जम्बूद्वीप में शूद्रों द्वारा यज्ञानुष्ठान-

ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः मध्ये शूद्राश्च भागशः॥ 9॥

पुरुषैर्यज्ञपुरुषो जबू द्वीपे सदेज्यते॥ 21॥

(विष्णुपुराण 2:3:9, 21)

अर्थात्- जम्बूद्वीप में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र साथ-साथ निवास करते हैं। उन चारों वर्णों के पुरुषों द्वारा परमात्मा का सदा यज्ञ के द्वारा यजन किया जाता है।

---

(6)-शाल्मलिद्वीप में शूद्रों द्वारा यज्ञानुष्ठान-

ब्राह्मणाः क्षत्रियाः वैश्याः शूद्राश्चैव यजन्ति ते॥ 30॥

वायुभूतं मखश्रेष्ठैः यज्विनो यज्ञसंस्थितम्॥ 31॥

(विष्णुपुराण 2:4:30, 31)

अर्थात्- शाल्मलि द्वीप में ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य, शूद्र सभी यज्ञशील हैं। वे चारों वर्ण यज्ञ-रूप वायु संज्ञक परमेश्वर की बड़े-बड़े यज्ञों द्वारा उपासना करते हैं।

भागवतपुराण इससे आगे बढ़कर स्पष्ट कथन करता है कि ‘‘त्रय्या विद्यया भगवन्तं त्रयीमयं सूर्यमात्मानं यजन्ते’ ’ (5:20:4) = ‘प्लक्षद्वीप में चारों वर्ण उस सूर्य संज्ञक परमात्मा का जो स्वयं वेदरूप है, तीनों वेदों के मन्त्रों से उसका यजन करते हैं।’

इससे ये सिद्ध होता है कि वैदिक काल में शूद्र भी अन्य तीनो वर्ण के लोगो के साथ यज्ञ अनुष्ठान करते थे । शूद्रों को मंदिर में जाने और यज्ञ,अनुष्ठान ,पूजा - पाठ करने का पूरा अधिकार था। इसलिए आज जो भी जातिवाद है वो मुग़ल काल की देन है लेकिन अब वक़्त आ गया है की हम अपनी वैदिक परंपरा को फिर से अपनाये और भेदभाव ख़त्म करें

वेद और शूद्र

◙ शूद्रों का वेद अध्ययन एवं उसके प्रचार का अधिकार-

यथेमां वाचं कल्याणीमावदानि जनेभ्यः।ब्रह्मराजन्याभ्या शूद्राय चार्याय च स्वाय चारणाय च।
प्रियो देवानां दक्षिणायै दातुरिह भूयासमयं
मे कामः समृध्यतामुप मादो नमतु ॥२ ॥
(यजुर्वेद » अध्याय:26» मन्त्र:2)

अर्थात् - हे मनुष्यो ! मैं) ईश्वर (सबका कल्याण करने वाली वेदरूप वाणी का सब जनों के लिए उपदेश कर रहा हूँ, जैसे मैं इस वाणी का ब्राह्मण , क्षत्रियों, शूद्रों , वैश्यों और अपने स्त्रियों के लिए जैसे मैं इसका उपदेश कर रहा हूँ और जिन्हें तुम अपना आत्मीय समझते हो , उन सबके लिए इसका उपदेश कर रहा हूँ और जिसे पराया समझते हो, उसके लिए भी मैं इसका उपदेश कर रहा हूँ, वैसे ही तुम भी आगे आगे सब लोगों के लिए इस वाणी के उपदेश का क्रम चलते रहो.

◙ शुद्रो से समानता का व्यव्हार-

रुचं नो धेहि ब्राह्मणेषु रुच राजसु नस्कृधि।
रुचं विश्येषु शूद्रेषु मयि धेहि रुचा रुचम् ॥४८ ॥
(यजुर्वेद » अध्याय:18» मन्त्र:48)

अर्थात् - हे ईश्वर ! आप हमारी रुचि ब्राह्मणों के प्रति उत्पन्न कीजिए, क्षत्रियों के प्रति उत्पन्न कीजिए, वैश्यों के प्रति उत्पन्न कीजिए और शूद्रों के प्रति उत्पन्न कीजिए।

मंत्र का भाव यह है कि हे परमात्मन !आपकी कृपा से हमारा स्वभाव और मन ऐसा हो जाए कि ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्र सभी वर्णों के लोगों के प्रति हमारी रुचि हो। सभी वर्णों के लोग हमें अच्छे लगें। सभी वर्णों के लोगों के प्रति हमारा बर्ताव सदा प्रेम और प्रीति का रहे।

◙ शुद्रो व अन्य वर्णों के पापों के लिए छमा याचना-

यद् ग्रामे यदरण्ये यत्सभायां यदिन्द्रिये। यच्छूद्रे यदर्ये
यदेनश्चकृमा वयं यदेकस्याधि धर्मणि तस्यावयजनमसि ॥१७ ॥
(यजुर्वेद » अध्याय:20» मन्त्र:17)

अर्थात् - हे विद्वन् ! हम लोग जो गाँव में , जो जङ्गल में , जो सभा में ,जो मन में , जो शूद्र में , जो स्वामी वा वैश्य में ब्राहमण या क्षत्रिय में , जो एक के ऊपर धर्म में तथा जो और अपराध करते हैं वा करनेवाले हैं उस सबका आप छुड़ाने के साधन हैं,

---

◙ शुद्रो से प्रेमवत व्यवहार-

प्रियं मा दर्भ कृणु ब्रह्मराजन्याभ्यां शूद्राय चार्याय च।
यस्मै च कामयामहे सर्वस्मै च विपश्यते ॥
(अथर्ववेद » काण्ड:19» सूक्त:32» मन्त्र:8)

अर्थात् - हे शत्रु विदारक परमेश्वर मुझको ब्राहमण , क्षत्रिय , वैश्य और शूद्र के लिए और जिसके लिए हम चाह सकते हैं प्रत्येक विविध प्रकार देखने वाले पुरुष के लिए प्रिय कर दे.

इस प्रकार वेद की शिक्षा में शूद्रों के प्रति भी सदा ही प्रेम-प्रीति का व्यवहार करने और उन्हें अपना ही अंग समझने की बात कही गयी हैं.

◙ शूद्र यज्ञ कर सकता है-

अग्नेस्तनूरसि वाचो विसर्जनं देववीतये त्वा गृह्णामि बृहद् ग्रावासि वानस्पत्यः सऽइदं देवेभ्यो हविः शमीष्व सुशमि शमीष्व। हविष्कृदेहि हविष्कृदेहि ॥१५॥
(यजुर्वेद » अध्याय:1» मन्त्र:15)

अर्थात् - मैं सब जनों के सहित और काष्ठ के मूसल आदि पदार्थ विद्वान् वा दिव्यगुणों के लिये उस यज्ञ को श्रेष्ठ विद्वान् वा विविध भोगों की प्राप्ति के लिये ग्रहण करता हूं। हे विद्वान् मनुष्य !तुम

विद्वानों के सुख के लिये अच्छे प्रकार दुःख शान्त करने वाले यज्ञ करने योग्य पदार्थ को अत्यन्त शुद्ध करो। जो मनुष्य वेद आदि शास्त्रों को प्रीतिपूर्वक पढ़ते वा पढ़ाते हैं, उन्हीं को यह होम में चढ़ाने योग्य पदार्थों का विधान करने वाली जो कि यज्ञ को करने के लिये ब्राह्मण, क्षत्रिय, वैश्य और शूद्रों की शुद्ध सुशिक्षित और प्रसिद्ध वाणी वेद के पढ़ने से है.

◙ शुद्रो को नमन एवं सत्कार करना-

नमस्तक्षभ्यो रथकारेभ्यश्च वो नमो नमः कुलालेभ्यः कर्मारेभ्यश्च वो नमो नमो निषादेभ्यः पुञ्जिष्ठेभ्यश्च वो नमो नमः श्वनिभ्यो मृगयुभ्यश्च वो नमः ॥२७ ॥

(यजुर्वेद » अध्याय:16» मन्त्र:27)

अर्थात् - हे मनुष्यो ! जैसे राजा परिश्रम करने वालों को धन देके सत्कार करते है उसी तरह मट्टी के पात्र बनानेवालों को को नमन है अन्नादि पदार्थ और खड्ग, बन्दूक और तोप आदि शस्त्र बनानेवाले तुम लोगों का सत्कार व नमन करते हैं वन और पर्वतादि में रह कर अन्नादि देते , कुत्तों को शिक्षा करने) कुत्तों को पालतू बनाना (तुम को अन्नादि देते और अपने आत्मा से वन के हरिण आदि पशुओं को चाहने वाले तुम लोगों का सत्कार करते हैं, वैसे तुम लोग भी करो.

◙ ईश्वर की नज़र में सभी एक सामान है कोई बड़ा छोटा नहीं-

अज्येष्ठासो अकनिष्ठास एते सं भ्रातरो वावृधुः सौभाय ।

-(ऋग्वेद 5:60:5)

अर्थात्- ईश्वर कहता है कि हे संसार के लोगों ! न तो तुममें कोई बड़ा है और न छोटा।तुम सब भाई-भाई हो। सौभाग्य की प्राप्ति के लिए आगे बढ़ो।

ईश्वर का आदेश मानिये और भेदभाव को त्याग दीजिए-

मनुर्भव) ऋग्वेद 10:53:6)

अर्थात् -: ईश्वर कहता है, "मनुष्य बनों"

अंगो से वर्णों की उत्पत्ति का समाधान

【क्या शूद्रों की तुलना चरणों से करना अपमानजनक नहीं】

वर्णव्यवस्था में शारीरिक अंगों से जो आलंकारिक उत्पत्ति बतलायी गयी है, वह व्यक्तियों की नहीं अपितु वर्णों की है। वर्ण एक बार निर्मित हुआ है, अतः उसकी उत्पत्ति कहना तर्कसंगत है। व्यक्ति तो रोज उत्पन्न होते हैं और करोड़ों की संया में हैं, वे कैसे पैदा होंगे? अतः वह शूद्रवर्ण की प्रतीकात्मक उत्पत्ति है, शूद्र व्यक्ति की नहीं।

मनु की वर्णव्यवस्था में शूद्र तो वह व्यक्ति होता है जो विधिवत् शिक्षित नहीं होता। जो शूद्र रह गया वह पुनः योग्यता अर्जित करके ब्राह्मण आदि बन सकता है। अतः यह उत्पत्ति किसी व्यक्ति या जातिविशेष से संबद्ध नहीं है। दलित लोग भ्रान्तिवश इस नाम को स्वयं पर थोप कर व्यर्थ दुःखी होते हैं। मनु ने उनको कहीं शूद्र नहीं कहा।भारतीय परपरा में चरण कभी घृणित नहीं रहा। एक ओर हम स्वयं यह तर्क देते हैं कि एक पुरुष से उत्पन्न चार वर्णों में भेदभाव नहीं हो सकता, तो दूसरी ओर अपनी आपत्ति को सही सिद्ध करने के लिए हम स्वयं मुख, पैर आदि में भेदभाव कर रहे हैं। यदि इस दृष्टि से आरोप लगाते हैं, तो वैश्यों की उत्पत्ति जंघाओं से कही है, क्या जंघाएं उत्तम अंग हैं? फिर तो इस पर वे लोग भी आपत्ति करेंगे। वस्तुतः ऐसा दृष्टिकोण वैदिक वर्णव्यवस्था में कभी नहीं रहा। यह आधुनिक वातावरण की सोच का प्रभाव है।

【 अलंकार किसे कहते है 】

'अलंकार' शब्द 'अलं+कृ' के योग से बनता है। इसकी व्युत्पत्ति इस प्रकार दी जाती है -अलंकारः,
अर्थात् जो आभूषित करता हो वह 'अलंकार' है।
जो किसी वस्तु को अलंकृत करे वह अलंकार कहलाता है।

संकीर्ण अर्थात् में -काव्यशरीर, अर्थात् भाषा को शब्दार्थ से सुसज्जित तथा सुन्दर बनाने वाले चमत्कारपूर्ण मनोरंजक ढंग को अलंकार कहते है।

【 अलंकार होने का प्रमाण】

यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्यासीत्किं बाहू किमूरू पादा उच्येते ॥१०॥
ब्राह्मणोऽस्य मुखामासीद् बाहूराजन्यः कृतः।
ऊरू तदस्य यद्वैश्यः पद्भयाशूद्रोऽजायत॥११॥

भाषार्थ-जिस परमात्मा को कई प्रकार से कल्पना करते हुए पुरुष वर्णन करते हैं, उस पुरुष का मुख क्या है? उसकी भुजा कौन हैं, उसके ऊरू तथा पाँव कौन कहे जाते हैं? ॥ १० ॥

इस मन्त्र में जो परमात्मा को कई प्रकार की कल्पना करके वर्णन करने का ज़िक्र है, वह कल्पना क्या वस्तु है? इसको दूसरे शब्दों में अलंकार भी कहते हैं।

सौन्दर्यमलङ्कारः ॥ ६॥- काव्यालंकारसूत्रवृत्ति

भाषार्थ-किसी बात को सौन्दर्य से वर्णन करने का नाम अलंकार है। अलंकार बहुत प्रकार के होते हैं, उनमें से एक अलंकार का नाम है उपमालंकार ।

◙ उसका लक्षण यह है-

उपमानोपमेययोर्गुणलेशतः साम्यमुपमा ॥ १॥

उपमान से उपमेय के गुणों की कुछ समानता का नाम उपमा है।

◙ वह उपमा दो प्रकार की है-

□सा पूर्णा लुप्ता च ॥४॥

वह पूर्णा तथा लुप्ता दो प्रकार की है।

◙ पूर्णा का लक्षण-

गुणद्योतकोपमानोपमेयशब्दानां सामग्ये पूर्णा ॥५॥

जिसमें उपमान, उपमेय, उपमावाचक शब्द तथा गुणद्योतक शब्द-ये सारे विद्यमान हों, वह पूर्ण-उपमा है

जैसे-

कमलमिव मुखं मनोज्ञमिति' मुख कमल की भाँति सुन्दर है।

इस वाक्य में-

▪कमल-उपमान-जिससे उपमा दी जावे।

▪मुख–उपमेय-जिसको उपमा दी जावे।

▪मनोज्ञ-साधारणधर्म, समान गुण जो दोनों में मिलता हो।

▪इव-उपमा-वचक शब्द, जिनसे समानता बताई जावे।

यहाँ उपमा के चारों अङ्ग विद्यमान हैं, अतः यहाँ पूर्ण उपमा है।

लोपे लुप्ता॥६॥- काव्यालङ्कारसूत्रवृत्ति ९ । १-६

जिसमें किसी अङ्ग का लोप हो जावे वह लुप्त-उपमा है,

जैसे-

▪ 'शशीव राजा' 'चाँद-जैसा राजा' इसमें साधारणधर्म, जो गुण दोनों में मिलता है, जिसके कारण राजा को चाँद-जैसा कह गया है, वह लुप्त है, अतः इसका नाम 'धर्मलुप्तोपमा' है।

▪ 'दूर्वा श्यामेयम्'-'यह स्त्री काली दूब है' यहाँ पर उपमावाचक शब्द का लोप है, जो समानता का वर्णन करता है, अतः इसका नाम 'वाचकलुप्तोपमा' है।

▪ 'शशिमुखी' 'चन्द्रमुखी'-यहाँ पर साधारणधर्म और उपमावाचक शब्द दोनों का लोप है, इसको 'वाचकधर्मलुप्तोपमा' कहते हैं।

◙ हम इसके कुछ उदाहरण देते हैं-

सर्वोपनिषदो गावो दोग्धा गोपालन्दनः।
पार्थों वत्सः सुधीभॊक्ता दुग्धं गीतामृतं महत्।।
भाषार्थ-सब उपनिषद् गौवें हैं, दोहनेवाले कृष्ण हैं, पीनेवाला बुद्धिमान् अर्जुन बछड़ा तथा महान् अमृत गीता दूध है।

यहाँ पर उपनिषदों को गौवों की, कृष्णा को दोहनेवाले की, अर्जुन को बछड़े की तथा गीता को दूध की उपमा दी गई है। यहाँ उपमावाची शब्दों तथा साधारणधर्म का लोप है, अतः यहाँ पर 'वाचकधर्मलुप्तोपमा' है।

यहाँ पर गीता को दूध की उपमा ही दी गई है, वास्तव में गीता दूध नहीं है। यदि कोई आदमी इस श्लोक को ठीक रूप से न समझकर गीता को कटोरे में डालकर किसी को कहे कि लीजिए, दुग्धपान कीजिए तो सब लोग उसे मूर्ख ही कहेंगे, बुद्धिमान् नहीं।

आत्मानदी संयमपुण्यतीर्था सत्योदका शीलतटा दयोर्मिः।
तत्राभिषेकं कुरु पाण्डुपुत्र न वारिणा शुद्ध्यति चान्तरात्मा ॥
भाषार्थ-आत्मा नदी है, संयमरूपी पवित्र तीर्थवाली, सत्य जलवाली, शील तट तथा दया लहरोंवाली है। हे युधिष्ठिर !उसमें स्नान कर, जल से आत्मा शुद्ध नहीं होता।

इस श्लोक में आत्मा को नदी की उपमा देकर तरंगों को भी उपमा दी गई है, किन्तु आत्मा वास्तव में नदी नहीं है।

प्रणव धनुः शरो ह्यात्मा ब्रह्म तल्लक्ष्यमुच्यते।
अप्रमत्तेन वेद्धव्यं शरवत्तन्मयो भवेत् ॥
भाषार्थ-प्रणव धनुष है, यह आत्मा तीर है, ब्रह्म उसका लक्ष्य है, सावधानी से लक्ष्य को वेधना चाहिए, तीर की भाँति तन्मय हो जावे॥

यहाँ आत्मा को तीर की उपमा दी गई है, परन्तु वास्तव में आत्मा तीर नहीं है।

आत्मानं रथिनं विद्धि शरीरं रथमेव तु ।

बुद्धिं तु सारथिं विद्धि मनः प्रग्रहमेव च।
इन्द्रियाणि हयानाहुर्विषयान् तेषु गोचरान्।
आत्मबुद्धिमनोयुक्तः कर्तेति उच्यते बुधैः ।।

भाषार्थ-आत्मा को सवार जान, शरीर को रथ समझ, बुद्धि को सारथि जान, मन को लगाम समझ। इन्द्रियों को घोड़े और विषयों को उनकी खुराक कहते हैं। बुद्धि और मन से युक्त आत्मा को बुद्धिमान् लोग कर्ता कहते हैं।

यहाँ आत्मा को रथी की उपमा देकर तत्सम्बन्धी वस्तुओं की भी उपमा दी है, किन्तु वास्तव में आत्मा रथी नहीं है।

इन सब स्थलों में 'वाचकधर्मलुप्तोपमा' अलंकार हैं, जिनमें उपमावाची शब्द तथा साधारण धर्म का लोप है। इसी प्रकार के अलंकार वेदों में भी हैं, जैसे-

अजो वा इदमग्रे व्यक्रमत तस्योर इयमभवद् द्यौः पृष्ठम्।
अन्तरिक्षं मध्यं दिशः पाश्र्वे समुद्रौ कुक्षी ॥२०॥

भाषार्थ-यह बकरा आगे आया, इसकी छाती यह पृथिवी, द्यौः पीठ, आकाश पेट, दिशाएँ पाश्र्व=पसवाड़े, समुद्र बगलें, ज्ञान तथा सत्य दोनों आँखें और सम्पूर्ण सत्य और श्रद्धा प्राण तथा ब्राह्मण सिर है, वह यह अपरिमित यज्ञ है, जिसको पञ्चौदन अज कहते हैं।

इस मन्त्र में परमात्मा को अज अर्थात् बकरे की उपमा देकर उसके अङ्गों की भी कल्पना करके परमात्मा का वर्णन किया गया है। परमात्मा वास्तव में बकरा नहीं है।

बस, इसी प्रकार 'यत्पुरुषं व्यदधुः' इस मन्त्र में परमात्मा को पुरुष की उपमा देकर पूछा है कि उसके मुख, बाहू, ऊरू तथा पाँव कौन हैं। इसका ही उत्तर अगले मन्त्र में 'ब्राह्मणोऽस्य' दिया गया है कि 'ब्राह्मण उसका मुख हैं, भुजा क्षत्रिय, ऊरू वैश्य हैं और पाँव शूद्र' ।।

【वेद में चारों वर्णों की अलंकारिक उत्पत्ति का वर्णन 】

वेदों तथा मनुस्मृति में उस निराकार पुरुष (ब्रह्म) के अंगो की कल्पना करके उससे वर्णो की अलंकारिक तुलना की गयी है वहां कही भी वर्णस्थ व्यक्तियों की उत्पत्ति का वर्णन नहीं। वहां यह बतलाया गया है कि किस अंग की समानता के आधार पर किस वर्ण की कल्पना की गई अर्थात् किस वर्ण का कैसे नामकरण किया गया। ऋग्वेद में एक प्रश्न पर इसका उल्लेख हुवा है।

ध्यान दे - ब्रह्मा त्रिदेवों में से एक देव को कहा जाता है और ब्रह्म निर्गुण ईश्वर को कहा जाता है।

प्रश्न -यत्पुरुषं व्यदधुः कतिधा व्यकल्पयन्।
मुखं किमस्य, कौ बाहू, का ऊरू पादौ उच्येते ॥
-(ऋग्वेद 10.90.11)

अर्थात् -जिसको 'पुरुष' कहते हैं, उसकी अथवा समाजरूपी पुरुष की किस प्रतीक के रूप में कल्पना की गयी? वह कल्पना कितने प्रकार से की गयी? इस समाज या पुरुष का मुख क्या है? भुजाएं क्या हैं? जंघाएं अर्थात् मध्यमार्ग और पैर क्या कहे जाते हैं?

उत्तर -ब्राह्मणो-अस्य मुाम् आसीद् बाहू राजन्यःकृतः।
ऊरू तदस्य यद् वैश्यः पद्यां शूद्रो अजायत ॥
-(ऋग्वेद 10:90:12)

अर्थात् - इस पुरुष का, अथवा समाजरूपी पुरुष का ब्राह्मण नामक वर्ण के मुखमण्डल के गुणों के आधार पर प्रथम वर्ण का 'ब्राह्मण वर्ण' नाम रखा गया , भुजा 'क्षत्रिय वर्ण' को बनाया गया अर्थात् भुजाओं के गुणों के अनुसार 'राजन्य=क्षत्रिय वर्ण' नाम रखा गया जो 'वैश्य वर्ण' है, वह इसका मध्यभाग या जंघा रूप कहा गया अर्थात् पेट आदि मध्यभाग के गुणों के अनुसार 'वैश्य वर्ण' नाम रखा गया 'शूद्रवर्ण' पैरों की तुलना से निर्मित हुआ अर्थात् पैरों के गुणों के अनुसार 'शूद्रवर्ण' का नाम रखा गया।

उत्पत्ति सबन्धी मन्त्रों और श्लोकों की व्याया में अनेक व्यायाकार भ्रमित होकर ब्राह्मण, शूद्र आदि व्यक्तियों की उत्पत्ति वर्णित करते हैं, जो वर्णव्यवस्था के मूल सिद्धान्त के ही विरुद्ध है।

वेदों के अलावा अन्य वैदिक ग्रंथो में अलग अलग वर्णो के अलंकारिक उत्पत्ति करके उसकी तुलना की गयी है।

【 वर्ण के साथ अन्य पदार्थों की भी आलंकारिक उत्पत्ति का वर्णन】

' 'एकविंश स्तोम, अनुष्टुप् छन्द,
वैराज साम, शूद्र, पशुओं में अश्व।
तस्मात् पादौ उपजीवतः।
पत्तो हि असृज्येताम्।' '
(तैत्तिरीय संहिता 7: 1:1 :4)

अर्थात् -शूद्र , अश्व के साथ ऋग्वेद और सामवेद आदि धर्मग्रन्थों के मन्त्रों की उत्पत्ति भी पैरों से है, क्योंकि अश्व तेज धावक है, अतः तेज चलने की विशेषता के कारण उसकी उत्पत्ति पैर से है। सेवा-टहल का कार्य पैरों पर आधारित होने के कारण शूद्र की तुलना भी चलने वाले अंग 'पैर' से है।

इसमें कहीं भी हीनता या घृणा की भावना नहीं है। ध्यान दीजिये, शूद्र यहां वेदमन्त्रों के समकक्ष है। क्या यह हीनताबोधक सकती है?अश्व क्या हीन पशु है?वैदिक ग्रंथो में अलंकारिक उत्पत्ति के द्वारा किसी बात को समझाना बहुत सामान्य बात है.

【 दिशाओं और भूमि की भी अलंकारिक उत्पत्ति 】

' 'पद्यां भूमिः दिशः श्रोत्रात्' '

- (ऋग्वेद 10:90:14)

अर्थात्-पैरों से भूमि और कानों से दिशाएं उत्पन्न हुई।'

यहां गुणों की समानता से आलंकारिक वर्णन है। क्या, इसमें कहीं हीनता दिखायी पड़ती है?

【 पूषा की शूद्र से तुलना तथा अलंकारिक उत्पत्ति 】

स नैव व्यभवत् स शौद्रं वर्णमसृजत पूषणमियं वै पूषेय हीद सर्वं पुष्यति यदिदं किंच॥

(बृहदारण्यक उपनिषद् 1:4:13)

' 'सः शौद्रं वर्णमसृजत्, पूषणमियं वै पूषा इयं हीदं

सर्वं पुष्यति यदिदं किञ्च।' '

-(शतपथ ब्राह्मण 14: 4: 2 :25)

अर्थात्-उस ब्रह्म-पुरुष ने शूद्रसबन्धी वर्ण को उत्पन्न किया। देवों में पूषा देव को शूद्र के रूप में उत्पन्न किया, क्योंकि वह सबको पालन-पोषण करके पुष्ट करता है।

क्या यहां कहीं हीनभावना दिखाई पड़ती है? शूद्र यहां एक वैदिक देव के समकक्ष है। क्योंकि यह उत्पत्ति गुणाधारित तुलना से है, अतः उस देव को 'शूद्रवर्ण' बताया है। गुणों में समानता यह है कि पूषा देव) पृथ्वी का पोषक (रूपसब पदार्थों को पुष्ट करता है और शूद्र भी अपने श्रम-सेवा से सबको पुष्ट करता है, अतः गुण-कर्म-साय से दोनों शूद्र वर्णस्थ हैं।

【 वेदों से तीन वर्णों की अलंकारिक उत्पत्ति 】

सर्वं हेदं ब्रह्मणा हैव सृष्टम्, ऋग्यो जातं वैश्यवर्णमाहुः।
यजुर्वेदं क्षत्रियस्याहुः योनिम्, सामवेदोब्राह्मणानां प्रसूतिः॥
(तैत्तिरीय ब्राह्मण 3:12: 9:2)

अर्थात्-सब मनुष्य ब्रह्म की ही सन्तान हैं। ऋग्वेद से वैश्यवर्ण की उत्पत्ति हुई। यजुर्वेद से क्षत्रिय वर्ण की उत्पत्ति हुई। सामवेद से ब्राह्मणों की उत्पत्ति हुई है।

◙ एक अन्य उत्पत्ति का आलंकारिक वर्णन शतपथ ब्राह्मण में मिलता है। वहां मंत्र 'भूः' से ब्राह्मणवर्ण की, 'भुवः' से क्षत्रियवर्ण की और 'स्वः' से वैश्यवर्ण की उत्पत्ति कही है।) शतपथ ब्राह्मण 2 :1 :4: 11)

इन प्रमाणों को दर्शाने का अभिप्राय यही है कि केवल एक उत्पत्ति प्रकार को लेकर कोई आग्रह नहीं बनाना चाहिए। ये केवल आलंकारिक वर्णन हैं। उसी संदर्भ में उनको देखना चाहिए।

【 सभी मनुष्य ईश्वर की संतान है 】

सबसे पहले स्वायंभुव मनु , उसके बाद में क्रमश :स्वारोचिष, औत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष, वैवस्वत, सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मासावर्णि, धर्मसावर्णि, रूद्रसावर्णि, देवसावर्णि और इन्द्रसावर्णि। वर्तमान में जो मनुस्मृति अस्तित्व में है उसे 14वें मनु इन्द्रसावर्णि के मार्गदर्शन में सूत्रबद्ध किया गया था। लेकिन कालांतकर में इसमें परिवर्तन मिलावट होते रहे। लेकिन अब सवाल यहाँ ये उठता है की जब

मनु ने कर्मो के अनुसार वर्णों का विभाजन किया उससे पहले या उस वक़्त जो मनुष्य थे वो किस वर्ण के थे इसका जवाब हमें प्राचीन वैदिक ग्रंथों में मिलता है

◙ बृहदारण्यक उपनिषद् में यह स्पष्ट किया है कि सभी वर्ण ब्राह्मणवर्ण से ही निष्पन्न हैं-

' 'ब्रह्म वा इदमासीदेकमेव, तदेकं सन् न व्यभवत्। तत् श्रेयोरूपमत्यसृजत् क्षत्रम्,.....सः नैव व्यभवत्, स विशमसृजत्, ...सः नैव व्यभवत्, सः शौद्रं वर्णमसृजत्।' '

(बृहदारण्यक उपनिषद्-1: 4 :11-13)

अर्थात्-'ब्राह्मण वर्ण ही आरभ में अकेला था। अकेला होने के कारण उससे समाज की चहुंमुखी समृद्धि नहीं हुई। आवश्यकता पड़ने पर ब्राह्मण वर्ण में से तेजस्वी वर्ण क्षत्रियवर्ण का निर्माण किया गया। उससे भी समाज की चहुंमुखी समृद्धि नहीं हुई। आवश्यक जानकर उस ब्राह्मणवर्ण में से वैश्यवर्ण का निर्माण किया। उससे भी समाज की पूर्ण समृद्धि नहीं हुई। तब उस ब्राह्मणवर्ण में से शूद्रवर्ण का निर्माण किया। इन चार वर्णों से समाज में पूर्ण समृद्धि हुई।'

◙ महाभारत में भी इसकी पुष्टि करते हुए कहा है-

न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राह्ममिदं जगत्।
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम्॥
(महाभारत -शान्तिपर्व 188:1)

अर्थात्-सारा मनुष्य-जगत् एक ब्रह्म की सन्तान है। वर्णों में कोई भेद नहीं है। ब्रह्मा के द्वारा रचा गया यह सारा संसार पहले सम्पूर्णतः ब्राह्मण ही था। मनुष्यों के कर्मों द्वारा यह वर्णों में विभक्त हुआ।

यह है असली वैदिक वर्णव्यवस्था !इसमें न व्यक्ति में भेदभाव है, न वर्णों में। मौलिक मनुस्मृति में यही भावना निहित थी। परवर्ती लोगों ने स्वार्थवश प्रक्षेप करके उस भावना को कहीं-कहीं क्षत-विक्षत कर दिया। उस क्षत-विक्षत व्यवस्था को मनुकालीन व्यवस्था नहीं कहना चाहिए।

पहले केवल एक वर्ण था

ईश्वर ने मनुष्य को बनाया बाद में महर्षि मनु ने सभी मनुष्यों को कर्मो के आधार पर 4 वर्णों में विभाजित किया . हम बताना चाहते हैं कि वर्तमान में जो मनुस्मृति पाई जाती है वह किस काल के मनु ने लिखी है और उनका नाम क्या था। तो सबसे पहले क्रमवार जान लीजिये की कौन कौन से मनु हुए हैं ...सबसे पहले स्वायंभुव मनु , उसके बाद में क्रमश :स्वारोचिष, औत्तम, तामस, रैवत, चाक्षुष, वैवस्वत, सावर्णि, दक्षसावर्णि, ब्रह्मासावर्णि, धर्मसावर्णि, रूद्रसावर्णि, देवसावर्णि और इन्द्रसावर्णि। वर्तमान में जो मनु स्मृति अस्तित्व में है उसे 14वें मनु इन्द्रसावर्णि के मार्गदर्शन में सूत्रबद्ध किया गया था। लेकिन कालांतकर में इसमें परिवर्तन मिलावट होते रहे।

लेकिन अब सवाल यहाँ ये उठता है की जब मनु ने कर्मो के अनुसार वर्णों का विभाजन किया उससे पहले या उस वक़्त जो मनुष्य थे वो किस वर्ण के थे इसका जवाब हमें प्राचीन वैदिक ग्रंथों में मिलता है।

◙ बृहदारण्यक उपनिषद् में यह स्पष्ट किया है कि सभी वर्ण ब्राह्मणवर्ण से ही निष्पन्न हैं-

ध्यान दे -यही स्लोक शतपथ ब्राह्मण- 14:4:2: 23-25 में भी आया है

‘ ‘ब्रह्म वा इदमासीदेकमेव, तदेकं सन् न व्यभवत्। तत् श्रेयोरूपमत्यसृजत् क्षत्रम्,.....सः नैव व्यभवत्, स विशमसृजत्, ...सः नैव व्यभवत्, सः शौद्रं वर्णमसृजत्।’ ’

(बृहदारण्यक उपनिषद्-1: 4 :11-13)

अर्थात्-‘ब्राह्मण वर्ण ही आरभ में अकेला था। अकेला होने के कारण उससे समाज की चहुंमुखी समृद्धि नहीं हुई। आवश्यकता पड़ने पर ब्राह्मण वर्ण में से तेजस्वी वर्ण क्षत्रियवर्ण का निर्माण किया गया। उससे भी समाज की चहुंमुखी समृद्धि नहीं हुई। आवश्यक जानकर उस ब्राह्मणवर्ण में से

वैश्यवर्ण का निर्माण किया। उससे भी समाज की पूर्ण समृद्धि नहीं हुई। तब उस ब्राह्मणवर्ण में से शूद्रवर्ण का निर्माण किया। इन चार वर्णों से समाज में पूर्ण समृद्धि हुई।'

व्याख्या-जगत् के प्रारम्भ में, मनुष्य के उत्पन्न होने पर सभी मनुष्य एक ही जाति के थे जिन्हें इस कण्डिका में ब्राह्मण कहा गया हैं मनुष्योन्नति के लिए चारों वर्णों की समस्त देश को जरूरत हुआ करती है।

(१ (प्रत्येक देश में, अध्यापक, उपदेशक और पुरोहितों) ब्राह्मण वर्ण (की जरूरत हुआ करती है।

(२ (देश की रक्षा तथा उसे सुप्रबन्ध में रखने के लिए सिपाही और राजा) क्षत्रिय वर्ण (अपेक्षित होते हैं।

(३ (खेती, पशु-पालन और व्यापार करने वालों) वैश्य वर्ण (की आवश्यकता होती है।

(४ (शारीरिक परिश्रम करने वाले मजदूर) शूद्र वर्ण (भी प्रत्येक देश में होने चाहिए तब ही देशोन्नति हो सकती है और हुआ करती है।

◙ रामायण में भी कहा है-

एकवर्णाः समभाषा एकरूपाश्च सर्वशः।
तासां नास्ति विशेषो हि दर्शने लक्षणेऽपि वा॥
(वाल्मीकि-रामायण 7.30.19.20)

अर्थात्- आदि समय में सभी लोग एक ही तरह के वर्ण के थे, एक समान भाषा बोलने वाले थे, सभी व्यवहारों में एक सदृश थे। उनके वेश और लक्षणों में किसी प्रकार की भिन्नताएं नहीं थीं।

◙ महाभारत में भी इसकी पुष्टि करते हुए कहा है-

न विशेषोऽस्ति वर्णानां सर्वं ब्राह्ममिदं जगत्।
ब्रह्मणा पूर्वसृष्टं हि कर्मभिर्वर्णतां गतम्॥
(महाभारत -शान्तिपर्व 188:10)

अर्थात् - सारा मनुष्य-जगत् एक ब्रह्म की सन्तान है।वर्णों में कोई भेद नहीं है। ब्रह्मा के द्वारा रचा गया यह सारा संसार पहले सम्पूर्णतः ब्राह्मण ही था। मनुष्यों के कर्मों द्वारा यह वर्णों में विभक्त हुआ।

इत्येतैःकर्मभिर्व्यस्ताः द्विजा वर्णान्तरं गताः।
धर्मो यज्ञक्रिया तेषाँ नित्यंच प्रतिषिध्यते ॥
(महाभारत -शान्तिपर्व 188:14)

अर्थात्-कार्य भेद के कारण ब्राह्मण ही पृथक-पृथक वर्णों के हो गये। इसलिए धर्म-कर्म और यज्ञ क्रिया उनके लिए भी विहित है-और कभी निषेध नहीं किया गया है ॥ १४ ॥

महाभारत में इस तथ्य को एक अन्य स्थान पर कहा है-

एक वर्णामिदं पूर्व विश्वमासीद युधिष्ठिर।
कर्मक्रिया विभेदेन चातुर्वण्यं प्रतिष्ठितम्।
–महाभारत

अर्थात्- इस संसार में पहले एक ही वर्ण था। पीछे गुण और कर्म के भेद के कारण चार वर्ण बने।

◙ पुराण में भी लिखा है-

एक एव पुरा वेद :प्रणव :सर्ववाङ्मय :।
देवो नारायणो नान्य एकोऽग्निर्वर्ण एव च ॥ ४८ ॥
(श्रीमद्भागवत पुराण 9: 14: 48)

अर्थात्- पहले सर्व वांग्मय प्रणव (ओंकार) ही एक मात्र वेद था। एकमात्र देवता सर्वव्यापी नारायण थे और कोई नहीं। एक मात्र लौकिक अग्नि ही अग्नि थी और एकमात्र हंस ही एक वर्ण था।

संसर्ज ब्राह्मणनग्रे सृष्टयादौ स चतुर्मुखः।
सर्वे वर्णाः पृथक् पश्चात् तेषाँ वंशेषु जज्ञिरे॥
(पद्मपुराण उत्कलखंड 38:44)

अर्थात् " -ब्रह्मा ने सृष्टि के प्रारंभ में जिन मनुष्यों को बनाया वो ब्राह्मण थे फिर वे अलग अलग कर्म से सभी पृथक-पृथक वर्ण के हुए।

यह है असली वैदिक वर्णव्यवस्था !इसमें न व्यक्ति में भेदभाव है, न वर्णों में। ब्रह्मा द्वारा निर्धारित यही वर्णव्यवस्था आरभ में प्रचलित थी। ब्रह्मा के पुत्र मनु ने भी इसी को अपने शासन में प्रचलित किया था। मौलिक मनुस्मृति में यही भावना निहित थी। अब प्राप्त मौलिक श्लोकों में भी यही समानता की भावना है। परवर्ती लोगों ने स्वार्थवश प्रक्षेप करके उस भावना को कहीं-कहीं क्षत-विक्षत कर दिया। उस क्षत-विक्षत व्यवस्था को मनुकालीन व्यवस्था नहीं कहना चाहिए। मनु की व्यवस्था तो उपर्युक्त ही है। वही शूद्रों के वर्तमान विवादों को निपटाने की एकमात्र औषध है। उसका संदेश है- सभी एक ईश्वर की सन्तान हैं, सभी एक वर्ण का विकास हैं, सभी महत्त्वपूर्ण हैं, एक पिता की सन्तानों में कोई भेदभाव नहीं है।

जय सनातन धर्म

धर्मो रक्षति रक्षितः